अजेय सेनानी

चन्द्र शेखर आजाद

कर्तव्य कह रहा चीख-चीख कर यह हमसे—
हर एक साँस को एक सबक यह याद रहे—
अपनी हस्ती क्या; रहें-रहें या नही रहें;
यह देश रहे आबाद, देश आजाद रहे।

अजेय सेनानी

चन्द्र शेखर आजाद

श्रीकृष्ण 'सरल'

प्रकाशक

जन-कल्याण-प्रकाशन

गोपाल भवन, माधवनगर

उज्जैन, मध्यप्रदेश

प्रकाशक
जन-कल्याण-प्रकाशन
गोपाल भवन, माधवनगर
उज्जैन, मध्यप्रदेश

वितरक
विश्व-भारतीय प्रकाशन
धनवटे चैम्बर्स, सीतावल्दी
नागपुर, महाराष्ट्र

आवरण सज्जा
मोहन-झाला
आर्य-समाज रोड, उज्जैन, म० प्र०

द्वितीय आवृत्ति, जनवरी १९६७
दस हजार प्रतियाँ

मूल्य
केवल दो रुपए

कैमरा चित्र
ए० एल० पारीक, झाबुआ म० प्र०

मुद्रक
प्रियंवदा प्रेस
नौबस्ता, आगरा–२

ब्लॉक प्रिंटर्स
इन्दौर पेपर बाक्स फैक्ट्री
४, नयापुरा, इन्दौर, म० प्र०

कवि, मनीषी, एवं मानव

डॉ० शिवमंगलसिंह 'सुमन'

के सौमनस्य को

श्रद्धा-सह

पद्य भाग

हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना का
कमांडर-इन-चीफ चन्द्रशेखर आज़ाद

मध्य-प्रदेश का झाबुआ जिला
ग्राम भावरा

आजाद-कुटिया

उपेक्षा का
स्मारक

देश की आजादी के लिए मर-मिटने वाले आजाद का जन्म इसी कुटिया मे हुआ था। इसे आजाद के पिता प. सीताराम तिवारी ने अपने हाथों से बनाया था। उनके हाथ का लगाया हुआ आम का वृक्ष ऊपर दिखाई दे रहा है जो वर्ष में दो बार फल देता है।

"वतन पर मिटने वालों का
यही बाकी निशां होगा।"

प्रकाशकीय

'सरदार भगतसिह' महाकाव्य के पश्चात उसी शृङ्खला का यह द्वितीय पुष्प 'चन्द्रशेखर आजाद' अपने पाठको के हाथो में देते हुए हम हर्ष तथा गर्व का अनुभव कर रहे है। राष्ट्रीय विचार-धारा के उत्थान में हमारे पाठको से हमे बहुत प्रोत्साहन मिल रहा है। पाठको की ओर से प्राप्त हजारो पत्र इस बात के प्रमाण है कि वे स्तरीय साहित्य का उचित मूल्यांकन करते है और उसके प्रति उनकी श्रद्धा-भावना भी है।

जन-कल्याण प्रकाशन का वास्तविक उद्देश्य जन-कल्याण ही है, आत्म-कल्याण नही। भीषण मँहगाई के इस युग मे जब कि वस्तुओ के भाव आसमान को छू रहे है, अपने वास्तविक लागत मूल्य से भी बहुत कम में इस प्रकार के साहित्य को जन-जन के हाथो मे पहुचाने मे हमारा उद्देश्य व्यापारिक प्रतिस्पर्धा नही, वरन् उनमे यह भावना भर देना है कि यह देश हमारा है और हम इसकी प्रतिष्ठा के लिए मरने-मिटने के लिए भी तैयार है। कितनी कष्ट-साधना के साथ हम इस सकल्प की पूर्ति में जुटे हुए है, इसका अनुमान पुस्तक हाथ मे लेते ही लगाया जा सकता है।

जब हम इतने कम मूल्य मे इतने अच्छे ग्रन्थ देते हैं तो अपने पाठको से हम यह अपेक्षा भी करते है कि वे राष्ट्रीय भावनाओ के प्रसार मे हमारा पूरा सहयोग दे। यदि आप अपने नगर के छात्रो तथा युवको के हाथों में इस साहित्य को पहुँचा सके तो आप एक अच्छी पीढ़ी के निर्माण में हमारे सहयोगी अवश्य बनेगे।

हम आशा करते है कि आप—

- स्वयं इस प्रकार की पुस्तके ख़रीद कर पढ़े।
- दूसरो को खरीद कर पढने की प्रेरणा दे।
- छात्रो को पुरस्कार मे बाँटने के लिए इस प्रकार का साहित्य चुने।
- शुभ अवसरो पर अपने मित्रो तथा स्नेहियो को उपहार मे इस प्रकार की पुस्तकें ही दे।
- लिखें कि आप हमसे और क्या अपेक्षाएँ रखते है।

कवि-परिचय

परिचयकार : डॉ० चिन्तामणि उपाध्याय
हिन्दी विभाग, माधव महाविद्यालय
विक्रम-विश्व-विद्यालय, उज्जैन

श्री 'सरल' के व्यक्तित्व मे मानव, अध्यापक, तथा कवि ये तीनो रूप इतने घुले-मिले है कि यह बताना कठिन है कि इनमे कौन सा रूप अधिक उभरा हुआ है। जो कोई एक बार भी उसके सपर्क मे आता है वह यह देख लेता है कि इस व्यक्ति मे इतनी सहृदयता एवं संवेदनशीलता है कि वह दूसरो के लिए कुछ भी करने तैयार हो सकता है। अपने अध्यापकीय कर्तव्यो के प्रति भी इस व्यक्ति मे इतनी निष्ठा है कि उसने अध्यापन को जीवन-यापन का साधन नही वरन् पूजा के समान पावन माना है। यदि अध्यापक 'सरल' के पास कोई निधि है तो वह है अपने शिष्य-वर्ग की शाश्वत श्रद्धा। कवि के रूप मे श्री सरल ने उत्कट राष्ट्रीय विचारधारा के सशक्त एवं निर्भीक गायक के रूप मे ख्याति अर्जित की है। उसके प्रत्येक शब्द मे देश-भक्ति की भावनाएँ तरंगायित मिलेगी। राष्ट्रीय भावनाओ के सागर-मंथन मे कवि सरल ने शेष नाग की पूँछ के स्थान पर, उसका फन पकड़ने का ही दुस्साहस किया है और वह इसका दुष्परिणाम भी भुगत रहा है। क्रान्तिकारियों पर कलम चलाना साँपो के खेलने से कम नहीं है, यह जानकर भी वह यह खेल खेल रहा है।

कवि के जीवन वृत्त के सम्बन्ध मे क्या लिखा जाय ? उससे कुछ जान पाना बहुत ही मुश्किल है। उसने अपनी ठीक जन्म-तिथि भी तो किसी को अभी तक नही बताई है। जो कुछ इधर-उधर से ज्ञात हो सका है, वह यह है—

श्री श्रीकृष्ण सरल का जन्म सवत् १९७८ वि० मे वर्तमान मध्यप्रदेश के गुना जिले के एक चेतनाशील नगर मे हुआ है जिसका नाम है—अशोक नगर। प्रतिष्ठित सनाढ्य ब्राह्मण परिवार मे उत्पन्न होने के कारण कुछ सुसस्कार उसे मिले है। अपने बचपन के कुछ दिन श्री सरल ने गाँवो मे बिताए और प्रकृति के वैभव का आभास किया। वर्षा के दिनो मे अपने पशुधन की सपन्नता के लिए इस परिवार को एक ऐसे गाँव मे झोपड़ी बनाकर रहना

पड़ता था जहाँ शेरो की दहाड़े नित्य प्रति सुनी जा सकती थी। तभी तो कवि ने नर-नाहरो को काव्य का विषय चुना है।

शिक्षा-दीक्षा के क्षेत्र मे श्री सरल को आत्म-निर्भरता का श्रेय प्राप्त है। गुना नगर के राजकीय विद्यालय मे हाईस्कूल तक शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त शेष सभी परीक्षाएँ स्वाध्याय के बल पर ही उच्च श्रेणी मे उत्तीर्ण की है। कवित्व का स्फुरण छात्र जीवन मे ही हो चुका था।

देश की आजादी की लडाई मे भी श्री सरल ने भरपूर सहयोग दिया है। बचपन की एक घटना ने उसे क्रान्तिकारियो का भक्त बना दिया है। अपने नगर के रेलवे स्टेशन पर कुछ क्रान्तिकारियो को बन्दी बनाकर अँग्रेज सिपाही रेलगाडी से अन्यत्र ले जा रहे थे। सहपाठियो मे होड लग गई—देखे इन अँग्रेज सिपाहियो को कौन पत्थर मार सकता है। बालक सरल एक अँग्रेज सिपाही के पत्थर मार कर भागा। पकड़ लिया गया और बुरी मार भी खाई। शायद उसी मार की कसक ने उसे क्रान्ति की ओर उन्मुख कर दिया है।

सन् १६४२ के राष्ट्रीय आन्दोलन मे श्री सरल ने अपने साथियो का कई सक्रिय कार्यों मे नेतृत्व भी किया और अपने एक विश्वस्त मित्र के साथ जेल-जीवन का अनुभव भी किया। भूमिगत अवस्था मे कई क्रान्तिकारियो को आश्रय देने का कार्य भी श्री सरल ने अत्यन्त विश्वास के साथ किया है।

साहित्य के क्षेत्र मे श्री सरल का प्रवेश राष्ट्रीय विचारधारा की निर्भीक अभिव्यक्ति के साथ ही हुआ है। विदेशी शासन की हथकड़ियों का भय उसके स्वरो पर प्रतिबन्ध नही लगा सका। आज भी वह भ्रष्टाचार और अन्याय को उसी बुलन्दी के साथ ललकारता है। प्रबन्धात्मक कवि प्रतिभा के मान-दण्ड के रूप मे 'अद्भुत कवि-सम्मेलन,' 'महारानी अहिल्याबाई' 'सरदार' भगतसिंह, तथा 'चन्द्रशेखर आजाद', हमारे सामने है। फुटकर रचनाओ के सकलन के रूप मे कवि की 'राष्ट्र-भारती' ने देश-व्यापी ख्याति अर्जित की है।

इस कवि से हमे और भी कई आशाएँ है।

प्रस्तावना

झाँकियाँ

पहली झाँकी : गाँव का गाँव पागल होगया

किसी नगर मे यदि दो-चार व्यक्ति भी पागल हो जाँय तो उस नगर का जन-जीवन त्रस्त हो उठता है। इस कल्पना मे ही कि यदि किसी गाँव के सभी व्यक्ति एक साथ पागल हो जाँय तो क्या होगा, रोगटे खडे हो जाते है। यह वास्तविकता है कि एक दिन एक गाँव के सभी निवासी एक साथ पागल हो गए। इतना ही नही, उस दिन उस गाँव मे बाहर से पहुँचने वाले सभी व्यक्ति भी पागल हो गए। उस गाँव मे उस दिन पन्द्रह हजार पागलो की भीड दिखाई देने लगी।

२७ फरवरी १९६५ का प्रभात भावरा गाँव के लिए उन्माद का वातावरण लेकर उपस्थित हो गया।

जैसे-जैसे सूरज चढने लगा, वैसे-वैसे लोगो का पागलपन भी बढने लगा। आज इस गाँव मे बाहर से जो भी आता है, पागलो जैसा व्यवहार करने लगता है। नगे-अधनगे स्त्री-पुरुष बदहवास से इधर-उधर दौड़ रहे हैं। कोई हँस रहा है, कोई रो रहा है। यदि पुरुष अपने सिरो से उतार कर पगड़ियाँ फाड़ रहे है तो स्त्रियाँ अपनी चुनरियाँ उतार कर फेक रही है। कोई जोर से चिल्ला रहा है तो कोई पत्थर फेक रहा है। कुछ लोग घरों मे से सामान उठा-उठा कर भाग रहे हैं। सारे गाँव मे तूफानी हलचल का ऐसा दौर उठ खडा हुआ है कि उसका अन्त ही दिखाई नही देता।

जो लोग हँस रहे हैं वे उत्सव के प्रति अपना हर्षातिरेक व्यक्त कर रहे हैं। जो रो रहे है, वे अपने ही गाँव के लाड़ले अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद की याद मे दीवाने हो रहे है। पुरुष अपनी पगड़ियाँ उतार-उतार कर दे रहे है कि उन्हे खभो से लपेट कर दरवाजे तैयार कर दिए जाँय। झालर लटकाने को कुछ नहीं मिल रहा तो स्त्रियाँ अपनी अच्छी चुनरिएँ दे रही है और उनके स्थान पर फटी पुरानी चुनरिएँ अपने शरीर से लपेट रही हैं। व्यवस्था एव प्रबन्ध के क्रम में 'यह लाओ ! वह लाओ !' की चिल्ल-पौं मची हुई है।

गड्ढे भरने के लिए लोग पत्थर इधर-उधर फेंक रहे हैं और सजावट आदि के लिए अपने घरो से सामान उठा-उठा कर भाग रहे हैं।

गाँव की सीमा के उस छोर पर जो एक खुली जीप आती दिखाई दी उसी ओर सब दौड पडे और उसे घेर कर गला फाड़-फाड कर चिल्लाने लगे। सब लोग एक ही स्वर मे चिल्ला रहे है।

चन्द्रशेखर आजाद ! जिन्दाबाद !

भारत-माता का लाल ! जिन्दाबाद !

आजादी का अमर सेनानी ! जिन्दाबाद !

देखते-देखते पागलो की भीड ने चल-समारोह का रूप धारण कर लिया। गाडी को एक-एक इंच आगे सरकने के लिए कठोर संघर्ष करना पड़ रहा है। ढोल और मादल का स्वर आसमान के कानो के पर्दे फाड रहा है। झाँझ और मजीरो की झंकार हवा को चीरती हुई इधर-उधर चक्कर लगा रही है। आदिवासी भीलो के समूह टोली बना-बना कर नाचने लगे हैं— मस्ती मे झूम रहे है और झूमे जा रहे है। वस्त्रों के नाम पर एक छोटी सी लगोटी और वह भी झूमते हुए भीलो के तन से विद्रोह कर रही है। भील-वधुएँ अपने भील-राजाओ के हाथो मे हाथ डाल कर सड़को पर नाचे जा रही हैं। दिग्वसनी बालको के वृन्द अपनी लाठियाँ आकाश मे ताने हुए उछले जा रहे है। बाहर से आए हुए संभ्रान्त नागरिक भी अपनी नागरिक औपचारिकता और शिष्टाचार की चादर उतार कर इन्ही लोगो मे घुलमिल कर नाचे जा रहे हैं। शासन के सशस्त्र प्रहरी भी आदिवासी भीलो की बढती हुई लहरो को नही रोक पा रहे। लोग खुली जीप की ओर लपक रहे है, जिसमे-अमर आजाद का अस्थि-कलश रखा हुआ है। आजाद के सुलभ और दुर्लभ चित्रो की झाँकी भी गाडी मे सजाई गई है। अस्थि-कलश को घेर कर बैठे हुए आजाद के क्रान्तिकारी साथी उन्माद के इस तूफान मे डूब-उतरा रहे है।

चल-समारोह आगे बढ़ता है। गाँव मे कोई ऐसा घर नही जिसके सामने सज्जित तोरण न बनाया गया हो। तोरणो को आजाद तथा अन्य शहीदो के चित्रो से सज्जित करके आकर्षक बनाया गया है। प्रत्येक व्यक्ति अपने घर के सामने बनाए गए तोरण-द्वार के नीचे से शोभा-यात्रा को ले जाने का आग्रह कर रहा है। इतना अबीर उड़ाया जा रहा है कि दोपहरी की चिल-चिलाती हुई धूप अबीर के बादलो से ढक गई है। आज यहाँ :—

'लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल'—

की उक्ति साकार हो उठी है। उड़ते-फिरते अबीर-गुलाल के लाल-

लाल वादल—लाल पगडियाँ और छपको वाली लाल चुनरिएँ धारण किए हुए आदिवासी भील-स्त्री-पुरुषों की अपार भीड—खभो से लाल वस्त्र लपेट कर वनाए दरवाजे और उन्मत्त प्रकृति के अचल से वटोरे गए दहकते हुए अंगारो जैसे टेसू के लाल-लाल फूलो की वर्षा—आज यहाँ सभी कुछ तो लाल है। लोगो की आँखें रात्रि भर के जागरण और दिन भर के परिश्रम से लाल हो रही है। लगता है जैसे चन्द्रशेखर आजाद के वलिदान-दिवस पर उसके रक्त की लाली यहाँ के कण-कण मे व्याप्त हो गई है। छज्जो, अटारियो और वृक्षो की शाखाओ पर लदे हुए नर-नारी आजाद के अस्थि-कलश के दर्शन करने के लिए घटो से तपस्या कर रहे है।

जिस गाँव की गलियो मे आजाद के शैशव ने बचपन, और वचपन ने कौमार्य के झरोखे मे से झाँका, उस गाँव के लोगो ने और ग्राम-धरा के अंचल से आए हुए भील-भीलनियो के तरंगायित जन-सागर ने सिद्ध कर दिया कि इस गाँव की मिट्टी से निर्मित आजाद का तन यहाँ की पर्वत-माला की चट्टानो जैसा ही सुदृढ था।

शहीदों की समाधियो पर नागरिक मेले भले ही न लगे, पर यह गाँव अपने पागलपन के लिए प्रसिद्ध हो ही गया।

●●●

वर्तमान मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले मे भावरा नामक गाँव है। इसी गाँव को चन्द्रशेखर आजाद की जन्म-भूमि होने का गौरव प्राप्त है। जिस कुटिया मे चन्द्रशेखर आजाद का जन्म हुआ था, वह आज भी उसी दशा मे आजाद की स्मृति को सँजोए हुए खडी है। कुटिया के दरवाजे पर खडा हुआ आम का झाड आजाद की ही भाँति अपनी विशेषता से विभूपित है। वह वर्ष में दो वार फल देता है। उस झाड की छाया मे आज भी गाँव के वच्चे पिस्तौल और वम-गोलो के खेल खेलते है। कभी-कभी-सध्या के समय अलाव के चारो ओर इकट्ठे होकर आजाद की वीरता की कहानियाँ कही-सुनी जाती है।

दूसरी झाँकी : आज मेरे भगतसिह की शादी है

नौ मार्च १९६५ का दिन उज्जैन के इतिहास में स्वर्णाक्षरो से लिखा जायगा। भूत-भावन भगवान महाकाल की इस ऐतिहासिक, धार्मिक तथा सास्कृतिक नगरी उज्जयिनी को स्वय एक महान तीर्थ होने का गौरव प्राप्त है, पर इसका गौरव द्विगुणित हो गया जव एक अन्य सदेह तीर्थ स्वयं इससे मिलने आ पहुँचा। क्यों न कहे कि पुण्य-सलिला क्षिप्रा से भेंट करने देश-

भक्ति, बलिदान एवं वीरता की त्रिवेणी ही इस ओर प्रवहमान हो आई है। इस सदेह तीर्थ अथवा त्रिवेणी को हम एक नाम दे सकते है और वह नाम है—अमर शहीद सरदार भगतसिह की वीर-माता श्रीमती विद्यावती।

वीर-माता के शुभागमन के समाचार हर्ष-हिलोरो की भाँति प्रसरित हो रहे है। उल्लसित जन-भावनाये पुण्यो का फल प्राप्त करने अधीर हो रही है। वह देखो, वाष्पित जन-वाहनी उस साकार तीर्थ को लेकर आ पहुँची है। आकुल आँखे एक अस्सी वर्षीया हिम-केशी वृद्धा माँ को आधार बना कर तृप्ति का अनुभव कर रही है। सहस्रो कण्ठो मे स्वर फूट रहा है :—

सरदार भगतसिह : जिन्दाबाद !

इन्कलाब : जिन्दाबाद !

वीर-माता जिन्दाबाद !

राष्ट्र-माता जिन्दाबाद !

भगतसिह की माता राष्ट्र-माता ही तो है। निकट से राष्ट्र-माता के दर्शन करने के लिए भीड़ उमड रही है। लगता है जैसे जन-सागर की उत्ताल तरगे व्यग्रता से तट की ओर बढ रही है। तट है मातृ-चरण जिन पर मस्तक रख कर लोग आँसुओ का अर्घ्य चढा रहे है। महाकवि कालिदास के मेघदूत मे वर्णित उज्जयिनी की मालनियो द्वारा निर्मित पुष्प-हार माँ के गले मे पहुँचकर-फूले नही समा रहे—वे अपने भाग्य पर इठला कर कह रहे है—

> **"देखो तीर्थ-स्वरूपा माँ के गले से लिपट जाने का जो सौभाग्य भगतसिह को प्राप्त था, वह आज हमें प्राप्त हो रहा है।"**

माँ भी बेटे के ध्यान मे डूब गई है। उसे लग रहा है जैसे आ-पाद विलम्बित पुष्ट पुष्प-हार, हार नहीं वरन् बेटे की भुज-वल्लरियाँ है, जिन्हे वह माँ के गले मे डालकर झूल रहा है। माँ की आँखे सजल है। जीवन के घन जन-मंगल की वर्षा कर रहे है।

राष्ट्र-माता की सवारी निकल रही है। सजी हुई बग्घी पर माँ विराजमान है। बग्घी के पृष्ठाधार पर माँ के आत्माहुत लाडले भगतसिह का तैल-चित्र बोलता-सा लग रहा है। लगता है जैसे माँ अपने नटखट बेटे को अपने कंधो पर बिठाकर उसकी उगलियाँ थामे है और कह रही है—

> **"तुझे लाहौर मे खोकर मैंने उज्जैन में पा लिया है। अब तू मुझे छोड़कर नहीं जा सकेगा।"**

माँ-बेटे के इस मिलन को देखकर लोग अपने को भूल गए है। असंख्य नर-नारियो की यह विराट सत्ता आज आपे मे नहीं है। पागलो की इतनी

बडी भीड़ नगर के जन-जीवन को झकझोर रही है। माँ और बेटे की जय-जयकार का समवेत स्वर आसमान को हिला रहा है। ढोल और नगाडो का स्वर वीर-भावनाओ का उद्रेक कर रहा है। क्षिप्रा का जल-प्रवाह ही जैमे जन-प्रवाह मे परिवर्तित होकर जन-पथ पर आ गया है। खिडकियो, गवाक्षो और झरोखो से झाँकते हुए चेहरे माँ की मगल-मूर्ति के दर्शन कर धन्य हो रहे है। कोमल कर-पल्लव तो फूलो की वर्षा कर रहे है पर इन आँखो के पास बरसाने के लिए है ही क्या—केवल आँसू-हर्ष-विषाद और गर्व के आँसू। धडकते हुए दिलो और बरसती हुई आँखो मे केवल एक ही भाव है—

"धन्य है माँ तेरी कोख जिसने भगतसिह जैसे सिंह-सपूत को जन्म दिया।"

"धन्य है हमारे भाग्य जो आज घर बैठे शहीद की माँ के दर्शन प्राप्त किए।"

यह कैसा उल्लास है ? यह कैसा उन्माद है ? आज क्या हो गया है जन-जन को जो छत्री-प्रांगण की ओर भागा जा रहा है। इस नगर को महामहिम राज-पुरुषो एव पुण्य-श्लोक महात्माओ के स्वागत का सम्मान प्राप्त हो चुका है, पर जो पागलपन आज लोगो पर सवार है, वह पहले कभी नही देखा गया। जमी हुई अटाटूट भीड मे स्त्री-पुरुष, बूढ़े-बच्चे और जवान सभी एक ही ओर दृष्टि गढाए बैठे है। सभी का लक्ष्य है जगमग करता हुआ सुमन-सज्जित मच जिस पर त्याग-तपश्चर्या की सजीव प्रतिमा, शहीद शिरोमणि भगतसिह की माँ शुभामीन है। शहीदो के व्यवस्थित चित्र बलिदानी वातावरण का निर्माण कर रहे है। यदि मा को अपना भगत प्यारा था, तो चन्द्रशेखर आजाद भी कम दुलारा नही था। वीर-गति प्राप्त चन्द्रलेखर आजाद का चित्र माँ के पार्श्व मे सुशोभित है। माँ के काँपते हुए होठो से छटपटाता हुआ स्वर निकल रहा है—

"कौन कहता है कि चन्द्रशेखर आजाद और भगतसिह इस संसार में नही है। देखो तो, ये कितने आजाद और भगतसिंह इस भीड़ मे बैठे हुए मुझसे आँखें मिला रहे है। राजगुरु और सुखदेव भी तो इन्ही में बैठे हैं। मेरा भगवतीचरण भी तो यही-कही है। मेरे बेटो ! तुम्हें इसी रूप में देखते रहने के लिए ही तो मै अभी तक जीवित हूँ अन्यथा टूटा हुआ दिल कितने दिन धड़धड़ करता।"

यह कौन है जो आत्म-विस्मृत-सा अलबेले शहीद के दुर्लभ मंस्मरण सुना कर जन-भावनाओ को आन्दोलित कर रहा है ?

यह कौन है जो करुणा-प्लावित स्वर मे शहीद की शादी की कल्पना करके उसे घोड़ी पर बिठा कर दुलहिन के दरवाजे भेज रहा है ?

यह कौन है जो माँ के स्वस्ति-गायन द्वारा अपनी काव्य-साधना को सिद्ध कर रहा है ?

यह कौन है जो अपनी सिंह-गर्जना से कायरता का कलेजा फाड़ कर देश की मिट्टी पर मर-मिटने का मत्र फूँक रहा है ?

क्या हो गया है इन चालीस हजार आँखो को जिनका वेग थामे नही थमता ?

क्या यहाँ ऐसी भी आँखे है जो इस करुणा पूर्ण वातावरण मे भी वाष्पित नही हो पाईं ?

हाँ-हाँ, केवल दो आँखें है जिनमे आँसुओ की आर्द्रता के स्थान पर स्नेह की तरलता है। अपने बीस सहस्र बेटे-बेटिया को भगत की याद मे रोते-बिलखते देखकर शहीद की माँ समझा रही है—

"खबरदार ! जो तुम में से एक भी रोया। क्या हो गया है आज तुम्हें ? जानते नहीं, आज मेरे भगतसिंह की शादी का दिन है। तब तो वह शादी कराने के नाम पर घर छोड़ कर भाग गया था, पर आज इस उज्जैन नगर में वह धूम-धाम से अपनी शादी करा रहा है। उसकी शादी में कितनी अच्छी सजावट तुम लोगों ने की है कि तारीफ करते नही बनती। देखो, यह कितना सुन्दर मण्डप बनाया गया है जो हार-फूलो के बोझ से झुक-झुक जाता है। जगमग-जगमग करती हुई ये असंख्य बत्तियाँ इस मण्डप में प्रकाश की गंगा बहा रही है। कितने सुरीले स्वर में तुम लोग शादी की घोड़ी गा रहे हो। आज मेरे बेटे भगतसिंह की शादी नहीं तो और क्या है ? मेरे बच्चो ! आज रोओ नहीं, खुशी का दिन है, खुशियाँ मनाओ।"

माँ के स्वर लोगो के धैर्य का रहा-सहा बाँध भी तोड देते है। नयन-गगा संयम के कूल-कगार तोड़ कर उन्मत्त हो उठती है। अवन्तिका के उद्वेलित जन-मानस से केवल एक ही ध्वनि उठकर ताम्र-पत्र पर अंकित होती जा रही है—

"आओ ! जन की धात्री स्वर्गादपि गरीयसी उस नारी की महिमा के समक्ष हम सब अपने मस्तक झुकाएं, आदर भाव प्रकट करें जिसके आदि रूप माँ की प्रशंसा मे अनेक संस्कृतियो द्वारा जयगान हुआ है।"

"राम और कृष्ण, बुद्ध और ईसा तथा मोहम्मद और गांधी की जननी के रूप में जिसकी महिमा का संगीत निरन्तर गूँजता रहा है, उस मातृत्व के गौरव से विभूषित वीर-प्रसू विद्या-माँ को अपने हृदय के समस्त श्रद्धा-सुमन इस संकल्प के साथ अर्पित करें कि

भारत का कोई बेटा कायर बन कर माँ की कोख को कलंकित नही करेगा।"

● ● ● ● ●

प्रस्तुत प्रवन्ध-काव्य 'चन्द्रशेखर आजाद' के लेखन की प्रेरणा इन्ही दो झाँकियां से संलग्न है। २७ फरवरी १९६५ को भावरा में मनाए गए आजाद-वलिदान-दिवस के समारोह में आजाद के तीन क्रान्तिकारी साथी सम्मिलिति हुए थे—डॉ० भगवान माहौर, श्री सदाशिवराव मलकापुरकर तथा श्री विश्वनाथ वैशपायन। आजाद के इन्ही साथियो ने आजाद पर भी प्रवन्ध काव्य लिखने की प्रेरणा मुझे दी थी। उस समय मेरा 'सरदार भगतसिंह' प्रवन्ध काव्य प्रकाशित हो चुका था। श्री वैशपायन के ये शब्द निरन्तर मेरे मानस मे गूँजते रहे—

"इस ग्रन्थ (सरदार भगतसिंह) के लिखने के पश्चात् आप पर एक और ऋण बाकी है और वह आपने अनजाने अपने ऊपर चढ़ा लिया है। शायद यह कल्पना आपके मस्तिष्क में भी होगी। वह यह है कि अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद पर भी आप द्वारा ऐसा ही महाकाव्य लिखा जाना आवश्यक है।"

इन शब्दो ने मेरे सकल्प-सरोवर मे ककड डालकर लहरे उत्पन्न कर दी थी और उन लहरो को एक तट मिल गया जिससे टकरा कर वही ध्वनि फिर निकली कि चन्द्रशेखर आजाद पर भी इसी प्रकार का महाकाव्य लिखा जाना आवश्यक है। इस बार प्रेरणा को सकल्प रूप मे परिणत किया अमरशहीद सरदार भगतसिह की पूज्य मातुश्री श्रीमती विद्यावती ने। वे भगतसिह काव्य का समर्पण स्वीकार करने और अपने आशीर्वाद का वरद-हस्त मेरे मस्तक पर रखने पजाब से चल कर उज्जैन आई। शहीद की माँ की महानता के सभी कायल हो गए। नागरिक अभिनन्दन के समय हजारो की भीड़ के बीच उन्होने मुझे सबोधित किया—

"तुमने मेरे बेटे भगतसिंह पर तो इतना बड़ा ग्रन्थ लिख दिया। ऐसा ग्रन्थ पहले तुम्हे चन्द्रशेखर आजाद पर लिखना चाहिए था। आज आजाद की माँ नहीं है, पर उसकी माँ के स्थान से मै तुम्हें यह आदेश दे रही हूँ कि अब तुम दूसरा ग्रन्थ चन्द्रशेखर आजाद पर भी लिखो। वचन दो कि क्या तुम ऐसा कर सकोगे?"

भला एक अकिचन कवि के पास शहीद की माँ को देने के लिए वचन के अतिरिक्त और था ही क्या। वचन दे दिया और वह भी शहीद की माँ के माथे पर रक्त-तिलक की गवाही के साथ। शहीद की माँ अपने वेटे के रक्त-स्पर्श से विचलित हो गई। हजारो स्त्री-पुरुषो के आँसुओ की अविरल वर्षा

को वह झेल गई थी पर जिसे उसने अपना बेटा मान लिया, उसके दो बूंद रक्त ने उसके सयम का बाँध तोड दिया और नयन-गगा को साक्षी करके उसने आशीर्वाद दिया—

"बेटे, मुझे विश्वास है कि तू अपने दिए हुए वचन को पूरा करेगा। मेरा आशीर्वाद है कि तू अपने संकल्प को शीघ्र पूरा करे। मै तेरी आग को परख चुकी हूँ।"

माँ का आशीर्वाद प्रतिफलित होकर काव्य के रूप मे आपके हाथो मे है। इसके लेखन-क्रम मे सृजन की जितनी पीडाएँ हो सकती है, उनकी अनुभूति मुझे हुई है। इसे लिख चुकने पर एक बहुत बडे ऋण की निवृत्ति का आनन्द मुझे हो रहा है।

प्रबन्धक-काव्य मे वर्णित घटनाओ के प्रस्तुतीकरण के सम्बन्ध मे एक बात कह दूँ। 'सरदार भगतसिह' काव्य की भाँति इस काव्य में भी केवल सत्य घटनाओ को कल्पना का आधार बनाया गया है। इसमे केवल साकेतिक इतिवृत्तात्मकता का प्रश्रय लिया गया है और प्रयत्न किया गया है कि व्यापक चेतना के साथ अनुभूति की तीव्रता ही प्रखर रहे।

प्रबन्धकाव्य के पात्र है गाँव और नगर—वे गाँव और नगर जो आजाद की स्मृति को अपने अचल मे सँजोए हुए है। एक यात्री पर्यटन-क्रम मे उन सभी-स्थानो का भ्रमण करता है जिनसे आजाद का सम्बन्ध रहा है। प्रत्येक गाँव या नगर आँखो-देखी के रूप मे आजाद-कथा कहता है। वह कुछ अपने विषय मे और कुछ आजाद के विषय मे कह कर पथिक की परितुष्टि करता है। अत मे पथिक अपनी अनुभूतियो के रूप मे प्रस्तुत करता है अपना प्रतिबोध, और युग-ध्वनि के साथ भावनाओ को विराम मिलता है।

मेरी भावनाओ एव उद्भावनाओ का आनन्द लीजिए। राष्ट्रीय चेतना के प्रसग मे आपके सहयोग की आकाक्षा सहज ही है। यदि कभी कोई अच्छा कार्य करके यह लिख सका कि यह प्रेरणा मैने आपके काव्य से ली है तो मै उसे अपना सबसे बडा पुरस्कार समझूँगा।

गोपालभवन, माधवनगर
उज्जैन, मध्यप्रदेश

श्रीकृष्ण 'सरल'

चन्द्रशेखर आजाद : व्यक्तित्व एवं कर्त्तृत्व

आजाद नाम भारत की वीरता एव बलिदान का प्रतीक बन गया है। न केवल कवि एव लेखक, वरन् भारत के अन्यान्य व्यक्ति भी अपने नाम के साथ 'आजाद' उपनाम जोडकर गौरव का अनुभव करते है। जिस व्यक्ति ने अनेक नामो को 'आजाद' उपनाम दिया, वह है—हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना का अजेय सेनानी अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद। चन्द्रशेखर आजाद के व्यक्तित्व एव कर्त्तृत्व का सही मूल्याकन करने के लिए सम्पूर्ण भारतीय सशस्त्र क्रान्ति के परिपार्श्व मे उसके वश-परपरागत सदर्भो का अध्ययन करना अनिवार्य प्रतीत होता है।

आजाद का युग

चन्द्रशेखर आजाद का आविर्भाव जिस युग मे हुआ, उसके पूर्व भारतीय सशस्त्र-क्रान्ति अपने गौरव-पूर्ण इतिहास का निर्माण कर चुकी थी और स्वाधीनता प्राप्ति के लिए अनेक प्रकार की अनेको लडाइयाँ लडी जा चुकी थी। इस आलेख के सीमित कलेवर मे विस्तार के साथ उनका वर्णन करना सभव नही है। अत्यन्त सक्षेप मे ही उन क्रान्ति-प्रयासो का आकलन यहाँ किया जा रहा है।

भारतीय सशस्त्र क्रान्ति का समय सन् १८५७ ई० से सन् १९४६ ई० तक निर्विवाद रूप से माना जा सकता है। इस सपूर्ण काल का विभाजन विशिष्ट युगो की विशिष्ट प्रवृत्तियो के आधार पर किया जा सकता है। मै उनका नामकरण इस प्रकार करना चाहूँगा—

१ युद्ध-सगठन युग।
२ आतकवाद का युग।
३ विप्लववाद का युग।
४. प्रगतिशील युग।
५. शान्ति-क्रान्ति समन्वित युग।

चन्द्रशेखर आजाद : व्यक्तित्व एवं कर्त्तृत्व

आजाद नाम भारत की वीरता एव बलिदान का प्रतीक बन गया है। न केवल कवि एव लेखक, वरन् भारत के अन्यान्य व्यक्ति भी अपने नाम के साथ 'आजाद' उपनाम जोडकर गौरव का अनुभव करते है। जिस व्यक्ति ने अनेक नामो को 'आजाद' उपनाम दिया, वह है—हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना का अजेय सेनानी अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद। चन्द्रशेखर आजाद के व्यक्तित्व एव कर्त्तृत्व का सही मूल्याकन करने के लिए सम्पूर्ण भारतीय सशस्त्र क्रान्ति के परिपार्श्व मे उसके वश-परपरागत सदर्भो का अध्ययन करना अनिवार्य प्रतीत होता है।

आजाद का युग

चन्द्रशेखर आजाद का आविर्भाव जिस युग मे हुआ, उसके पूर्व भारतीय सशस्त्र-क्रान्ति अपने गौरव-पूर्ण इतिहास का निर्माण कर चुकी थी और स्वाधीनता प्राप्ति के लिए अनेक प्रकार की अनेको लडाइयाँ लडी जा चुकी थी। इस आलेख के सीमित कलेवर मे विस्तार के साथ उनका वर्णन करना सभव नही है। अत्यन्त सक्षेप मे ही उन क्रान्ति-प्रयासो का आकलन यहाँ किया जा रहा है।

भारतीय सशस्त्र क्रान्ति का समय सन् १८५७ ई० से सन् १९४६ ई० तक निर्विवाद रूप से माना जा सकता है। इस सपूर्ण काल का विभाजन विशिष्ट युगों की विशिष्ट प्रवृत्तियों के आधार पर किया जा सकता है। मैं उनका नामकरण इस प्रकार करना चाहूँगा—

१. युद्ध-सगठन युग।
२. आतकवाद का युग।
३. विप्लववाद का युग।
४ प्रगतिशील युग।
५. शान्ति-क्रान्ति समन्वित युग।

को वह झेल गई थी पर जिसे उसने अपना बेटा मान लिया, उसके दो बूंद रक्त ने उसके सयम का बाँध तोड़ दिया और नयन-गगा को साक्षी करके उसने आशीर्वाद दिया—

"बेटे, मुझे विश्वास है कि तू अपने दिए हुए वचन को पूरा करेगा। मेरा आशीर्वाद है कि तू अपने संकल्प को शीघ्र पूरा करे। मै तेरी आग को परख चुकी हूँ।"

माँ का आशीर्वाद प्रतिफलित होकर काव्य के रूप मे आपके हाथो में है। इसके लेखन-क्रम मे सृजन की जितनी पीडाएँ हो सकती है, उनकी अनुभूति मुझे हुई है। इसे लिख चुकने पर एक बहुत बडे ऋण की निवृत्ति का आनन्द मुझे हो रहा है।

प्रबन्धक-काव्य मे वर्णित घटनाओ के प्रस्तुतीकरण के सम्बन्ध मे एक बात कह दूँ। 'सरदार भगतसिंह' काव्य की भाँति इस काव्य मे भी केवल सत्य घटनाओ को कल्पना का आधार बनाया गया है। इसमे केवल साकेतिक इतिवृत्तात्मकता का प्रश्रय लिया गया है और प्रयत्न किया गया है कि व्यापक चेतना के साथ अनुभूति की तीव्रता ही प्रखर रहे।

प्रबन्धकाव्य के पात्र है गाँव और नगर—वे गाँव और नगर जो आजाद की स्मृति को अपने अचल मे सँजोए हुए है। एक यात्री पर्यटन-क्रम मे उन सभी-स्थानो का भ्रमण करता है जिनसे आजाद का सम्बन्ध रहा है। प्रत्येक गाँव या नगर आँखो-देखी के रूप मे आजाद-कथा कहता है। वह कुछ अपने विषय मे और कुछ आजाद के विषय मे कह कर पथिक की परितुष्टि करता है। अत मे पथिक अपनी अनुभूतियो के रूप मे प्रस्तुत करता है अपना प्रतिबोध, और 'युग-ध्वनि' के साथ भावनाओ को विराम मिलता है।

मेरी भावनाओ एव उद्भावनाओ का आनन्द लीजिए। राष्ट्रीय चेतना के प्रसंग मे आपके सहयोग की आकाक्षा सहज ही है। यदि कभी कोई अच्छा कार्य करके यह लिख सका कि यह प्रेरणा मैंने आपके काव्य से ली है तो मै उसे अपना सबसे बडा पुरस्कार समझूँगा।

गोपालभवन, माधवनगर
उज्जैन, मध्यप्रदेश

श्रीकृष्ण 'सरल'

सौ वर्ष से भी कम समय को विशिष्ट नाम देकर उसकी सीमा-निर्धारण मे कठिनाई अवश्य पड़ती है, पर फिर भी कुछ प्रवृत्तियाँ इतनी प्रमुख हैं कि उन्हे छोड़ा नही जा सकता और उसके आधार पर उन युगो के क्रान्ति-प्रयासो का अध्ययन सुगमता से किया जा सकता है।

(१) युद्ध-संगठन युग

यह वह युग था जव सन् १८५७ ई० मे प्रथम वार भारत ने अँग्रेजी साम्राज्यवाद के विरुद्ध सघर्ष छेड दिया था। अँग्रेज इतिहासकार तो इसे केवल सैनिक विद्रोह की ही सज्ञा प्रदान करते है पर कुछ भारतीय इतिहासकार भी इसे व्यक्तिगत स्वार्थो के सघर्ष के नाम से पुकारते है। मै यह मानता हूँ कि कुछ भारतीय नरेश अपने खोए हुए राज्यो को पुनः प्राप्त करने अथवा अपनी प्रतिष्ठा वनाए रखने के लिए सघर्ष कर रहे थे, पर साथ ही साथ उन्हे यह भी नही भूल जाना चाहिए कि सगठन का इतना निखरा हुआ रूप इससे पहले कभी नही देखा गया था। सवके सामने एक ही लक्ष्य था और वह था अँग्रेजी साम्राज्यवाद को जड उखाड कर अपनी धरती पर अपने शासन की स्थापना। कौन कह सकता है कि स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् कोई नई शासन-व्यवस्था विकसित न हो जाती।

नाना साहव ने तीर्थ-यात्रा के वहाने सारे देश मे घूम-घूम कर सामंत वर्ग को सचेत कर दिया। जनता को क्रान्ति सूचना दी साधु-संत एव फकीरो ने।

रोटी और कमल एकता तथा वलिदान के प्रतीक वने और ग्राम तथा नगर व्यापक सघर्ष की प्रतीक्षा करने लगे। उधर विदेशो मे रंगोजी तथा अजीमुल्ला खॉ ने अपने पक्ष का समर्थन प्राप्त करने मे कोई कसर नही उठा रखी।

भारतीय स्वातन्त्र्य-प्राप्ति के लिए इस व्यापक सशस्त्र-क्रान्ति का विस्फोट आकस्मिक रूप से हो गया। कई स्थानो पर अँग्रेजो के पैर उखडे और भारतीय वीरता का लोहा मानने के लिए उन्हे विवश होना पड़ा। पर कुछ देश-द्रोहियो ने किये-कराए पर पानी फेर दिया। क्रान्ति-चेष्टा असफल हो गई। चूँकि इस युग मे भारतीय मुक्ति-सेना ने अँग्रेजी सेना के साथ कई ऐतिहासिक युद्ध किए, इसी कारण सशस्त्र-क्रान्ति के इस युग को हम युद्ध-सगठन-युग के नाम से पुकारते है।

(२) सशस्त्र क्रान्ति का आतंकवादी युग

इस युग का सूत्रपात उस समय हुआ जव सन् १९०५ ई० मे लार्ड कर्जन

ने बृहत्तर बंगाल को दो टुकडों मे विभाजित करने की घोषणा कर दी। सारे बगाल मे इस निर्णय के विरोध ने जन-आन्दोलन का रूप ले लिया। जब सीधी उँगलियो से घी निकलते दिखाई नही दिया तो कुछ आन्दोलनकारियो ने अपनी उँगलियाँ टेढी कर ली। इन क्रान्तिकारियो ने अस्त्र-शस्त्र के वल पर अँग्रेजो को सवक सिखाने का निश्चय कर लिया। स्थान-स्थान पर धूम-धडाके हुए। लाट साहव को वम से उडाने के प्रयत्न किए गए। कई अफसरो को मौत के घाट उतारा गया। लूट-पाट का बाजार गर्म हुआ। इस समस्त कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रमुख भावना आतकवाद की ही थी। क्रान्तिकारी यह भली भाँति जानते थे कि कुछ अँग्रेजो की हत्या कर देने से या कुछ खजानो को लूट लेने से अँग्रेजो को भारत से भगाया नही जा सकता, पर उन्हे यह दृढ विश्वास था कि आतकवाद शासन की व्यवस्था को छिन्न-भिन्न अवश्य करेगा और इस सवके परिणाम स्वरूप किसी दिन व्यापक क्रान्ति होगी और तव अवश्य ही अँग्रेजो को अपने बोरिया-विस्तर उठाने पडेगे। यहाँ 'युगान्तर' मे प्रकाशित एक पत्र की कुछ पक्तियाँ दी जा रही है जिनका रौलट-कमेटी मे उद्धरण हुआ है—

> "यदि क्रान्तिकारी बुद्धिमानी से इन लोगों में स्वतन्त्रता का प्रचार करें तो वहुत काम हो सकता है। जव असली संघर्ष का मौका आयगा, तव क्रान्तिकारियो को न सिर्फ प्रशिक्षित आदमी मिलेंगे, वल्कि सरकार पक्ष के अच्छे से अच्छे हथियार भी मिलेंगे।"

कहना न होगा कि वगीय आतकवाद इस असली सघर्ष के लिए पृष्ठ भूमि तैयार कर रहा था। इस आतकवाद के सुपरिणाम का मूल्याकन करते हुए प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री मन्मथ नाथ गुप्त ने अपने ग्रन्थ "भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास" मे लिखा है।

> "सार यह है कि बंगाल के शिक्षित नवयुवक इस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर वार करते रहे। सारा बंगाल और कुछ हद तक सारा भारत इन अलमस्तो के पीछे था। इस आन्दोलन का और कुछ नतीजा हो न हो, वंगाल तो फिर से एक हो गया। मानना पड़ेगा कि जाति की मुरझाई हुई मनोवृत्ति पर शहीदो के खून की यह वर्षा काफी उत्तेजक साबित हुई। बंगाली जाति करीव-करीब एक बे-रीढ़ की जाति थी। इन लोहे की रीढ़ वालो ने उसे एक 'रीढ़दार' जाति बना दिया।"

(३) सशस्त्र क्रान्ति का विप्लववादी युग

सशस्त्र क्रान्ति की भूमिका मे आतकवाद और विप्लववाद का समानार्थी शब्दो की तरह प्रयोग किया जाता रहा है। यद्यपि दोनो की भावना एक ही

है पर दोनो के स्वरूप मे कुछ अन्तर अवश्य है। आतकवाद उस नीति का परिचायक है जिसके द्वारा बल प्रयोग आवश्यक समझा जाता है और विरोधी पक्ष को भयभीत करना प्रमुख उद्देश्य माना जाता है। विप्लववाद मे यद्यपि आतकवाद समाहित रहता है, पर उसका साधन भिन्न है। 'विप्लववाद एक व्यापक गोपनीय तैयारी के साथ सेनाओ तथा जनता को भडका कर विद्रोह का झडा खडा करके शत्रु शासन की खूटियां उखाडने के कार्यक्रम को अपनाता है।

विप्लववाद के इस अर्थ मे यह युग भारत मे उस समय उपस्थित हुआ जब कि योरोप मे सन् १९१८ का महा युद्ध छिड गया था और इग्लैण्ड भी उसमे उलझ गया था। भारतीय क्रान्तिकारियो ने यह उचित समझा कि यदि इस समय हम भी विद्रोह का एक जोरदार धक्का दे दे तो हमारे कन्धो से गुलामी का जुआ उतर सकता है।

इस विप्लववाद के महानायको मे बगाल के महान क्रान्तिकारी रास बिहारी बोस ने न केवल बगाल मे वरन् सयुक्त प्रान्त तथा पजाब में भी सगठन का अच्छा कार्य किया। उनके लेफ्टिनेन्ट शचीन्द्रनाथ सान्याल ने भी कधे से कधा मिला कर क्रान्ति-सगठन मे सहयोग दिया। पजाब के उत्साही कार्यकर्त्ताओ मे सरदार कर्तारसिंह सराबा एक उच्च कोटि के चरित्रवान युवक थे। कर्तारसिह ने इसी प्रयास मे अल्पायु मे ही फांसी का फन्दा चूमा।

इस विप्लववादी आन्दोलन को प्रेरणा और गति मिली प्रवासी भारतीयो द्वारा। अमेरिका तथा कैनेडा से हजारो की सख्या मे भारतीय आकर इस विप्लव-महायज्ञ मे अपने प्राणो की आहुतियां देने लगे। इसी उद्देश्य को लेकर सानफ्रासिसको मे 'गदर पार्टी' की स्थापना हुई। यहा तो इस प्रयास का उल्लेख भर किया जा रहा है। कभी अवसर मिलेगा तो इस विषय पर विस्तारपूर्वक लिखा जायगा।

विप्लववादी कार्यक्रम के अनुसार सन् १९१५ ई० की १९ फरवरी को व्यापक विद्रोह के लिए छावनियो को तैयार कर लिया गया था, पर एक देश-द्रोही कृपालसिह की कृपा से इस योजना का भडाफोड हो गया और अँग्रेजो ने तत्परता से विप्लव-आयोजन को विफल कर दिया। दमन-चक्र बहुत तेजी से घूमा और स्वाधीनता की आशा एक बार फिर धूमिल पड़ गई।

(४) सशस्त्र क्रान्ति का प्रगतिशील युग

प्रमुख प्रवृत्ति के आधार पर जिस युग को सशस्त्र क्रान्ति के प्रगतिशील

युग के नाम से पुकारा गया है, उसीको व्यक्तिगत प्रधानता के आधार पर भगतसिह-आजाद युग के नाम से पुकारा जा सकता है। सन् १६२४ से सन् १६३१ तक के इस युग मे सरदार भगतसिह और चन्द्रशेखर आजाद क्रान्ति-गगन के उज्ज्वल नक्षत्र रहे और सशस्त्र क्रान्ति की प्रमुख धाराएँ उनके आस-पास चक्कर लगाती रही। इसी युग मे क्रान्तिकारियो ने समाजवादी प्रजातन्त्र के स्वरूप की कल्पना करके अपने सगठन का नामकरण किया 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना।' इसी युग मे क्रान्तिकारियो का अखिल भारतीय सगठन बनाया गया और नारी वर्ग ने भी क्रान्ति-कार्यो मे भाग लेना प्रारम्भ किया। इन्ही सब कारणो के आधार पर इस युग को सशस्त्र क्रान्ति का प्रगतिशील युग कहा जा सकता है। चन्द्रशेखर आजाद इसी युग के नायको मे से एक है, अत उनके क्रान्तिकारी कार्यो के साथ इस युग की प्रवृत्तियो का विशद विवेचन किया जायगा।

(५) शान्ति-क्रान्ति समन्वित युग

सन् १६३१ से सन् १६४६ तक के युग को शान्ति-क्रान्ति समन्वित युग इसलिए कहा जा सकता है कि इस समय गाधी जी के नेतृत्व मे जो अहिसात्मक राष्ट्रीय आन्दोलन चल रहा था उसने काफी जोर पकडा और लोगो मे व्यापक राष्ट्रीय चेतना का प्रसार हुआ। अहिसात्मक आन्दोलन सक्रिय हो जाने के कारण क्रान्तिकारी भी तटस्थ होकर कुछ सुपरिणाम निकलने की प्रतीक्षा करने लगे।

सन् १६३७ ई० मे लोकप्रिय मन्त्रि-मडलो की स्थापना का भी क्रान्तिकारी कार्यो पर प्रभाव पड़ा। सन् १६४२ का जन-आन्दोलन शान्ति-क्रान्ति का समन्वित आन्दोलन कहा जा सकता है। नेताजी सुभापचन्द्र बोस का आजाद-हिन्द सेना का अभियान तो विशुद्ध रूप से सशस्त्र क्रान्ति का ही अग था और विफल होने पर भी उसने साम्राज्यवाद की नीव को हिला दिया। सन् १६४६ के नौ-सैनिक विद्रोह और थल-सेना द्वारा विद्रोहियो से लड़ने से इन्कार कर देने की घटना ने तो अँग्रेजी साम्राज्य की कमर ही तोडकर रख दी। ब्रिटिश सरकार को अपना खोखलापन प्रकट हो गया और भारत को सत्ता हस्तान्तरित करने मे उन्होने बुद्धिमानी समझी। ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधानमत्री श्री एटली ने भी एक प्रश्न का उत्तर देते हुए स्वीकार किया था कि ब्रिटेन भारत को स्वतन्त्रता देने के लिए दो कारणो से बाध्य हो रहा है।

(१) भारतीय सेना मे अब ब्रिटेन के प्रति स्वामिभक्ति समाप्त हो गई है और जब सेना ही उनका साथ नही दे रही है तो जनता पर शासन जमाये रखना कठिन है।

(२) भारतीय सेना के असहयोग के कारण ब्रिटेन के पास इतनी विशाल अँग्रेजी सेना नही है कि वह पूरे भारतवर्ष को दवा कर रख सके ।

इस प्रकार क्रान्तिकारियो का वह सपना पूरा हुआ जो वे सदैव से देखते रहे थे कि सशस्त्र सैनिक विद्रोह और विद्रोहियो के साथ जन-सहयोग द्वारा भारतीय स्वाधीनता प्राप्त होगी । सन् १९४६ में जब इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न हो गई तो ब्रिटिश साम्राज्य ने स्थिति की अनिवार्यता से वाध्य होकर १५ अगस्त सन् १९४७ ई० को भारतवर्ष की सत्ता भारतीयो के हाथो मे सौंप दी ।

शान्ति-क्रान्ति के प्रयासो की समन्वित एकरूपात्मकता का उल्लेख आजाद के साथी प्रसिद्ध क्रान्तिकारी डॉ० भगवानदास माहौर ने इन शब्दो मे किया है—

> **"इस प्रकार हम देख सकते है कि कॉग्रेस का व्यापक खुला अहिंसात्मक आन्दोलन और सशस्त्र क्रान्तिकारियो का गुप्त सशस्त्र आन्दोलन एक चिमटे के दो हाथ से रहे है । वे सन् १९४२ से ४६ तक के आन्दोलन मे पास-पास आते गये और अन्ततः मिल गये और उससे भारत ने विदेशी दासता को पकड़ कर दूर फेंक दिया ।"**

यह है भारतीय क्रान्ति-चेष्टा की पृष्ठ-भूमि जिसके बीच चन्द्रशेखर आजाद के व्यक्तित्व को देखा और परखा जा सकता है । अव हम आजाद के जीवन-वृत्त तथा उसके जीवन-दर्शन पर कुछ विचार प्रकट करेगे ।

आजाद के जीवन-सूत्र तथा साधन

प्राय. देखा गया है कि जब कोई व्यक्ति महान हो जाता है तो उससे सम्बन्ध जोडने वाले और अपनी निकटता स्थापित करने वाले कई व्यक्ति निकल आते है, सामान्य दिनो मे चाहे वे उसे पूछते न हो । अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद के सम्वन्ध मे भी यही सत्य चरितार्थ होता है । आज उनके जन्म और कार्यो के विषय मे कई भ्रान्त धारणाओ का प्रचार किया जा रहा है । आश्चर्य तो इस वात का है कि यह सव उस युग मे किया जा रहा है जिस युग मे आजाद के अनेक साथी जीवित है—वे साथी जिनके घर मे रह कर आजाद की स्व० माताजी श्रीमती जगरानी देवी ने आजाद के जन्म तथा वश के विषय मे प्रामाणिक वाते वताई थी । जिन सूत्रो से आजाद का प्रामाणिक जीवन-वृत्त जाना जा सका है उनमे से है—

१. आजाद के निकट के रिश्तेदार श्री मनोहरलाल त्रिवेदी जो अपनी किशोरावस्था मे ही उत्तरप्रदेश से आकर अलीराजपुर रियासत के

भावरा ग्राम मे आकर बस गए थे और अब भी वही रहकर आजाद के स्मृति-चिह्नो की रक्षा कर रहे है ।

२. आजाद के दूसरे रिश्तेदार है पं० शिवविनायक मिश्र जिनके यहाँ वाराणसी मे कुछ दिन चन्द्रशेखर आजाद रहे थे । आजाद का किशोरावस्था का एक चित्र तथा उनकी कुछ अस्थियाँ अब भी मिश्र जी के पास सुरक्षित है क्योकि स्व० श्रीमती कमला नेहरू के हस्तक्षेप से पुलिस की देख-रेख मे आजाद की अन्तिम क्रिया करने का सौभाग्य प० शिवविनायक मिश्र को ही मिला था ।

३ झाँसी निवासी साहित्य महामहोपाध्याय डॉ० भगवानदास माहौर जो आजाद के विश्वसनीय क्रान्तिकारी साथी रहे है । आजाद की माताजी ने अपने जीवन के अन्तिम दिन इन्ही माहौर जी के घर रह कर विताए थे और माताजी की अन्तिम क्रिया सम्पन्न करने का श्रेय भी माहौरजी को ही मिला ।

४ हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना के प्रमुख सैनिक तथा आजाद के परम विश्वसनीय क्रान्तिकारी साथी श्री सदाशिवराव मलकापुरकर जो आजकल झाँसी मे रह कर अध्यापकीय कार्य कर रहे है । श्री मलकापुरकर आजाद के साथ उनकी जन्मभूमि भावरा पहुँचकर उनकी माताजी से मिल आए थे और उसी विश्वास के आधार पर आजाद की शहादत के पश्चात् माताजी श्री मलकापुरकर के साथ झाँसी पहुँच गई । श्री मलकापुरकर ने श्रवणकुमार की मातृ-भक्ति को हमारे सामने सजीव कर दिया है । आजाद की माताजी को कई तीर्थ कराने का श्रेय मलकापुरकर जी को ही प्राप्त है । श्री मलकापुरकर तथा डॉ० भगवानदास माहौर भुसावल बम केस के अभियुक्त रहे है तथा जलगाँव की अदालत मे मुखबिर फणीन्द्रनाथ घोष पर गोली चलाने के अपराध मे दोनो आजीवन कारावास के दड से दडित हुए थे ।

५ आजाद के बिलकुल दाहिने हाथ तथा उनकी शहादत के कुछ समय पूर्व तक निरन्तर उनके साथ रहने वाले प्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री विश्वनाथ गगाधर वशपायन जिन्होने अपने यौवन के अमूल्य दिन जेलो की चहार दीवारी मे ही विताये है । श्री वैशंपायन भी आजाद की माता जी के निकट सम्पर्क मे रहे है और माता जी के मुख से उन्होने भी आजाद-कथा सुनी है ।

६ क्रान्तिकारियों के प्रबल समर्थक तथा सहायक श्रद्धेय पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी जिनके यहाँ कुछ दिन आजाद की माता जी रही हैं और उनके मुख से ही आजाद के प्रामाणिक जीवन वृत्त सुनने का सौभाग्य जिन्हे प्राप्त है।

७ आजाद के अन्यान्य जीवित क्रान्तिकारी साथी जो आज भी अपने प्राणो की मशाल जलाकर युग के अन्धकार से जूझ रहे हैं।

इन्ही सूत्रो से सपर्क स्थापित कर तथा व्यक्तिगत रूप से उनसे मिलकर आजाद के जीवन-वृत्त के सम्बन्ध मे जो प्रामाणिक तथ्य जुटा सका हूँ उनके आधार पर आजाद की जीवन-रेखाएँ इस प्रकार खीची जा सकती हैं—

आजाद का जन्म

आजाद का जन्म वर्तमान मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के भावरा ग्राम मे २३ जुलाई १९०६ को हुआ। उस समय भावरा अलीराजपुर रियासत की एक तहसील थी। आजाद के पिता पं० सीताराम तिवारी सवत् १९५६ के अकाल के समय अपने निवास उत्तरप्रदेश के उन्नाव जिले के बदरका ग्राम को छोड़कर पहले अलीराजपुर राज्य मे रहे और फिर भावरा मे बस गए। भावरा मे उन्होने भैसे रखकर दूध का व्यापार किया पर बीमारी से भैसें मर जाने के कारण उन्हे सरकारी बगीचे म चौकीदारी का काम करना पडा। पहले पाँच रुपये मासिक पर नियुक्ति हुई थी पर वृद्धि होते-होते वेतन की अन्तिम सीमा आठ रुपए मासिक तक जा पहुँची थी।

भावरा बस जाने पर पं० सीताराम तिवारी अपनी पत्नी श्रीमती जगरानी देवी को बदरका से भावरा ले आए। उस समय उनका ज्येष्ठ पुत्र सुखदेव भी साथ था जिसका जन्म बदरका मे ही हुआ था। भावरा बस जाने के पश्चात् तिवारी जी को एक कन्या रत्न की प्राप्ति भी हुई पर वह जीवित न रह सकी। पाँचवीं और अन्तिम सन्तान के रूप मे भावरा मे ही चन्द्रशेखर आजाद का जन्म हुआ। कुछ समय पश्चात बडे लडके सुखदेव का भावरा मे देहावसान हो गया। मृत्यु के पूर्व सुखदेव को जीवन-यापन के लिए पोस्टमैन का कार्य करना पडा था। सुखदेव की मृत्यु के पश्चात् चन्द्रशेखर आजाद ही पं० सीताराम तिवारी की एक मात्र सन्तान के रूप मे रह गए।

कुछ लोग आजाद का जन्म-स्थान उन्नाव जिले के बदरका ग्राम को मानते है। इस प्रचार की अप्रामाणिकता सिद्ध हो चुकी है। यहाँ कुछ तथ्यों पर विचार कर लेना आवश्यक है।

१. यदि आजाद का जन्म-स्थान बदरका माना जाय तो उनकी जन्म-तिथि सवत् १९५६ वि० से पूर्व की होनी चाहिए और उस हिसाब से अँग्रेजी तारीख के अनुसार उनका जन्म सन् १८९७ के पूर्व का ही ठहरेगा। इस हिसाब मे सन् १९२१ ई० मे जब उन्हे १५ बेतो की सजा दी गई थी उनकी उम्र २२ से २४ वर्ष की होनी चाहिए थी। पर सभी लोगो ने लिखा है और लोग अब भी कहते है कि आजाद की अवस्था उस समय १४ वर्ष की थी। यदि उस समय आजाद वयस्क होते तो बेतो की सजा के स्थान पर उन्हे जेल की सजा मिलती। अतः बदरका मे आजाद का जन्म होना सिद्ध नही होता।

२. वाराणसी मे १५ बेतो की सजा मिलने के पश्चात् आजाद का एक चित्र उतारा गया था। वह चित्र अब भी वाराणसी के प० शिव-विनायक मिश्र के पास सुरक्षित है और उसकी प्रामाणिकता के विषय मे किसी को सन्देह नही है। उस चित्र के अनुसार भी आजाद की अवस्था चौदह वर्ष लगती है और सिद्ध होता है कि उनका जन्म सवत् १९५६ वि० के पश्चात् ही भावरा मे हुआ था।

३ आजाद और वैशम्पायन का साथ काया-छाया जैसा ही रहा। वैसे तो आजाद अपने विषय मे कुछ नही बताते थे पर जीवन के अन्तिम दिनो मे वे वैशम्पायन जी से अपने घर के विषय मे बाते करने लगे थे। वैशम्पायन को पार्टी मे 'बच्चन' नाम दिया गया था। आजाद का ही कथन था—

"बच्चन अगर कभी तुम छूटो तो मेरी जन्म-भूमि भावरा जाकर मेरी माता जी मे अवश्य मिलना।"

४ आजाद की माता जी जब प० बनारसीदास जी चतुर्वेदी और मास्टर रुद्रनारायण मे मिली थी तो उन्हे आजाद की जन्म-भूमि भावरा ही बताई थी।

५ आजाद के निकट के सम्बन्धी श्री मनोहरलाल त्रिवेदी है जिन्होने सुख-दुख मे आजाद के परिवार का साथ दिया है। उनकी कलम से लिखी गई ये पंक्तियाँ पढ लीजिए—

"आज करीब दस वर्ष से मैं सेवा से निवृत्त होकर भावरा में ही रह रहा हूं। इस बीच में यहाँ कितने ही महानुभाव और छोटे-बड़े नेता आ चुके हैं। वे आए और आजाद के जन्म-स्थान को देखकर चले गए।

मैं आजाद की इस जन्म-कुटी को उसी हालत मे सुरक्षित रखे हुए हूं, इस आशा से कि कभी तो अमर शहीद आजाद के इस जन्म-स्थान पर उनका कोई उपयुक्त स्मारक बनेगा ही।"

६ उन्नाव जिले के ही, आजाद के अन्य सम्बन्धी पं० शिवविनायक मिश्र का कथन है—

"दूसरा पुत्र सन् १९०६ मे मध्य-प्रदेश की अलीराजपुर रियासत में भावरा ग्राम मे हुआ। यही पुत्र वीर बालक आजाद के नाम से प्रसिद्ध हुआ।.........

श्री चन्द्रशेखर आजाद के सम्बंध मे अखबारो में तथा कई पुस्तको में जो कुछ बातें निकली हैं, उनमे कई विवादास्पद हैं। अभी हाल मे तथा पहले भी कई बातें पढ़ने मे आई थीं, श्री चन्द्रशेखर आजाद के जन्म-स्थान आदि के सम्बन्ध मे। इनमे से बहुत सी बातें बिलकुल बे-बुनियाद थीं।"

७ आजाद के क्रान्तिकारी साथी डॉ० भगवानदास माहौर अपने ग्रन्थ 'यश की धरोहर' मे पृष्ठ १७२ पर लिखते हैं—

"चन्द्रशेखर आजाद का जन्म मध्यभारत के झाबुआ तहसील के ग्राम भावरा मे हुआ था। राज्यों के एकीकरण के पहले भावरा अली-राजपुर राज्य की एक तहसील था। आजाद के पिता का नाम पं० सीताराम तिवारी और माता का नाम जगरानी देवी था। आजाद अपने पिता की पाँचवीं और अन्तिम सन्तान थे। तथा उनके सभी भाई बहिन मर चुके थे। आजाद की माताजी का देहान्त २२ मार्च सन् १९५१ को झाँसी में मेरे घर पर ही हुआ। वे मेरे और भाई सदाशिव राव मलकापुरकर के साथ मेरे घर पर ही उस समय दो साल से रह रही थी और तभी उन्होंने आजाद के जन्म और बाल्य-काल की बातें बताई थीं जिन्हें मैंने नोट कर लिया था। माता जी ने बताया था कि चन्द्रशेखर का जन्म सावन सुदी दूज सोमवार को दिन के दो बजे हुआ था। संवत् माता जी को विस्मृत हो गया था।" इस तिथि और वार के हिसाब से उनका जन्म १९६३ वि० का ठहरता है।"

श्री माहौर जी ने पुराने पचांगो को देखकर आजाद की जन्म-तिथि का निश्चय किया है जो २३ जुलाई सन् १९०६ ठहरती है। उन्होने आजाद की

जन्म कुण्डली भी तैयार कराई थी जो पाठको की जानकारी के लिए यहाँ दी जा रही है—
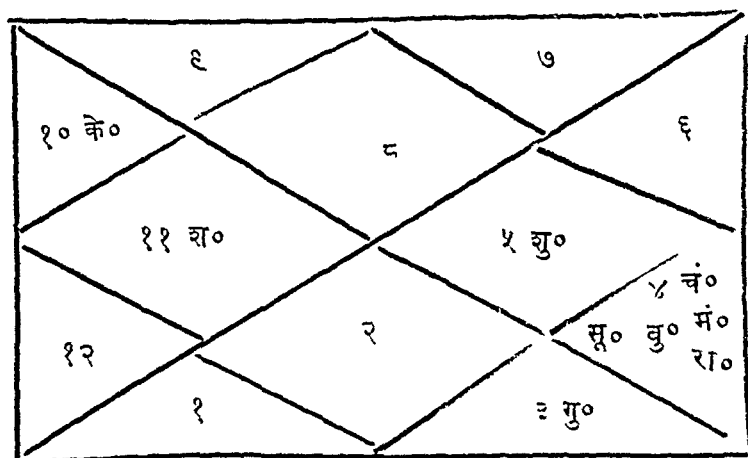
इन सब तथ्यो के आधार पर यह प्रामाणिक रूप से सिद्ध होता है कि चन्द्रशेखर आजाद का जन्म-स्थान मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले का भावरा ग्राम ही है।

वंश-परिचय

चन्द्रशेखर आजाद जिस वंश के दीपक कहलाए वह वश मान-प्रतिष्ठा मे धनी होकर भी आर्थिक अधकार मे भटकता ही रहा। आजाद के पितामह मूलत कानपुर जिले के राउत मसवानपुर के निकट भौती ग्राम के निवासी कान्यकुब्ज ब्राह्मण तिवारी वश के थे। आजाद ने अपने पूर्वजो के सु-सस्कारो को तो धरोहर के रूप मे सम्हाल कर रखा, पर कुसस्कारो को तिलांजलि दे दी। आजाद के पितामह ने दो विवाह किए थे। आजाद के पिता प० सीताराम तिवारी एक कदम और आगे बढ गए और उन्होने तीन विवाह किए। आजाद ने विवाह ही नही किया। जब मृत्यु का वरण करने उनकी साधना चल रही थी तो वे किसी सांसारिक कुमारी से क्या विवाह करते।

आजाद की मातृमही श्रीमती गोविन्दा देवी बदरका निवासी श्री देवकीनन्दन मिश्र की बुआ थी। आजाद के पिता श्री सीताराम तिवारी इन्ही गोविन्दा देवी के पुत्र थे। आजाद के पिता श्री सीताराम तिवारी अपनी विमाता श्री बेहसादेवी के साथ बदरका मे ही रहे। बडे होने पर सीतारामजी ने तीन विवाह किए। उनकी पहली पत्नी जिला उन्नाव के मोरावा ग्राम की थी। इनसे तिवारी [illegible] न भी प्राप्त किया पर उसकी मृत्यु हो

गई। सीताराम जी ने प्रथम पत्नी के रहते हुए भी दूसरा विवाह किया और वह भी जिद पर। तिवारी जी की पत्नी अपने मायके गई हुई थीं। तिवारी जी उन्हे लेने पहुँच गए। साले साहब ने बहन को भेजने से इनकार कर दिया। तिवारी जी ने अपनी पत्नी से चलने को कहा पर वे भाई की इच्छा के विरुद्ध लोक-लज्जा के भय से जाने के लिए सहमत नही हुई। तिवारी जी कुछ क्रोधी और हठी स्वभाव के थे। वे अपनी पहली पत्नी को लेने फिर नही गए और उन्होने अपना दूसरा विवाह उन्नाव जिले के ही ग्राम सिकन्दरपुर मे त्रिवेदी वश की कन्या के साथ किया। परन्तु जब थोड़े दिन पश्चात उनकी दूसरी पत्नी का स्वर्गवास हो गया तब उन्होने अपना तीसरा विवाह उन्नाव जिले के ही चन्द्रमनखेरा ग्राम मे श्री पाडे भट्टाचार्य जी के यहाँ किया। तिवारी जी की तीसरी पत्नी का नाम श्रीमती जगरानी देवी था। आजाद इन्ही जगरानी देवी के पुत्र थे।

सवत् १९५६ के व्यापक अकाल के समय श्री सीताराम तिवारी को अपना ग्राम बदरका छोडना पड़ा था। उनके एक सम्बन्धी श्री हजारीलाल अलीराजपुर पहुँच चुके थे। हजारीलाल जी ने ही सीताराम जी को अलीराजपुर बुलवा लिया था। उस समय अलीराजपुर मे बदरका निवासी प० राम लखन जी अवस्थी पुलिस दरोगा थे। श्री अवस्थी ने ही तिवारी को पुलिस मे भर्ती करा दिया था। अलीराजपुर की नौकरी छोडकर तिवारी जी भावरा जाकर बस गए थे।

संस्कारों की धरोहर

चन्द्रशेखर आजाद ने अपने स्वभाव के बहुत से गुण अपने पिता प० सीताराम जी तिवारी से प्राप्त किए। तिवारी जी साहसी, हठी, स्वाभिमानी और वचन के पक्के थे। वे न दूसरो पर जुल्म कर सकते थे और न स्वय जुल्म बर्दास्त कर सकते थे। सबसे पहले अलीराजपुर मे उन्हे पुलिस मे नौकरी मिली थी। उन्होने देखा कि पुलिस मे रहकर बिना लोगो को सताये और नोच-खसोट किए, गुजारा सभव नही है। अतः उन्होने वह नौकरी छोड़ दी। भावरा मे उन्हे एक सरकारी बगीचे मे चौकीदारी का काम मिला। भूखे भले ही बैठे रहे पर बगीचे मे से एक फल तोड कर भी कभी नही खाते थे और न किसी को खाने देते थे। एक बार इसी बात को लेकर तत्कालीन तहसीलदार से उनकी कहा सुनी हो गई। तिवारी जी बिना पैसे चुकाए किसी को फल देने के लिए तैयार नही थे। तहसीलदार साहब ने फल तुड़वा लिए तो तिवारी जी झगड़ा करने पर उतारू हो गए। इसी

जिद मे उन्होने वह नौकरी भी छोड दी पर तहसीलदार साहब उनकी ईमानदारी पर प्रसन्न हुए और अपनी भूल स्वीकार कर उन्हे पुनः नौकरी पर रख लिया। स्वय चन्द्रशेखर आजाद ने विना अनुमति एक वार वगीचे मे से एक फल तोड लिया था। इस पर तिवारी जी ने उसे बुरी तरह मारा था।

श्री मनोहरलाल त्रिवेदी आँसू भर-भर कर आजाद और उनके पिता के स्वभाव की कहानियाँ सुनाते है। उन्होने रोते-रोते सुनाया था कि किस प्रकार तिवारी जी ने अपनी पत्नी को पडौसिन के यहाँ से नमक उधार लेने पर डाँटा था और चार दिन तक सबने विना नमक का भोजन किया था। ईमानदारी और स्वाभिमान के ये ही गुण आजाद ने अपने पूज्य पिताजी से प्राप्त किए। आजाद के पिताजी का स्वर्गवास भावरा मे ही सन् १९३८ ई० मे हुआ। अव आजाद के परिवार मे कोई व्यक्ति शेष नही है। हाँ, उनकी जन्म-दात्री वह झोपडी अव भी वैसी की ही वैसी खडी प्रतीक्षा कर रही है कि कव उसके दिन फिरेगे। देश-भक्ति का ढोग रचने वाले कई व्यक्ति आते है और उस कुटिया के आगे की धूल अपने माथे पर चढाने का नाटक दिखाकर चले जाते है। लोगो की दृष्टि से ओझल होते ही उस धूल को रूमाल से पोछ डालते है। कई मे तो इतना भी नैतिक साहस नही होता कि वे कुटिया तक पहुँच सके। वहाँ पहुँचने का विचार प्रकट करके भी अपनी कार गाँव के किनारे से ही मोड ले जाते है। जब मै वहाँ पहुँचा तो एक छपा हुआ पर्चा मेरे हाथ लगा था जिसमे दो पक्तियाँ दूर से ही चमक रही थी—

शहीदो की चिताओ पर, नही लगते कही मेले,
वतन पर मिटने वालो का, नही बाकी निशां कोई।

स्पष्ट है कि ये पक्तियाँ नीचे लिखी हुई प्रसिद्ध पक्तियो को ही रूपान्तरित करके लिखी गई थी। पाठक दोनो की सत्यता पर स्वय ही विचार करले। मूल पक्तियाँ है—

शहीदों की चिताओं पर, जुड़ेंगे हर बरस मेले,
वतन पर मिटने वालो का, यही बाकी निशां होगा।

आजाद का वाल्य-काल

"बिन पद चलै, सुनै बिन काना। कर बिन कर्म करै विधि नाना" की सत्यता से पता नही आप सहमत होगे या नही पर आजाद के विषय में इस उक्ति को चरितार्थ करते हुए मैने सभी व्यक्तियो को सहमत होते देखा है। लोगो का कथन है कि आजाद सचमुच विना पैरो के घटों चला करते थे,

अर्थात् अपने शैशव मे हाथो-हाथ गाँव का घर-घर देख आते थे। जब आजाद को पैर मिले तो वे चलते नही थे, वरन् दौडते थे और जब दौड़ने योग्य हुए तो दौडते नही थे, वरन् उडते थे।

बचपन मे चन्द्रशेखर आजाद भावरा गाँव के छँटे हुए शैतानो के कमाडर-इन-चीफ थे। आदिवासी भीलो के बालको के साथ वे दिन-दिन भर घर मे गायब रहते और वनो-उपवनो मे उपद्रव-लीलाएँ किया करते थे। गाँव मे या आस-पास के गाँवो मे कही भी कोई उजाड-बिगाड हो तो वह बिना पूछे आजाद के नाम लिख लिया जाता था। कभी-कभी पिता-पुत्र मे ही ठन जाती थी। आजाद के पिताजी सरकारी बगीचे का एक फल भी किसी को नही तोडने देते थे। आजाद बिना फल खाए कैसे मानते। अपने उपद्रवी लेफ्टिनेन्ट साथ मे लिए वह कभी-कभी अँधेरे-उजाले बगीचे मे सेध लगाते और पके-पके अमरूद खाते और साथियो को खिलाते। पकड़े तो कभी जाते ही न थे। हाँ, एक बार एक बडा अमरूद खाते हुए पिताजी ने बड़ी मार भी इसलिए लगाई थी कि उतने बडे अमरूद सरकारी बगीचे के अतिरिक्त कही होते ही नही थे।

शेर के विषय मे प्रसिद्ध है कि वह कभी एक जगह टिककर नही रहता। यदि सिंह पिंजडे मे भी बन्द कर दिया जाय तो बारह कोस की मजिल वह पिंजडे मे ही घूम-घूम कर पूरी कर लेगा। चन्द्रशेखर भी शेर बच्चा होकर एक जगह टिक कर कैसे रहता। अलीराजपुर राज्य के आस-पास की छोटी-छोटी सियासतो मे भी वह अपने बाल-सखाओ के साथ सैर-सपाटे कर आता था। आज भी जोबट, थाँदला, झाबुआ, मेघनगर, पेटलावद, आम्बुआ और रानापुर के लोग उसकी साहसिक योजनाओ की कहानियाँ कहते-सुनते हैं। आजाद कभी भावरा रहते थे और कभी मनोहरलाल त्रिवेदी के साथ नौनेरा गाँव मे। बस इसी तरह उन्हे सटकने का मौका मिल जाता था और गाँव के गाँव छान डालते थे।

बाल्य-काल के खेलो मे आजाद को पेडो पर चढकर गुलाम-डडा खेलने का बहुत शौक था। गाँव के बडे-से-बडे पेड उनसे पनाह मागते थे। गाँव मे खडे हुए ताड के दो-चार वृक्ष अब भी सिर हिलाकर इस बात की हामी भरा करते है। भील-बालको के साथ तीर-कमठे लेकर निशानेबाजी का अच्छा अभ्यास बालक आजाद ने कर लिया था। उसके घर छोडकर चले जाने के बाद बहुत दिन तक उसकी कुटिया मे उसका धनुष टँगा रहा था और—

"जननी निरखत बान-धनुइयाँ" वाली उक्ति चरितार्थ होती रहती थी।

आजाद को शिकार खेलने का भी बचपन मे ही शौक लग गया था। आजाद क्रान्तिकारी जीवन मे अपने साथियो से कहा करते थे कि बचपन में उन्हे शेर का मॉस खिलाया गया था। आजाद भूठ-बोलना या गप लड़ाना जानते ही नही थे। भीतर और बाहर जो था, एक-सा था। ओरछा के जगल मे एक बार अज्ञातवास के समय साधु वेश मे उन्हे पुलिस वालो ने पकड कर पूछा था कि क्या तुम्ही आजाद हो, तो आजाद ने बिना भूठ बोले कह दिया था—

"हाँ भैया, हम आजाद नही तो क्या है। सभी साधु आजाद होते है, हम भी आजाद है। हम किसी के बाप के गुलाम थोड़े ही है। हनूमान जी की चाकरी करते है और आजाद रहते है।" पुलिस वाले साधू महाराज को छोड़कर चले गए।

हाँ, तो मै कह रहा था कि आजाद भूठ नही बोलते थे। उनका कथन कि बचपन मे उन्हे शेर का मॉस खिलाया गया था, सत्य ही है। भीलो के साथ कई बार वे शेर के शिकार मे सम्मिलित होते थे और एक-दो बार अपनी धाक जमाने के लिए कि शेर का मॉस मुझे हानि नही पहुँचा सकता, उन्होने तीख मे आकर शेर का मॉस खाया भी था, वैसे बहुत गर्म होने के कारण सामान्यत. शेर का मॉस खाया नही जाता।

आजाद की शिक्षा-दीक्षा

आजाद अक्षर, शब्द या वाक्य पढते ससार मे नही आए थे। वे तो व्यक्ति, समाज और ससार को ही पढ़ाने आए थे। समय की पाटी पर सदियो ने जो कुछ लिख दिया था, उसे आजाद ने केवल पढा ही नही था, हृदयगम भी कर लिया था। उन्होने केवल एक ही सबक पढ़ा और याद किया था। वह सबक था—

'दासता, जीवन का सबसे बडा अभिशाप है।'

इस सबक की प्रेरणा से वे जीवन भर इस अभिशाप से जूझते रहे। ब्राह्मण सस्कारो के नाते पढना और पढाना उनका काम था। उन्होने कई सबक सीखे भी—और कई सबक लोगो को सिखाए भी। देश-द्रोहियो और भ्रष्टाचारियो को उनके पास एक ही सबक था और वह था मृत्यु दण्ड। विद्याध्ययन करते समय भी आजाद ने अपने गुरु-सखा को एक सबक सिखाया था। घटना इस प्रकार है—

भावरा मे आजाद और उनके बडे भाई सुखदेव को पढाने का काम मनोहरलाल त्रिवेदी करते थे। वे आजाद के सखा और गुरु दोनो ही थे।

अवस्था मे बड़े होने के कारण और गुरु-पद प्राप्त होने के कारण उन्हे कुछ अधिकार भी प्राप्त थे। वैशम्पायन जी ने अपने ग्रन्थ 'अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद' के ३८ पृष्ठ पर लिखा है—

"मनोहरलाल जी सुखदेव और आजाद को पढ़ाते समय आवश्यकता पडने पर कभी-कभी छड़ी का उपयोग कर लेते थे। एक दिन लड़को की परीक्षा लेने के हेतु मनोहरलाल जी ने कोई शब्द गलत बता दिया। चन्द्रशेखर के बड़े भाई ने तो उसे ठीक किया, परन्तु चन्द्रशेखर ने कुछ कहने के बजाय तुरन्त बेंत उठाकर मनोहरलाल जी को दो बेंत जड़ दिए। सीताराम जी पास ही बैठे थे। वे चन्द्रशेखर को उसकी इस धृष्टता के लिए मारने लपके, परन्तु मनोहरलाल जी ने उन्हें रोक दिया। पिता जी ने क्रोध से पूछा—"तूने हाथ कैसे उठाया ?"

आजाद भी क्रोध मे थे। बोले—"हमारी गलती पर ये मुझे तथा भाई को मारते हैं, इसलिए जब उन्होने गलती की तो मैंने इन्हें मार दिया।"

चन्द्रशेखर की बात सुन वे सन्न रह गए। अपराध का दण्ड दिया ही जाना चाहिए, इस सिद्धान्त का उन्होंने न केवल बचपन मे ही पालन किया, बल्कि आजीवन इस सिद्धान्त पर वे अमल करते रहे।"

आजाद के ब्राह्मण सस्कारो ने जोर मारा। इच्छा हुई वाराणसी चलकर सस्कृत पढनी चाहिए। सुयोग भी मिल गया। बम्बई से एक व्यापारी भावरा आया करता था। लोग उसे मोती वाला कह कर पुकारते थे। आजाद ने मोती वाले के साथ दोस्ती गाँठ ली और एक दिन चुपके से घर छोड़कर उसके साथ बम्बई भाग गए। कुछ लोगो का कहना है कि वे पहले वाराणसी गए थे। तथ्यो के अन्वीक्षण से मै इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि पहले वे बम्बई गये थे और वहाँ मन न लगने के कारण वही से वाराणसी जा पहुँचे थे। वाराणसी पहुँचकर उन्होने अपने माता-पिता को सूचना दे दी थी। जेब खर्च के लिए पिताजी कुछ रुपए भेज दिया करते थे। फरारी की अवस्था मे वे फिर एक बार बम्बई गए थे और एक जहाजी कम्पनी मे कुछ दिन काम भी किया था।

वाराणसी मे रहकर आजाद सस्कृत विद्यापीठ मे पढने लगे। उस समय इस विद्या-पीठ मे उनके साथ ही मन्मथनाथ गुप्त भी थे। आगे चलकर दोनो ही प्रसिद्ध क्रान्तिकारी हुए।

भला शेरो को भी किसी ने पढ़ाया है। वाराणसी मे आजाद संस्कृत पढने का नाटक खेलते रहे। डा० भगवानदास माहौर कहा करते है कि आजाद को अपने जीवन मे दो-ढाई श्लोको से अधिक याद नही हो सके थे। ये श्लोक भी ऐसे याद थे कि पहला चरण किसी एक श्लोक का तो दूसरा और तीसरा किसी अन्य श्लोक के। आजादी का पाठ घोंटने वाला व्यक्ति सस्कृत के श्लोको से कब तक माथा रगड़ता। आजाद अपने दल के सबसे कम पढे लिखे व्यक्ति थे। मैंने स्वय आजाद के हस्ताक्षरो मे लिखा हुआ हिन्दी का एक पत्र प० शिव विनायक मिश्र वैद्य के पास देखा है। दो-तीन वाक्यो के उस पत्र मे भी आजाद ने दो-तीन गलतियाँ की है। हाँ, आजाद अपने कर्तव्य मे कभी गलती नही करते थे।

आजाद की शिक्षा-दीक्षा और पठन-पाठन रुचि के विषय मे उनके क्रान्तिकारी साथी एव महान लेखक यशपाल के विचार पठनीय है—

"आजाद के छोटे से जीवन में कभी स्कूली विद्या में सर खपाने की फुर्सत के लिए समय आया ही नहीं। चौदह-पन्द्रह वर्ष की आयु में वे विद्याभ्यास के लिए फुर्सत न पा सत्याग्रह आन्दोलन मे बेंतो की सजा पा रहे थे।

आजाद के दिमाग मे विद्रोह की जैसी प्रचंड आग जल रही थी, उसमे विद्याभ्यास हो ही नही सकता था, और अगर उन्हें पुस्तको का पण्डित बनना था, तो वह 'आजाद' नही बन सकते थे।

यह बात असङ्गत सी मालूम पड़ती है कि आजाद अँग्रेजी नही जानते थे, पुस्तकें पढ़ने का उन्हें शौक नही था। उन्हें कभी पुस्तके पढ़ते नहीं देखा तो फिर विचारो का विकास कैसे हुआ? आजाद खुद नही पढ़ते थे, अँग्रेजी नहीं जानते थे। परन्तु लेनिन के लेखो का एक पूर्ण संग्रह मैने उसके पास देखा था, जिसे कई दफा मै भी पढ़ने लगता था और दल के दूसरे लोग भी पढ़ते थे। किसी बहुत अच्छी किताब की चर्चा सुनते ही, वे उसे खरीद लेने के लिए तैयार हो जाते थे। इस बात का उन्हें बहुत ख्याल रहता था कि दल के लोग सिद्धान्तों तथा तत्सम्बन्धी पुस्तके पढ़ते रहा करें और वह उन पुस्तको के विषय मे चर्चा भी करते रहते थे।

हम यह भूल जाते है कि मसीह, मुहम्मद को जाने दीजिए, हमारे अकवर, हैदरअली, शिवाजी, राणा और रणजीतसिंह में से

कोई भी अक्षर-विद्या से परिचित नहीं था, फिर भी इनमें से किसी के भी चातुर्य और राजनीति-ज्ञान के बारे मे शक करने का साहस बड़े से बड़े कलमबाज को भी नही हो सकता।

बिना किसी दिन चाणक्य का अर्थशास्त्र, सुकरात की नीति और ऑक्सफोर्ड युनीवर्सिटी प्रेस की किताबें पढ़े ही अपनी परिस्थितियों से इन लोगो ने राज चलाने की लियाकत हासिल कर ली थी। इसी प्रकार आजाद ने भी अपने सीमित क्षेत्र में सेना-संचालन प्रबन्ध और अपने उद्देश्य और ध्येय को समझने लायक काबलियत हासिल कर ली थी।"

इस प्रकार सभी लोग इस विचार से सहमत है कि यद्यपि चन्द्रशेखर आजाद का पुस्तकीय ज्ञान अधिक नही था पर जिसे हम शिक्षा कहते है, उसकी कमी उनमे न थी। बात की तह तक पहुँचकर उसे पूरी तरह जान लेने की क्षमता उनमे बहुत थी। उनमे प्रतिभा थी और उनकी प्रतिभा दार्शनिक न होकर प्रायोगिक थी। परिस्थितियो से सटकर उनसे समायोजन करने की उनमे विलक्षण शक्ति थी। यह शिक्षा नही तो और क्या है ?

आजाद के विश्वसनीय साथी श्री सुरेन्द्र शर्मा के मुँह से सुनिए—

"आजाद की शिक्षा सम्बन्धी योग्यता बहुत साधारण ही थी, किन्तु प्रकृति और देश की तत्कालीन परिस्थिति ने उन्हे अनुभव के आधार पर मनोविज्ञान का मर्मज्ञ और व्यावहारिक रूप से मानव का पारखी बना दिया था। उन्हे धोखा देना लोहे के चने चबाने के समान था।

आजाद को पंजाबी, राजस्थानी, बुन्देलखण्डी, ब्रजभाषा आदि अनेक बोलियों का अच्छा ज्ञान था। इन बोलियो को समझने और बोलने की अच्छी क्षमता थी।"

आजाद और कला-कौशल

शिक्षा के व्यापक अर्थ मे कला-कौशल का समावेश भी होता है। जीवन का प्रत्येक अनुभव, हमारे ज्ञान का अग बन जाता है। अपने हाथ मे वस्तुओ को बनाना और बनी हुई वस्तुओ का प्रयोग करने की योग्यता रखना हमारे कौशल का द्योतक है। ये हस्त-कौशल तथा जीवनोपयोगी तथा ललित कलाओ का ज्ञान भी शिक्षा का ही स्वरूप माना जाता है। इस अर्थ मे भी आजाद कला-कौशल के धनी थे।

अपने बाल्य-काल मे बॉस के अच्छे धनुष बनाने की कला आजाद को आती थी। रहने के लिए झोपड़ी बनाने की कला तो उन्हे स्वानुभव से सीखनी ही पडी थी। यद्यपि वे पाक-विद्या मे निपुण नही थे पर काम-चलाऊ भोजन बना ही लेते थे।

किसी कला या कौशल के सैद्धान्तिक ज्ञान की अपेक्षा उसके व्यावहारिक और प्रायोगिक पक्ष को आजाद पूरी तरह हृदयंगम कर लेते थे। अधिक पढ़े लिखे न होने पर भी आजाद बम बनाने की कला मे माहिर हो गए थे। आगरा मे उन्होने बम का कारखाना खोला था। ग्वालियर के जनकगज मुहल्ले मे तो आजाद बम के मसाले अपने हाथ से ही बनाते थे। केवल एक लगोट पहन कर बम का मसाला बनाने मे भिड़ जाते थे। जल जाने के भय से ही कपड़े उतार दिया करते थे। आवश्यकता की वस्तुओ को बना लेना आजाद जीवन के लिए बहुत उपयोगी समझते थे।

अपनी फरारी की दशा मे आजाद ने झॉसी मे रह कर बुन्देलखण्ड मोटर कम्पनी मे मोटर चलाने की कला भी अच्छी तरह सीख ली थी। यद्यपि मोटर चलाने की कला सीखने मे उन्हे अपने अँगूठे की एक हड्डी तुड़वा कर कीमत अदा करनी पड़ी थी, पर इस ज्ञान के लिए वे इसे बड़ी कीमत नही समझते थे। कुशलता पूर्वक साइकिल चला लेने और उसे ठीक कर लेने की कला मे भी वे पारगत थे। तेज साइकिल चलाकर अन्य साइकल सवारों से आगे निकल जाने मे उन्हे बडा मजा आता था। झॉसी मे वे यह सब किया करते थे।

आजाद को जिस कौशल से सबसे अधिक प्रेम था, वह था अपने हथियारो की साज-सम्हाल। वे अपने हथियारो को नित्य साफ करते रहते थे ताकि समय पडने पर वे दगा न दे जॉय। अपने दल के सभी व्यक्तियो को वे इस कौशल का ज्ञान दिया करते थे। लाहौर मे महान क्रान्तिकारी भगवतीचरण बोहरा के शहीद हो जाने के पश्चात् बहावलपुर रोड वाली कोठी मे रहकर वे भगवती भाई के छोटे बालक शचीन्द्र को हथियारों के खेल खिलाते रहते थे। नया ज्ञान सीखने और सिखाने के लिए आजाद सदैव तत्पर रहा करते थे।

आजाद की जीवन-धाराएँ

चन्द्रशेखर आजाद के जीवन की उपमा एक पहाड़ी धारा से दी जा सकती है जो कभी प्रपात के रूप मे, कभी प्रचण्ड धारा के रूप मे घड़घड़ाती हुई, पत्थरो को धकेलती और चकनाचूर करती हुई और किनारो को काटती हुई आगे बढती चलती है। आजाद ने जब से होश सम्हाला, इसी प्रकार को

प्रचण्डता से जीते हुए चले गए और उसी प्रचण्डता से मृत्यु का आलिगन भी कर लिया। एक अत्यन्त सामान्य, रूढ़िग्रस्त परिवार मे उत्पन्न होकर भी विश्व-विश्रुत पद प्राप्त कर लेना उन्ही का काम था। आजाद की जीवन-धारा मे कई मोड आए पर वे सब मोड कटीले और असाधारण थे। सामान्य तो वहाँ कुछ था ही नही।

पहली और अन्तिम नौकरी

भावरा छोडने के पहले आजाद को अपनी किशोरावस्था मे ही अपने निर्धन परिवार के खातिर नौकरी करनी पड़ी। तहसीलदार साहब की कृपा से चन्द्रशेखर भृत्य के कार्य से तो बच ही जाते थे पर साहब-बाबुओ को मुजरा अवश्य झुकाना पडता था। आजाद को यह सब अखर जाता था। वह जान-बूझकर नौकरी मे असावधानी इसलिए करता था कि मुजरा झुकाने से बच जाय और तग आकर नौकरी ही उसे छोड दे, पर ऐसा हुआ नही। आजाद को स्वय तग होकर नौकरी छोड़कर घर से भाग जाना पड़ा। मोती वाले सेठ के साथ बम्बई पहुँच कर, वहाँ से वाराणसी जाकर ही उन्हे चैन पड़ा।

वाराणसी मे

वाराणसी पहुँच कर चन्द्रशेखर आजाद काशी-विद्यापीठ मे सस्कृत पढ़ने लगे। इस विद्यापीठ मे उस समय मन्मथनाथ गुप्त और प्रणवेश चटर्जी भी पढ़ते थे। ब्राह्मण बालक होने के नाते चन्द्रशेखर को जीवन-यापन की कुछ कठिनाई नही पडी। कुछ तो घर से आ जाता था और कुछ प्रबन्ध इधर-उधर से हो जाता था। छात्रावास मे रहने का प्रबन्ध हो गया था। कुछ दिन कम मूल्य पर क्षेत्र का भोजन किया पर इस प्रकार के जीवन से उसे वितृष्णा हो गई।

वाराणसी मे आजाद का परिचय प० शिवविनायक मिश्र वैद्य से था। श्री मिश्र उन्नाव जिले के ही रहने वाले थे और आजाद के फूफा होते थे। उनके यहाँ भी आजाद का आना-जाना रहता था।

सन् १९२१ मे जब असहयोग आन्दोलन छिडा तो आजाद उसमे कूद पडे। गवर्नमेन्ट सस्कृत कॉलेज मे धरना देते हुए पकड़े गए। मजिस्ट्रेट ने नाम-धाम पूछा तो अपना नाम आजाद, पिता का नाम स्वाधीन और घर जेलखाना बताया। इस कथन मे एक ही बात असत्य निकली। आजाद कभी जेल नही गए। मजिस्ट्रेट खरेघाट अपनी नृशसता के लिए कुख्यात था।

आजाद को पन्द्रह बेतो का दण्ड सुना दिया गया। बडी वीरता से आजाद ने बेत खाए। यही से आजाद लोगो की आँखों का तारा बन गया। ज्ञानवापी मे उसका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। धीरे-धीरे आजाद क्रान्तिकारियो के सपर्क मे आया और उनके दल मे सम्मिलित हो गया।

काकोरी षडयंत्र

आजाद के क्रान्तिकारी जीवन का प्रथम उल्लेखनीय साहसिक अभियान काकोरी षडयंत्र ही था। यद्यपि इस अभियान के नेता प० रामप्रसाद विस्मिल थे पर कम उम्र होने पर भी आजाद की दिलेरी पर उन्हे पूरा भरोसा था। जो काम उन्हे दिया गया उसे उन्होंने बड़ी वीरता मे पूरा किया। इस दल ने ९ अगस्त १९२५ को सहारनपुर से लखनऊ जाने वाली गाडी को काकोरी के निकट रोक कर उसमे का अँग्रेजी खजाना लूट लिया और नौ-दो-ग्यारह हो गए। बाद मे कई व्यक्ति पकड़े गए और फॉसी तथा अन्य कठोर दण्ड प्राप्त किए पर चन्द्रशेखर आजाद अन्त तक हाथ नही आए।

बम्बई मे

काकोरी षडयत्र के पश्चात चन्द्रशेखर आजाद एक बार फिर बम्बई गए और इस बार वहाँ कुछ अधिक दिन रहे। एक जहाजी कंपनी मे रग-रोगन करने की नौकरी भी कर ली पर यहाँ उनका मन नही लगा। जीवन के लिए कोई कार्यक्रम था ही नही। कभी सिनेमा देख आते थे तो कभी-सैर-सपाटे का आनन्द लेते थे। सस्ते से कपडे खरीद कर एक हफ्ते उन्हे पहनते और फिर फेक कर नए खरीद लेते थे। जो लोग जहाज मे से दूध के डिब्बे चुराते थे, कभी-कभी उस अभियान मे भी सम्मिलित होकर दूध का आनन्द लेते थे। इस सब के पीछे उनकी साहसिकता की भावना ही प्रमुख रहती थी। वैसे मजदूरो के साथ रह कर भी उन्होने कोई दुर्व्यसन गले नही बाँधा। आजाद बम्बई मे जीवन-यापन करने नही गए थे। कुछ दिन शासन की दृष्टि से ओझल रहना ही उनका उद्देश्य था अत. कुछ दिन बम्बई रहकर वे वहाँ से खिसक गए।

झाँसी मे

झाँसी पहुँचने के आजाद के दो उद्देश्य थे। एक तो यह कि यहाँ रहकर वे उत्तर प्रदेश के छिन्न-भिन्न क्रान्तिकारियो के साथ फिर से सूत्र स्थापित कर सकते थे, दूसरे यह कि बुन्देलखण्ड की भूमि का निरीक्षण वे छापामार युद्ध के दृष्टिकोण से करना चाहते थे। जिस समय आजाद झाँसी मे रह रहे थे उस

समय उन्हें पुलिस वड़े जोरो से खोज रही थी और उन्हे पकड़ने के लिए वड़े इनाम की घोषणा भी हो चुकी थी। शचीन्द्र नाथ वख्शी के माध्यम से आजाद ने झाँसी मे अपना अड्डा जमाया। वहाँ उन्होंने चुने हुए नवयुवकों को अपने दल मे दीक्षित कर लिया। ये थे विश्वनाथ गगाधर वैशम्पायन, सदाशिवराव मलकापुरकर तथा भगवानदास माहौर। झाँसी मे रहकर आजाद ने मोटर चलाना सीख लिया। बिखरे हुए क्रान्ति-सूत्रो को जोड़ने में भी आजाद को सफलता मिली।

ओरछा मे

झाँसी से खिसक कर आजाद ओरछा जा पहुँचे। उस समय ओरक्षा एक रियासत थी। ओरछा क निकट ही सातार नाम की एक छोटी नदी वहती है। इसी सातार सरिता के किनारे आजाद एक झोपड़ी मे रहकर अज्ञात-वास करने लगे। यहा वे ब्रह्मचारी हरीशकर के नाम से प्रसिद्ध थे। क्रान्ति-सूत्रो के जोडने का काम यहाँ भी उन्होने नही छोडा। आजाद ने अपने हाथ से एक कुआ भी खोदा था जो कुटिया के निकट अब भी उनकी स्मृति-चिन्ह के रूप मे सुरक्षित है। हनुमान भक्त आजाद यहाँ डड पेलते और मस्त रहते थे। पास ही के गाँव ढिमरपुरा मे नम्बरदार के घर आवक-जावक हो गई थी। उनके साथ कभी-कभी शिकार का शौक भी पूरा हो जाता था।

ओरछा नरेश श्री वीरसिह देव की ओर से भी आजाद को सुरक्षा का आश्वासन मिल चुका था।

पास ही के गाँव मे डाका पडने और एक व्यक्ति की हत्या हो जाने के कारण पुलिस की आमद-रफ्त अधिक वढ गई। सुरक्षा की दृष्टि से आजाद को ओरछा छोड देना पडा। कुछ दिन टीकमगढ, पन्ना और छतरपुर मे जगलो मे भी घूमे पर केवल घूमना ही तो उनका ध्येय नही था। क्रान्ति-सूत्र जोड़ चुकने के वाद आजाद ने कानपुर और आगरा को अपना कार्य-क्षेत्र वनाया।

कानपुर मे वम का कारखाना

आजाद कानपुर पहले भी कई वार देख चुके थे और अपना क्रातिकारी मडल स्थापित कर चुके थे। सरदार भगतसिंह, वटुकेश्वर दत्त, विजय कुमार सिन्हा, शिव वर्मा, कुन्दनलाल गुप्त, जयदेव कपूर, शालिगराम शुक्ल तथा सुरेन्द्र पाडे आदि क्रान्तिकारियो से उनके अच्छे सम्वन्ध स्थापित हो चुके थे। श्री गणेशशकर विद्यार्थी जी तो उनके प्रशसक और सहायकों मे से थे ही।

कानपुर मे आजाद ने एक बम के कारखाने का सचालन किया । इस कारखाने मे दिन मे तो जूते के स्टार ढालने का काम किया जाता था और रात को बम के खोल ढाले जाते थे । बम का मसाला ग्वालियर के कारखाने से तैयार होकर आता था । कानपुर मे रहकर आजाद ने युवको का अच्छा सगठन तैयार कर लिया था ।

आगरा में बम का कारखाना

आगरा मे भी आजाद ने बम का एक बडा कारखाना स्थापित कर लिया था । भगतसिंह के साथियो के अतिरिक्त झाँसी तथा कानपुर के साथी भी इस बम के कारखाने मे काम करते थे । राजगुरु भी इनके दल के सदस्य हो चुके थे ।

आगरा मे रहकर आजाद और भगतसिह की एक बडी योजना यह बनी थी कि काकोरी-केस के अभियुक्त महान् क्रान्तिकारी नेता श्री योगेशचन्द्र चटर्जी को जेल से छुड़ाया जाय । किन्ही विवशताओ के कारण यह योजना पूरी नही हो सकी । आगरा मे रह कर आजाद दिल्ली के क्रान्तिकारियो के साथ सपर्क बनाए हुए थे ।

लाहौर में

दिल्ली मे निर्मित हुई क्रान्तिकारियो की केन्द्रीय समिति मे आजाद को हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना का कमाडर-इन-चीफ नियुक्त किया जा चुका था । इसी समय एक साहसिक कार्य के लिए आजाद को लाहौर ने निमंत्रण भेज दिया ।

लाहौर में साइमन कमीशन का बहिष्कार करते हुए पजाब केसरी लाला लाजपतराय सान्डर्स के डंडो के घातक प्रहारो के फलस्वरूप शहीद हो चुके थे । भगतसिंह के अनुरोध पर केन्द्रीय समिति ने निश्चय किया कि लालाजी के हत्यारे को मृत्यु-दण्ड दिया जाय । आजाद को लाहौर बुलाया गया । आजाद ने अभियान का संचालन किया और उनके नेतृत्व मे सान्डर्स को गोली से उडाया गया । आजाद सुरक्षित रूप से फिर दिल्ली और उत्तर-प्रदेश मे कार्य करने लगे ।

दिल्ली के कार्य

आजाद दिल्ली मे निरन्तर आते जाते रहते थे और यहाँ के क्रान्ति-सूत्र भी अपने हाथो में लिए हुए थे । यह कहा जा चुका है कि कोई भी साहसिक अभियान हो, उसकी योजना आजाद ही बनाते थे और जब तक

उन्हें पूर्ण सतोष नही हो जाता था, तब तक एक्शन नही लिया जाता था, दिल्ली मे भी एक्शन का एक अवसर उपस्थित हो गया ।

८ अप्रेल सन् १९२९ को दिल्ली असेम्बली मे सरदार भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने जो बम के धडाके किए, उस योजना का संयोजन और सचालन आजाद ने ही किया था । पहले ही असेम्बली मे जाकर वे सारी स्थिति का निरीक्षण कर आए थे । उन्होने इस बात की भी तैयारी कर रखी थी कि भगतसिंह और दत्त को बम-विस्फोट के पश्चात् सुरक्षित लाया जा सके, पर दल के अन्तिम निर्णय के अनुसार यही निश्चित हुआ था कि बम विस्फोट करके दोनो साथी आत्म-समर्पण कर दे । यह योजना अत्यन्त सफल रही और बम के धडाको से शासन के बहरे कान खुल गए ।

दिल्ली मे आजाद का दूसरा उल्लेखनीय कार्य था एक बडी बम-फैक्ट्री का सचालन । इस फैक्ट्री के सहयोगियो मे सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन, अज्ञेय, यशपाल, प्रकाशवती, गिरवरसिंह और कैलाशपति आदि क्रान्तिकारी साथी थे । फैक्ट्री का नाम "दि हिमालयन ट्वायलेट्स" रखा गया था, क्योकि उसमे सुगधित साबुन तथा प्रसाधन की अन्य वस्तुओ का निर्माण होता है, पर वास्तव मे उसमे बम बनाए जाते थे । इस कारखाने मे नाइट्रोग्लीसरीन, पिक्रो क्लोरीन तथा गन-कॉटन आदि वस्तुओ का निर्माण होता था । बाद मे यह फैक्ट्री भी पकडी गई पर आजाद पुलिस के हाथ नही लगे ।

प्रयाग की रक्त-सरस्वती

प्रयाग भी चन्द्रशेखर आजाद का अच्छा-खासा कार्यक्षेत्र रहा है । प० जवाहरलाल नेहरू से उन्होने यही भेट की थी । आजाद के जीवन की प्रयाग से सम्बन्धित सब से प्रमुख घटना है पुलिस के साथ उनका युद्ध और आत्म-बलिदान । आजाद दल के लिए अर्थ-व्यवस्था की कोई गुत्थी सुलझाने के लिए प्रयाग आए हुए थे । वे अलफ्रेड पार्क मे सुखदेवराज के साथ बैठकर कुछ योजना बना रहे थे कि उन्ही के एक क्रान्तिकारी साथी वीरभद्र तिवारी ने पुलिस को उनका भेद दे दिया । पुलिस ने तीन ओर से उन्हे घेर लिया । जमकर युद्ध हुआ । आजाद अकेले एक तरफ और दूसरी ओर सज्जित सैन्य-दल, पर आजाद ने उनके छक्के छुडा दिए । आजाद का साथी सुखदेवराज भी भाग चुका था । उसकी सफाई है कि आजाद ने ही उससे भाग जाने को कहा था । इस युद्ध मे आजाद ने सी० आई० डी० सुपरिन्टेडेन्ट श्री नाट बावर तथा इन्सपेक्टर श्री विश्वेश्वरसिंह को बुरी तरह घायल किया था । अन्त मे

एक ही गोली शेष बच रहने के कारण उन्होने अपनी कनपटी मे उसे मारकर आत्म-बलिदान का गौरव प्राप्त कर लिया।

२७ फरवरी सन् १९३१ ई० को क्रान्ति-गगन का यह धूमकेतु अस्त हो गया। आजादी का यह दीवाना आजाद मातृभूमि का अभिषेक अपने रक्त से करके अमर शहीदो की पंक्ति मे जा बैठा।

आजाद का जीवन-दर्शन

जीवन के प्रति आजाद का दृष्टिकोण तटस्थ प्रेक्षक का दृष्टिकोण नही था। ये जिन्दगी को जैसे-तैसे धकेलने वाले सिद्धान्त के घोर विरोधी थे। जीवन के प्रति दो दृष्टिकोण माने गए है—(१) कुछ लोग इसलिए जीते है कि खाएँ, (२) कुछ लोग इसलिए खाते है कि जिएँ। आजाद दूसरे सिद्धान्त को मानने वाले व्यक्ति थे। वे जीवन को केवल मौज-मजे उडाने का साधन नही मानते थे वरन् वे जीवन को सघर्ष मानकर चलने वाले साधक थे। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण घोर सघर्ष मे बीता। जब अपने घर रहे तो भूख और गरीबी से सघर्ष किया। जब उनमे सामाजिक चेतना आई तो उन्होने रूढिवाद एव अध विश्वास के साथ सघर्ष किया और जब उनकी राजनीतिक चेतना का विकास हुआ तो उन्होंने साम्राज्यवाद की दानवी शक्तियों—दासता, दमन, अनय और अत्याचारो के विरुद्ध संघर्ष किया। वे साधनहीन होकर भी ऐसे साम्राज्य से टकराए जिसके राज्य मे कभी सूरज नही डूबता था। यदि नेपोलियन चलते-चलते सेना बना सकता था तो आजाद भी किसी नेपोलियन से कम नही थे। वे जहाँ जाते विश्वस्त साथियो के ऐसे दल का निर्माण कर लेते जो उनके एक इशारे पर मरने-मारने को तैयार रहते थे।

जीवन के प्रति आजाद न्यूनतम आवश्यकताओ के सिद्धान्त मे विश्वास रखने वाले व्यक्ति थे। उनकी अपनी कुछ आवश्यकताएँ थी ही नही। शरीर के इजिन को चालू रखने के लिए रूखा-सूखा जो कुछ भी भोजन मिल जाये, उसे पर्याप्त समझते थे। यह कहा ही जा चुका है कि आजाद खाने के लिए नही जीते थे, वरन् जीने के लिए खाते थे। उनका भोजन बहुत ही सादा होता था। यह मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त है कि हम अपने अभावों की क्षति-पूर्ति करना चाहते है। यदि किसी को बचपन मे अच्छा खाने-पहनने को नही मिल पाता तो वह यौवन के दिनों मे इस अभाव की पूर्ति करता है, जब वह ऐसा करने के योग्य हो जाता है। आजाद इस सिद्धान्त के अपवाद थे। क्रान्तिकारी

जीवन मे हजारो रुपए गाँठ मे बँधे रहने पर भी वे अपने ऊपर अनावश्यक रूप से एक पाई भी खर्च नही करते थे। आजाद का सर्वोत्तम भोजन खिचडी या दलिया होता था जिसके बनाने मे कोई खिट-खिट न करनी पडे। कुछ नहीं मिला तो भुने हुए चने ही चबा कर गुजर कर ली। आजाद जब झाँसी मे रहते थे तो उनके साथी अपने घरो से अपने भोजन मे से रोटियाँ चुराकर लाते और आजाद को देते थे। आजाद उन रूखी-सूखी रोटियो को मोहन-भोग समझ कर खाते थे और कभी मन पर मलाल नही आता था। उनके साथियो को यह सब बुरा लगता पर आजाद उनका प्रबोधन कर देते कि इस जीवन मे ऐसे ही चलता है।

वस्त्रो के विषय मे भी आजाद को तन ढकने के अतिरिक्त कोई लगाव नही था। उनके वस्त्रो में धोती, कुर्ता और कोट की गणना होती थी। परिधान मे कोई तडक-भडक नही, अत्यन्त साधारण गाढे के। कोट इसलिए पहनते थे कि उसमे 'चीज' (पिस्तौल) रखने की सुविधा रहती थी। स्थूल काय शरीर पर कोट होने के कारण उन्हे लोग लाला समझते थे, क्रातिकारी नही। आजाद चाहते भी यही थे। आजाद के परिधान के विषय में महान क्रान्तिकारिणी श्रीमती दुर्गा देवी वोहरा (दुर्गा भाभी) के विचार सुनिए—

"यदि उसके कपड़े फटे है या मैले हैं, और किसी मित्र ने उन्हें धोती, कुर्ता दे दिया, तो वे पुराने कपड़े वही छोडकर चल देते थे, पर कोट चाहे मैला या फटा हो, उसे नही बदलते थे।" उनका अपना कोई बिस्तर भी न था। खाने के समय ऐसा कभी नहीं हुआ कि दूसरों की चिन्ता किए बिना आजाद स्वयं खा चुके हो। यह बातें यो तो बड़ी ही साधारण और छोटी है, किन्तु वही मनुष्य के चरित्र का सच्चा चित्रण है।

स्वाधीनता का यह 'पागल पुजारी अपने कर्तव्य के प्रति वज्र के समान कठोर था। अपने प्रति सर्वथा विरक्त और दल के एक-एक व्यक्ति के लिए सहृदय।"

आजाद की रुचियाँ

क्रान्तिकारी किसी कर्मयोगी से कम नही होता। अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते रहने के लिए निरन्तर कठोर कर्म-साधना और इच्छाओ पर विजय, ये कर्मयोगी के प्रमुख लक्षण होते है। इस कसौटी पर आजाद खरे उतरते है। वे तो दूसरे क्रान्तिकारियो की अपेक्षा भी अपनी कुछ निजी विशेषताएँ रखते

थे । इस बात पर चर्चा की ही जा चुकी है कि आजाद रहन-सहन और खान-पान के मामले मे एक दम सामान्य थे । क्रान्तिकारी जीवन मे सुख, वैभव और ऐश्वर्य सम्बन्धी रुचियों का प्रश्न ही नही उठता । आजाद को व्यसन कोई छू नही गया था । फिर भी उनकी कुछ रुचियाँ थी और ये रुचियाँ उनके क्रान्तिकारी जीवन को प्रसाधित करने वाली थीं ।

आजाद की सबसे बडी रुचि थी निशानेबाजी । इस रुचि के पीछे वे दीवाने रहते थे । अपने बचपन मे वे तीर-कमान के अभ्यास से अच्छे निशाने बाज बन गए थे । बाँसो के झुरमुट मे छिपकर वे कई बार शेरो से छेड-छाड किया करते थे । बाँसो के झुरमुट इतने घने होते थे कि उसके अन्दर शेर घुस ही नही सकता था । आजाद बाँसो के डठलो पर पैर रखकर झुरमुट मे उतर जाते थे और भील-भिलाने लोग हाँका करते हुए शेर को उधर से निकालते थे । आजाद अपने किले मे से उस पर बाण-वर्षा करते थे । इस प्रकार उन्होने दो-एक शेर मारे भी थे । कुछ घायल होकर भागते थे । लोग विश्वास कदाचित ही करे कि एक किशोर-बालक का इतना साहस कैसे हो सकता है पर आजाद तथा अन्य भील-बालको को इस तरह के शिकार खेल ही होते थे । कभी-कभी तो जगली जानवरो को बिना किसी मोर्चा बन्दी के ही ललकारा जाता था । आजाद के तीर के सही निशाने का उल्लेख श्री मन्मथनाथ गुप्त ने "भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास" मे भी किया है । उन्ही के शब्दो मे पढिए—

> **"एक कहानी है कि भीलों में एक बार एक बदचलन आदमी को तीर मार कर सजा दी जा रही थी तो बालक चन्द्रशेखर भी वहाँ पहुँचे, और भीलों के रिवाज के अनुसार उन्हे भी तीर मारने के लिए कहा गया । उनके तीर तो अचूक बैठे और उस दोषी व्यक्ति की आँखों में लगे । नतीजा यह हुआ कि उसकी आँख फूट गई । भीलों के अनुसार तो इस बात मे कोई बुराई नही थी, पर उनके चाचा ने जो यह बात सुनी तो उन्हे फिर काशी भेज दिया गया जिससे कि कम से कम उन भीलों का साथ तो छूटे ।"**

बात यह है कि बालक आजाद ने भील की उसी आँख को निशाना बनाया था जिसका दुरुपयोग उसने एक युवती के प्रति किया था । बाल्य काल से ही अपराधी के लिए दड का विधान उनके विचारो मे रहता था । इसी प्रकार की एक घटना का उल्लेख श्रीमती दुर्गादेवी वोहरा ने किया है जिसका वर्णन आगे किया जायगा ।

क्रान्तिकरी जीवन मे तीर-कमान की निशानेवाजी पिस्तौल की निशानेवाजी मे वदल गई। उनकी गोली से सधा हुआ निशाना लगता था। एक लोग को भी वे पिस्तोल की गोली से उडा देते थे। ओरछा, ढिमरपुरा और खनियाधाने के ठाकुरो के साथ कई वार उनकी तीख नोक हो जाती थी पर निशानेवाजी मे कभी उन्हे लज्जित नही होना पडा। ओरछा राज्य के वन विभाग के अधीक्षक स्व० श्री हरवलसिह जी ने शिकार का एक सस्मरण लिखा है—

"एक वार हम जंगली सुअरो के शिकार के लिए ओरछा के जंगलों में जाने वाले थे कि लंगोटी वाँधे हुए हृष्ट-पुष्ट साधुजी ने हमसे कहा —"दीवान साहव, हमको भी शिकार में साथ लेते चलिए।" हमने उनसे कहा, "पुजारीजी, आप हमारे साथ चल कर क्या करेंगे?" उन साधु जी ने कहा—'हमें अगर आप एक वन्दूक दे दें तो हम भी अपने भाग्य को अजमा देखेंगे।" मुझे साधु जी की इस वात पर हँसी आ गई और मजाक-मजाक में मैंने उन्हें एक वन्दूक देदी और अपने साथ ले लिया। हम लोग शिकार के लिए अलग-अलग जगहो पर वैठ गए और दिल्लगी के लिए साधु जी को सवसे दूर विठला दिया। एक मजबूत अकेला (जंगली इक्का) सुअर जो वहुत खतरनाक होता है) निकला। उस पर मैंने और मेरे साथियों ने गोलियाँ चलाईं, पर वे निशाने से दूर चली गईं। इतने मे हमने क्या देखा कि साधु जी की एक गोली से वह भागता हुआ सुअर धराशायी हो गया। जव शिकारी पार्टी जंगल से लौट रही थी तो मैने साधु जी के पास अकेले मे जाकर पूछा—"आप कोरमकोर साधु तो नहीं है। अपना भेद हमें वताइए।" साधू जी ने कहा, "भेद की कोई वात हो हम वतलावें, हम तो मन्दिर के पुजारी है।"

कुछ दिन वाद जव साधु जी को हरवलसिह जी पर पक्का विश्वास हो गया तो उन्होने अपना भेद उन्हे वता भी दिया। अव तो उन्हे निशानेवाजी के अभ्यास के लिए और भी सुविधा हो गई। आजाद के इस शौक का उल्लेख भी यशपाल ने इस प्रकार किया है—

"आगरा में रहते समय साथियों को वन्दूक और पिस्तौल का निशाना सिखाने के लिए वे उन्हें आगरे से बुन्देलखण्ड के जंगलो में दो-दो तीन-तीन करके साथ ले जाते। इस काम में आजाद को जो सुख

> मिलता था, उसे शब्दों से प्रकट नही किया जा सकता। दूर किसी महीन चीज पर सही निशाना मार लेने से उन्हें कम से कम उतना सन्तोष होता, जितना कोई बहुत ऊँची उक्ति कह देने पर किसी कवि को हो सकता है या लाख-दो लाख का सट्टा जीत लेने पर किसी मारवाड़ी को।"

आजाद के सही निशाने की परीक्षा इलाहाबाद के अलफ्रेड पार्क मे पुलिस के साथ युद्ध करते हो गई थी। अचूक निशानो से उन्होने नॉट वावर का हाथ और विश्वेश्वर सिंह का जवडा वेकार कर दिया था। सान्डर्स हत्या के समय भगतसिंह का पीछा करने वाले चननसिंह को उन्होने एक ही गोली मे सुला दिया था।

आजाद की अन्य साहसिक रुचि थी 'झपट-डडा' (गुलाम डडा) खेलने की। एक डंडा दूर फेंक दिया जाता और दाव देने वाला साथी जव तक उस डंडे को उठा कर लाता तव तक सव लोग वृक्ष पर चढ कर डाल-डाल घूमते। दाव देने वाला साथी जिसे छू लेता वह हारा हुआ माना जाता और रसोई वनाने के काम मे उसे जुट जाना पडता। जव अन्य साथी दाव हार जाता तो वह आकर रसोई वनाने लगता और पहले वाला साथी खेलने चला जाता। इस खेल के पीछे व्यायाम की सी भावना अधिक थी। आजाद का कहना था कि हम लोगो को कूदते-फाँदते रहना चाहिए क्योकि यही जीवन तो अपना लिया है।

आजाद को मालिश करने-कराने और कुश्ती लड़ने का भी शौक था। स्नान से पूर्व वे अपने किसी साथी को पकड़ लेते और वे आपस मे एक-दूसरे के वदन पर तेल मलते। इसी क्रम मे जोर-आजमाई और कुश्तम-कुश्ता भी हो जाती। भगतसिंह और आजाद मे यह अभ्यास वहुत चलता था क्योकि और कोई उनकी वरावरी का नही ठहरता था।

वौद्धिक रुचियो मे आजाद को अच्छी पुस्तके खरीदने और खरीदने की प्रेरणा देने का वहुत शौक था। जव वे किसी ऐसी पुस्तक की चर्चा सुनते जो दल की गति विधियो के लिए उपयोगी सिद्ध होने की क्षमता रखती, तो वे उसे अवश्य खरीद लेते थे और सभी साथियों से उसे पढवाते। घंटो तक उसमे वर्णित सिद्धान्तो पर वहस होती।

आजाद गाना नही जानते थे पर गाना सुनने का उन्हे वहुत शौक था। इश्किया गजल या शायरी से उन्हे चिढ थी। वे देश-भक्ति के गीत सुनना पसन्द करते थे। उनका प्रिय गीत था—

मॉ ! हमें विदा दो, जाते है हम
विजय केतु फहराने आज।
तेरी बलि वेदी पर चढ़ कर····।

इस गीत को आजाद अपने साथियों के मुँह से सुना करते थे। एक पुस्तक थी—'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली।' इस पुस्तक के अन्तिम पृष्ठ पर एक उर्दू की कविता छपी थी। आजाद इस कविता को अक्सर सुना करते थे। कविता इस प्रकार थी—

"उरूजे कामयाबी पर कभी हिन्दोस्तां होगा,
रिहा सैयाद के हाथो से अपना आशियां होगा।
कभी वह दिन भी आयेगा, जब अपना राज देखेंगे,
जब अपनी ही जमी होगी और अपना आसमां होगा।
जुदा मत हों मेरे पहलू से ऐ दर्दे-वतन हरगिज,
न जाने बाद मुर्दन, मै कहाँ और तू कहाँ होगा।
वतन की आबरू का पास देखें कौन करता है,
सुना है आज मकतल में हमारा इम्तिहाँ होगा।"

बाते करने का भी आजाद को बहुत शौक था। पर बाते करते अपने दल के सदस्यो से ही थे और पार्टी के संगठन का विषय लेकर। कभी-भी रात मे किसी सोते हुए साथी को जगा लेते और उससे भावी योजनाओं पर घंटो तक बाते करते रहते।

आजाद की अलमस्ती

आजाद के व्यक्तित्व मे कई पारस्परिक विरोधी बाते एक साथ थी। क्रान्तिकारी जीवन मे जहाँ एक-एक कदम फूँक-फूँक कर रखना पडता है, वहाँ वे कभी-कभी बडे बेखबर और बेफिक्र हो जाया करते थे। आजाद को कभी चिन्ता तो सताती ही नही थी और विशेष रूप से अपनी। हर हालत मे वे मस्त रहा करते थे।

काँकोरी मे ट्रेन-डकैती के पश्चात् एक दिन आजाद को अपनी माताजी से मिल आने की इच्छा प्रबल हुई। साथी सदाशिव मलकापुरकर को साथ लिया और भावरा जा पहुँचे। माता-पिता के साथ रहे। एक रात सन्देह हुआ कि पुलिस की हलचल बढ़ रही है। आजाद एक पहाडी पर बने मन्दिर के एक खण्डहर में जा छिपे। काफी जागे हुए थे, इसलिए सो गए। बेफिक्र इसलिए थे कि साथी मलकापुरकर पहरा दे रहे थे। घुप अँधेरे मे मलकापुरकर जी का

पैर एक साँप पर पड़ गया। वे उछलकर एक ओर होगए और आजाद को साँप होने के खतरे की चेतावनी दी, पर आजाद 'है तो होने दो' का भाव व्यक्त करके करवट बदल कर सो गए। इतने बड़े खतरे के समय भी इतनी बेफिकरी, यह उन्ही की विशेषता थी।

जिस चीज पर आजाद का मन आ जाय वह उनकी होती थी। एक उदाहरण प्रस्तुत है।

आजाद के एक क्रान्तिकारी साथी श्री सुरेन्द्रनाथ पाडे एक च्यवनप्राश का डिब्बा ले आए। रात सोते समय डिब्बा आजाद के हाथ लग गया। खोलकर देखा और पूछा—

"अबे, इसमें यह काला-काला क्या है ?"

पाडे बोले, "खाँसी की दवा है।"

यशपाल ने चुटकी ली, भैया बहुत ही पौष्टिक दवा है।"

आजाद ने सन्देह प्रकट किया, "साला मलहम सा लगता है।"

यशपाल बोले, "पर स्वाद बहुत अच्छा है।"

आजाद ने थोड़ा चाट कर देखा और बोले, "साला है तो मजेदार" और चाटते-चाटते पूरा डिब्बा साफ कर गए। पांडे चिल्लाते रहे—"भैया दवाई है, नुक्सान कर जायगी।" पर आजाद ने एक न सुनी। सवेरे जब पौष्टिक दवा का दुष्परिणाम सामने आया तो दवा और साथियो को गाली देते रहे।

आजाद की मन की मौज भी प्रसिद्ध है। झाँसी मे रहते हुए कई बार मन की मौज ने जोर मारा तो पुलिस थाने चले जाते और पुलिस वालो से घटो मनोविनोद करते रहते और उनसे कलाई-पजा लड़ाते रहते। वही पुलिस आजाद को पकडने नदियो मे जाल और गुफाओ मे बाँस डालती फिरती और ये आजाद थे जो पुलिस वालो के साथ बैठते उठते रहते थे।

पारस्परिक छेड़-छाड़

मनोविनोद के लिए आजाद और उनके साथियो मे पारस्परिक छेड़-छाड चलती रहती थी। दिल इतने मिले हुए थे कि कड़वी बात कह देने पर भी कोई बुरा नही मानता था और गाँठ बाँध कर नही रखता था। आजाद अपने किसी साथी से कहते—

वाह गीत सुनादो—"माँ हमें विदा दो, जाते है हम
विजय केतु फहराने आज।"

राजगुरु धीरे से आजाद को छेड़ देते—

"वह पुलिस आता है विजय-केतु लेकर।" और सब खिलखिला कर हँस पडते और आजाद 'साला-वदमाश' कहकर मन की भुरभुरी मिटा लेते।

पारस्परिक छेड-छाड़ और मनोविनोद का एक उदाहरण डॉ० भगवान दास माहौर की लेखनी से लिया जा रहा है। विषय था कौन कैसे पकड़ा जायगा। किसी ने छेडा—

"पडित जी (चन्द्रशेखर आजाद) बुन्देलखण्ड की किसी पहाड़ी में शिकार खेलते हुए किसी मित्र बने सरकारपरस्त के विश्वासघात से घायल होकर वेहोशी की दशा मे पकड़े जाएंगे। इन्हे जंगल से सीधे झाँसी के पुलिस अस्पताल में भेज दिया जायगा और वही इन्हे होश आने पर पता चलेगा कि ये गिरफ्तार हो गए— सजा दफा १२१ में फाँसी।"

आजाद ने झिड़की की हँसी-हँसी। भगतसिह ने विनोद करते हुए कहा—

"पडित जी, आप के लिए दो रस्सो की जरूरत पड़ेगी, एक आपके गले के लिए और दूसरा आपके इस भारी-भरकम पेट के लिए।"

आजाद तुरन्त हँस कर वोले—

'देख फाँसी जाने का शौक मुझे नहीं है। वह तुझे मुवारक हो। रस्सा-फस्सा तुम्हारे गले के लिए है। जब तक यह वमतुलवुखारा (आजाद ने अपने माउजर पिस्तौल का यही विचित्र नाम रक्खा था) मेरे पास है, किसने माँ का दूध पिया है जो मुझे जीवित पकड़ ले जाये।"

एक वार भगतसिह, विजयकुमार सिन्हा और भगवानदास माहौर मे काव्य-सगीत की बारीकियो पर चर्चा हो रही थी। मन की मौज मे आकर माहौर गा उठे।

"हृदय-लागी, प्रेम की वात ही निराली मन्मथ शर हो......।

आजाद वोले—

"क्या साला प्रेम-फ्रेम पिनपिनाता रहता है। अवे क्यो अपना और दूसरो का मन खराव करता है? कहाँ मिलेगा इस जिन्दगी मे प्रेम-फ्रेम का अवसर? कल कही सड़क के किनारे पुलिस की गोली खाकर लुढ़कते नजर आएंगे। मनमथ शर—फनमथ शर! हमें मतलव मनमथ शर से! अवे कुछ 'वम-फटकर, पिस्तौल झटक कर' ऐसा कुछ गा। देख मै गाऊँ अपनी एक—एक हाँ

कविता जिसे जिन्दगी मे कर जाने के लिए ही जिन्दा हूँ।" और आपने अपने गले को भारी-भरकम बनाते हुए स्वरो पर स्टीम-रोलर सा चलाना शुरू किया—

'दुश्मन की गोलियो का हम सामना करेंगे,
आजाद ही रहे है, आजाद ही रहेंगे।

"देख इसे कहते है कविता। क्या साला—'हृदय लगी' प्रेम की बात 'मनमथ शर' पिनपिनाता रहता है। हृदय में लगेगी थ्री नॉट थ्री की एक गोली, मनमथ शर—फनमथ शर नहीं।"

आजाद का बल-विक्रम

आजाद बली ही नहीं, महाबली थे। उनका भारी-भरकम और मोटा शरीर फुसफुसा नही वरन् ठोस और गरु, था। उसे उन्होने निरन्तर दौड-भाग और कसरत से कमाया था। परिश्रम उनके जीवन का नियम था। जब कोई परिश्रम का काम न कर पाते तो दड-बैठके ही लगाते।

आजाद के व्यक्तित्व की कुछ रेखाएँ ऐसी थी—कद औसत दर्जे का, रग गेहूआँ, भवे और मूछे तनी हुई, आँखो मे चमक, आजान बाहु और चेहरे पर चेचक के दाग। शारीरिक शक्ति का नमूना यह कि एक बार एक सेठ से कुछ रुपए झटकने गए। उसे समझा दिया था कि चिल्लाना नही, वरना जान से मार दूँगा। बेचारे के मुँह से चीख निकल ही गई। आजाद ने उसका मुँह बन्द करने के लिए एक थप्पड जड दिया। काम किया और चले आए। सुबह अखबार मे पढ़ने को मिला कि सेठजी के प्राण-पखेरू उड गए।

आजाद का विक्रम इतना था कि अच्छे-अच्छो को दिन मे तारे दिखने लगते थे।

आजाद एक बार ट्रेन से स्टेशन पर उतरे। उनके आने की सूचना पुलिस को लग चुकी थी। गेट पर पुलिस के डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब जमे खड़े थे। आजाद समझ गए कि भागेगे तो गोली चलेगी। बडे साहस के साथ गेट के पास गए और डिप्टी साहब के कधे को करारा धक्का देते हुए पार हो गए। शेर निकल गया, तीस-मारखॉ ताकते रह गए। आजाद के नाम से पुलिस वालो को पसीना छूटने लगता था।

एक बार आजाद कानपुर स्टेशन पर उतरे। आजाद ने वहॉ एक मशहूर गुप्तचर खडा देखा। आजाद के साथियो ने सोचा कि ऑख बचा कर निकल चले। आजाद का ख्याल था कि ऑख बचा कर निकलने से सन्देह बढ़ेगा ही और पकडे जायेगे। उन्हे एक नई सूझ सूझी। वे सीधे उस गुप्तचर के पास

पहुँचे और उसके कधे पर हाथ रख कर बोले, **"देखो फिजूल की बातें मत करो। तुम अपना काम करो और मैं अपना।"** बेचारा गुप्तचर मूर्ति की तरह खडा देखता रह गया। आजाद एक साइकिल पर सवार हुए और नौ-दो-ग्यारह हो गए।

आजाद के आतक का इससे बडा नमूना और क्या मिलेगा कि एक बार जब वे ओरछा के जगलो मे छिप हुए थे तो उधर वाइसराय महोदय के शिकार का कार्यक्रम निश्चित हुआ। जिस सडक से वाइसराय महोदय की सवारी जाने वाली थी उसके दोनो ओर दूर-दूर तक जगल साफ कर दिया गया था ताकि कोई छिपकर कोई वारदात न कर सके। फिर भी आजाद ने ओरछा नरेश से कहलाया था कि आज्ञा हो तो इतने प्रबन्ध के होते हुए भी कोई करिश्मा दिखाऊँ। ओरछा नरेश ने उत्तर मे आजाद को यही सन्देश भेजा था—

"कहूँ ऐसी अनहोनी मत करिओ। हमारे मेहमान सो तुम्हारे मेहमान। जा वखत तुम कहूँ दूर चले जाउ।"

आजाद इस आत्मीयता भरे अनुरोध को मानकर दूर चले गए। खनिया धाना और चन्देरी होते हुए वे पछार (वर्तमान अशोकनगर) जा पहुँचे। वहाँ गाँव के बाहर हनुमान जी के मन्दिर मे तीन दिन डेरा जमाया। वैसे भगत सिह के माध्यम से उनके अच्छे आत्मीय सज्जन श्री मलिकराज ठेकेदार के मार्फत आजाद को कुछ कारतूस मिलते रहते थे। ठेकेदार साहब ने खनिया धाने के पास कही सडक बनवाने का ठेका ले रखा था और वे आजाद को कारतूस दिया करते थे। आजाद ने खनिया धाने को भी अपना प्रश्रय स्थान बनाया था। इस अपराध मे ब्रिटिश गवर्नमेन्ट ने खनिया धाना नरेश को पद-च्युत कर दिया था। अशोकनगर मे तीन दिन ठहरने मे ही इस तेजस्वी ब्रह्मचारी की ख्याति फैल गई और लोग दर्शन को पहुँचने लगे। आजाद वहाँ से खिसक गए।

आजाद का सामाजिक समायोजन

स्वभाव से ही कुछ लोग अन्तर्मुखी और कुछ बहिर्मुखी होते हैं। अन्तर्मुखी वे लोग होते है जो भीड-भडाके से दूर रह कर अपने आप मे लीन रहना पसन्द करते है। उनका मित्र-मडल बडा नही होता और वे अपने काम से काम रखते है। इन लक्षणो के अनुसार चिन्तक और साधु-सन्यासी अन्तर्मुखी कोटि मे आते है। बहिर्मुखी व्यक्ति वे होते है जो दिखावे और प्रदर्शन मे अधिक विश्वास रखते है और लोगो से निरन्तर मिलते-जुलते रह कर उनसे सम्बन्ध

स्थापित करते रहते है। ऐसे व्यक्ति मोटर या ट्रेन मे सफर करेगे तो सबसे पहचान कर लेगे और किसी नए स्थान पर मकान लेगे तो अडोस-पडोस के लोगो से काका-ताऊ, बुआ-चाची और भाई-बहन आदि के रिश्ते स्थापित कर लेगे। इस दृष्टिकोण से नेता लोग बहिर्मुखी जाति के अन्तर्गत आते है। क्रान्तिकारी लोग इसके ठीक विपरीत स्वभाव के होते है, अतः वे अन्तर्मुखी कोटि मे आते है।

आजाद के विषय मे हमने विचार करके देखा तो पाया कि मनोविज्ञान के नियम उनसे पनाह माँगते थे। वे कई मनोवैज्ञानिक नियमो के अपवाद पाए गए। घोर क्रान्तिकारी होते हुए और गोपनीय कार्य-पद्धति को अपनाये हुए भी वे घोर सामाजिक भी थे। निर्धन-परिवार मे उत्पन्न होने की कोई हीन-भावना उनके मन मे ग्रन्थि बन कर नही रह सकी थी। वे जहाँ रहते, अपने आपको सामाजिक वातावरण मे इतना समायोजित कर लेते कि बिलकुल एक रूप हो जाते। क्रान्तिकारी होते हुए भी वे घोर बहुर्मुखी-व्यक्तित्व की विशेषताओ से विभूषित थे। कोई घुटन या कोई कुण्ठा उनके पास नही फटकती थी। उनका व्यवहार तो 'खुला खेल फर्रुखाबादी' का परिचायक था। हाँ दल की गोपनीयता को वे कजूस के धन की भाँति हवा नही लगने देते थे।

आजाद के सपर्क मे जो भी व्यक्ति आता वह उनका होकर रह जाता। वे जिस परिवार मे भी जाते, उसके सदस्य बन जाते। उनके व्यवहार मे आत्मीयता का इतना प्रबल चुम्बक रहता कि लौह-हृदय भी उनके प्रति आकर्षित हुए बिना न रहते। कहना न होगा कि वे घर-घर मे घर कर लेते थे। कुछ उदाहरण प्रस्तुत है—

अपने अज्ञात-वास मे आजाद झाँसी रहे। झाँसी मे वे अपने क्रान्तिकारी साथी मास्टर रुद्रनारायण के घर रहने लगे। मास्टर रुद्रनारायण की पत्नी उनकी सगी भाभी बन गई। 'यश की धरोहर' मे उद्धरण प्रस्तुत है—

> "आजाद केवल मास्टर रुद्रनारायण के ही छोटे भाई नहीं बन गए थे, वे उनकी पत्नी के झगड़ालू देवर, उनकी छोटी लड़की के प्रिय चाचा भी बन गए थे। आजाद की सफलता का रहस्य उनकी वीरता से कही अधिक उनकी उस स्वाभाविक मिलनसारी (शिटाचारपूर्ण मैत्री नही), उस आत्मीयतापूर्ण हार्दिकता में थी जिसकी सजीवता रूठने, बिगड़ने और फिर मानने मे प्रकट होती है। मास्टरसाहब की पत्नी से उनके देवर-भाभी जैसे झगड़े होना, फिर

मास्टरसाहव द्वारा समझौता कराया जाना—ये सब मास्टरसाहब के पारिवारिक जीवन की निधियाँ होगई थी।

झाँसी मे आजाद का केवल एक घर मास्टर रुद्रनारायण का ही घर नही था। अपने सभी क्रान्तिकारी साथियो के घर, उनके अपने ही घर थे। झाँसी मे रहते समय आजाद ने अपना नाम हरीशंकर घोषित किया था। इस हरीशकर नाम की करामात श्री भगवानदास माहौर से सुनिए—

"आजाद झाँसी मे हम सब साथियो के घरो में भी बिलकुल घुलमिल गए। साथी सदाशिव राव मलकापुरकर, विश्वनाथ वैशम्पायन और मेरे घर को तो उन्होने बड़ी खूवी से अपना घर बना लिया। मेरी माँ के वे प्रिय 'बेटा' बन गए। माँ के शब्दों में, "सुशील लड़का तो बस हरीशंकर है। सदू, विसुन्नाथ और भगवान, जे तो ऐनई गवार हैं।" माँ को खुश रखने में वे बड़े चतुर थे। इस बात की घात मे ही रहते थे कि माँ मुझसे कुछ काम करने को कहे और मै अना-मना करूँ तो वे उसे तुरन्त कर डालें। ऐसे अवसर पर जब माँ से मुझे 'शाप' मिलता और आजाद को आशीर्वाद, तो मुझे आजाद पर बड़ा क्रोध आता। आजाद मेरी माँ के, सदाशिव की माँ के और जहाँ-कही भी वे गए सब कही माँओ के आदर्श बेटे बन गए। मेरी माँ की दृष्टि मे यदि सब सद्गुण किसी मे थे तो उनके हरीशंकर में।"

ओरछा के निकट ढिमरपुरा ग्राम के नम्बरदार पर ब्रह्मचारी आजाद के सदाचार की इतनी धाक जम गई थी कि वे तो आजाद के पक्के भक्त बन गए थे। नम्बरदार चार भाई थे और आजाद को मिलाकर अब वे अपने आप को पाँच भाई मानते थे। नम्बरदार की बहन भी आजाद की सगी जीजी बन गई थी।

यह नही कि केवल सामान्य व्यक्तियो को प्रभावित करने की क्षमता आजाद मे थी। बडे मे बडे विद्वान और बडे से बडे राजनीतिज्ञ भी आजाद की चारित्रिक विशेषताओ से प्रभावित हुये विना नही रहते थे। प मोतीलाल नेहरू, प० मदनमोहन मालवीय, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन, श्री श्रीनारायण जी चतुर्वेदी और श्री श्रीप्रकाश जी भी आजाद के प्रति अत्यन्त स्नेहिल रहा करते थे।

आजाद की संवेगात्मक भाव-भूमि

संवेगात्मक धरातल पर भी चन्द्रशेखर आजाद असामान्य ही थे।

मानवीय संवेगो, जैसे—प्रेम, दया, सहानुभूति, क्रोध और घृणा आदि का उद्वेलन उनके हृदय मे भी होता था पर केवल असाधारण परिस्थितियो मे ही। इस साधक ने अपने मनोभावो पर विजय प्राप्त करली थी। सवेगात्मक स्थिति मे भी आजाद कभी सतुलन नही खोते थे।

कोई सबल कारण उपस्थित होने पर आजाद को क्रोध भी आता था। जब क्रोध आता था तो शरीर कॉपने लगता था, ऑखे खून की तरह लाल हो जाती थी, परन्तु क्रोध की इतनी उद्दंड स्थिति मे भी जबान और हाथ काबू मे रहते थे। यह सब सिद्ध करता है कि आजाद सस्कृति और सयम के धन मे औरो से अधिक धनी थे।

झॉसी के बाजार मे एक वार कुछ अँग्रेज सिपाही निकले। वे लोगो को सताने लगे और महिलाओ को घूरने लगे। आजाद यह सब देख रहे थे। क्रोध के मारे वे होठ काटने लगे और कई बार जेब मे रखी पिस्तौल पर उनका हाथ गया; पर उन्होने स्वयं को सम्हाल लिया। यदि वे क्रोध के आवेश मे एक-दो सिपाहियो को मार देते तो शायद वे भी मारे जाते क्योकि दोनो ओर से गोली चलती। उनका दल छिन्न-भिन्न हो जाता और आगे की योजनाओ पर पानी फिर जाता। अपने एक साथी के पास आये और उसे पिस्तौल देकर बोले—

"ले इसे अपने पास रखले। मेरा दिमाग आज ठीक नही है। आज कुछ अँग्रेज सोलजरो ने सदर बाजार मे बड़ा उपद्रव किया है, औरतों को छेड़ा है, लोगो को मारा है और गालियाँ बकी है। बड़ा ही खराब व्यवहार किया है जिससे मै रह-रह कर उत्तेजित होता रहा हूँ। कई बार मेरा हाथ पिस्तौल पर जा चुका है। मुझे लगा कि कहीं मै अपने आप पर काबू न खो दूं, नहीं तो कुछ गड़बड़ हो जायगा। इसीलिए चला आया हूँ। तू इसे रक्खे रह।"

इसी प्रकार के अनेक उदाहरण है जो सिद्ध करते है कि क्रोध के आवेग मे आजाद सयम नही खोते थे और अपने ऊपर काबू करके परिस्थिति को सम्हाल लेते थे।

एक बार महान् क्रान्तिकारिणी श्रीमती दुर्गादेवी वोहरा, श्री वैशम्पायन तथा श्री पृथ्वीसिह ने योजना बनाकर बम्बई पहुँच कर वहाँ के लेमिंग्टन रोड पर स्थित पुलिस-स्टेशन को घेर कर अधा-धुन्ध गोलियाँ बरसाना प्रारम्भ कर दिया। ये लोग लार्ड हेली को गोली से उडाना चाहते थे। हमला करके सब इधर-उधर हो गये। कानपुर पहुँचकर दुर्गादेवी आजाद से मिली। उनकी

अनुमति के विना यह काम किया गया था। आजाद दुर्गादेवी को देखकर गुस्से से कॉपने लगे। यदि और कोई साथी होता तो जाने क्या कर वैठते पर एक नारी के प्रति इतना क्रोध करना उनके सस्कारो ने सिखाया ही नही था। दुर्गाभाभी की विवशता समझकर वे शान्त होगये। इतना उदार, इतना स्निग्ध और इतनी गहरी समझ का था वह आजाद कि प्राय. लोग उसे समझ ही न पाते थे।

आजाद के क्रोध की एक विशेषता और थी और वह यह कि रोष के आवेश मे वे अपनो को खूब डाट देते थे पर दूसरो के प्रति अपने रोष को दबा देते थे। अपनो के प्रति उन्हे यह विश्वास रहता था कि उनमे कोई गलतफहमी पैदा हो ही नही सकती। कितना आत्म-विश्वास था अपनो के प्रति।

आजाद भगतसिह को अत्यधिक चाहते थे। वे उसे दल का मस्तिष्क कहते थे। एक वार ऐसा अवसर आया कि वे भगतसिह पर ही बुरी तरह विगड पडे। भगतसिह ने स्नेह जताते हुए इतना कहा था—

"अरे पडित जी इतना तो बता दीजिए कि आपका घर कहाँ है और घर पर कौन-कौन हे ताकि भविष्य मे (अथात् आजाद की मृत्यु के पश्चात्) हमसे वन सके तो उनकी यथा-शक्ति सहायता कर सकें और देशवासियो को एक शहीद का ठीक परिचय दे सकें।"

आजाद की एक दम आँखे वदल गई और व्यगपूर्ण कोध के स्वर में वे बोले—

"क्यो? क्या मतलब? तुम्हे मेरे घर से काम है या मुझसे? पार्टी में काम मै करता हूँ या मेरे घर के लोग? मेरा घर कहाँ है, मेरे घर पर कौन-कौन है, इस प्रकार के प्रश्न ही क्यों करते हो?"

वेचारे भगतसिह सहम कर रह गए और सभी साथी चुपचाप सुनते रहे। आजाद ने फिर कहा—

देखो रणजीत! (भगतसिह का पार्टी का नाम) इस बार पूछा तो पूछा, अव फिर कभी न पूछना। न घर वालो को तुम्हारी सहायता से मतलव है और न मुझे अपना जीवन-चरित्र ही लिखाना है।"

आजाद को जव कभी किसी शत्रु पर क्रोध आता था तो उसका प्रदर्शन विल्कुल नही करते थे और जो कुछ करना होता, वह कर गुजरते थे।

वीरता और रौद्र-रस के अवतार आजाद के फौलादी-अतर मे कही मक्खन भी भरा हुआ था जो सहानुभूति की आँच से पिघल पडता था। यदि वे किसी अपराधी को गोली से उडा जानते थे तो किसी के दुख-दर्द मे फूट-

फूट कर रोना भी जानते थे। अपने ही एक साथी को उन्होंने इसलिए गोली से उडा दिया था कि वह किसी नारी के अनुचित प्रेम मे फँसकर दल के भेद पुलिस को देने लगा था। मारने को मार दिया पर बहुत दिनो तक वे उसकी याद कर-करके द्रवित होते रहे।

अपने साथी भगवती चरण बोहरा के शहीद होने के समाचार ने उन्हे विचलित कर दिया और वे फूट-फूट कर रोते रहे। साथी के प्रति जो स्नेह था वह उसके बच्चे के प्रति उडेल दिया और कई दिन तक वे उसे अपनी छाती पर सुलाते रहे। खुद भूखे भले ही रह जाये पर अपने प्यारे साथी के बच्चे को तो नित्य एक आने की जलेबी खिलाते ही थे। दूसरो के दुःख से दुखी होना क्रान्तिकारी की निर्बलता नही है। देश-भक्ति क्या है? यह देश के प्रति उदात्त सवेगो का शाश्वत रूप ही तो है। इसी सम्बन्ध मे श्रीमती दुर्गादेवी बोहरा के विचार पढिए—

> **"मै पूर्ण विश्वास के साथ कहती हूँ कि जो व्यक्ति भावुक है, जो दूसरे की पीड़ा से पीड़ित है और जिसकी अनुभूति जितनी ही तीव्र और गहरी है, वह उतना ही बड़ा क्रान्तिकारी कहा जा सकता है। क्रान्तियाँ सामाजिक हों या राजनैतिक, वे सुख और सौन्दर्य को जन्म देती है। क्रान्तिकारी उस सुख और सौन्दर्य की प्रसव वेदना सहता है।"**

आजाद का नेतृत्व

आजाद के व्यक्तित्व मे उन सभी गुणों का समावेश था जो एक जन्म-जात नेता मे होने चाहिए। वे अपने दल अर्थात् 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना' के निर्विरोध सेनाध्यक्ष थे। नेतृत्व की दृष्टि से आजाद महाराणा प्रताप, शिवाजी, और रणजीतसिंह की कोटि मे आते है। यदि उन्हे स्वाधीन राष्ट्र की सेना का सेनापति बनाया गया होता तो वे बिस्मार्क, गैरिबालडी और मैजिनी से कम न उतरते। लोग उनका लोहा मानते थे, श्रद्धा रखते थे, डरते थे, प्यार करते थे और उनके इशारे पर मरने-मिटने के लिए तैयार रहते थे। आजाद के नेतृत्व की विशेपताओ का विश्लेपण उदाहरणो के साथ हम देखे और प्रेरणा ले।

संकट के समय आगे-आगे रहना

आजाद उन नेताओ मे से नही थे जो अपने लोगो को मरने कटने के लिए आगे करके, स्वयं पीछे रहकर चिल्लाते रहें—"चढ़ जा बेटा सूली पर"

जान झोक देने की सवसे अधिक झोंक आजाद पर ही सवार रहती थी। किसी सामाजिक कार्य मे सवसे अधिक खतरे का काम आजाद अपने हाथ मे लेते थे और सवसे अधिक खतरे के स्थान पर वे ही रहते थे। लाहौर में सान्डर्स को गोली से उडा देने वाली घटना ही प्रमाण के लिए पर्याप्त है।

भगतसिह के अनुरोध पर दल ने निश्चय किया कि लाला लाजपतराय के हत्यारे को गोली से उडाया जाय। आजाद लाहौर पहुँचे, स्थिति का निरीक्षण किया और सहमत हो गये। अनुरोध भगतसिह का था और चू कि कार्य उसके क्षेत्र मे किया जा रहा था, इसलिए तय हुआ कि लालाजी के हत्यारे को मारने का श्रेय भगतसिह को दिया जाय। आजाद चाहते तो इतने वडे काम को स्वय हाथ मे ले लेते क्योकि दल मे उनसे अच्छा अचूक निशानेबाज कोई और नही था। यदि पहले मोर्चे पर ही खतरे का भय होता तो वे आगे रहते, पर वे तो जानते थे कि ऑफिस मे निकलता हुआ व्यक्ति वन्दूक के घोडे पर हाथ रखे हुए नही निकलेगा और मोटर साईकिल पर वठ जायगा तो उसके हैन्डिल हाथ मे रहने के कारण कोई हथियार चलाने के काम का नही रहेगा, इसलिए उमे आकस्मिक रूप से पास पहुँच कर मारने मे भी कोई खतरा नही है। खतरा उत्पन्न होने की स्थिति का निर्माण घटना के कुछ देर वाद ही होता है जव लोग प्रत्याक्रमण करते हे। इसके लिए मोर्चा लेकर आजाद जमगए थे कि भगतसिह और राजगुरु को साफ निकाल कर प्रत्याक्रमणकारियो से वे स्वय निवटेगे।

हुआ भी यही। राजगुरु और भगतसिह सान्डर्स को गोलियो से उडाकर पीछे हटे और सान्डर्स के अग रक्षक चननसिह ने इन लोगो का पीछा किया। आजाद ने उसे लौट जाने के लिए वहुत समझाया पर उसके सर पर तो मौत सवार थी। आजाद ने पहली गोली उसके पैर मे मारी पर वह फिर भी नही माना तो आजाद ने उसके सीने मे गोली मार कर उसे ठडा कर दिया। इसके पश्चात् थोडी देर तक आजाद वहाँ रुके भी कि कोई और आए और वे उसे देखे-सुलझे पर कोई नही आया। आजाद भी वहाँ से खिसक दिए।

तीसरे मोर्चे पर आजाद ने सुखदेव, विजय कुमार सिन्हा और भगवान दास माहौर को रखा था, पर कोई सामना करने नही आया और ये लोग सफाई से सभी निकल गए।

हमने देखा कि प्रत्याक्रमणकारियो से निबटने के सवसे अधिक सकटपूर्ण मोर्चे पर आजाद अकेले रहे थे, उन्होने अपने साथ एक भी साथी को नही रखा था। इस घटना से उनके मोर्चा-वन्दी की कुशलता और हौसले का भी

परिचय मिलता है कि किस प्रकार एक अपरिचित स्थान पर यमदूतो के घर पहुँच कर ही उन पर धावा किया ।

काकोरी ट्रेन-डकैती के समय आजाद की अवस्था अधिक नही थी पर उन्होने सबसे अधिक खतरे का काम लिया था । जब दूसरे साथी तिजोरी तोडने मे लगे हुए थे तब आजाद बराबर अपनी माउजर से फायर करके लोगो को बाहर न निकलने की चेतावनी दे रहे थे । यह सामान्य बुद्धि की बात है कि यदि कोई प्रत्याक्रमण की बात सोचेगा तो पहले उन्हे समाप्त करना चाहेगा जो गोलियाँ चला रहे होगे । तिजोरी तोडने वालो पर हमले की संभावना न होकर हमले से रोकने वालो पर हमला होने की अधिक सभावना थी क्योकि उस गाडी मे कुछ फौजी लोग भी यात्रा कर रहे थे । यह सब जानकर भी आजाद ने अपने लिए मोर्चे की सकट पूर्ण स्थिति का चयन किया ।

जब भगतसिंह को जेल से छुडाने की योजना बनी तो आजाद ठीक उसी स्थान पर मोटर लेकर पहुँच गए जहाँ से भगतसिंह को उठाकर मोटर मे रटकना था । किसी दूसरे पर विश्वास न करके मोटर ड्रायवर का काम स्वय उन्होने सम्हाला था । हमले के समय मोटर ड्रायवर को ही सबसे पहले मारा जाता है ।

आजाद की आत्मा गवाही ही नही देती थी कि वे अपने किसी साथी को सकट मे आगे धकेल कर स्वय पीछे रह जाँय । वे सामान्य स्थिति की ही भाँति सकट मे भी अगुआ रहना अपना नैतिक दायित्व समझते थे । 'यश की धरोहर' मे इस उद्धरण से इस कथन की और भी पुष्टि हो जायगी ।

> "आजाद सदा संकट के सभी कामों में आगे रहते थे । दल के नेता के रूप में हम सभी लोग उनको सुरक्षित रखना चाहते थे । वे काकोरी काण्ड के फरार अभियुक्त थे, दल के नेता थे, उनको पकड़ने के लिए सरकार ने हजारों रुपयों के इनाम घोषित कर रक्खे थे । अतएव वे पार्टी के नेता ही नहीं पार्टी की प्रतिष्ठा भी थे । अतएव यह स्वाभाविक था कि मामूली छोटे-मोटे खतरे के कामो में उनका शरीक होना ठीक नहीं समझा जाता था । मगर आजाद को अलग सुरक्षित बैठे रहने में चैन नहीं पड़ता था ।"

आजाद की कार्य-योजनाएँ

एक स्थान पर मैने 'समिति' की परिभाषा इस प्रकार पढ़ी थी – "समिति ऐसे लोगो का समूह है जो अकेले कुछ करना नही चाहते और मिल कर कुछ

कर नही पाते ।" यही हाल हमारे यहाँ योजनाओ का है। जिस काम को सबसे अधिक देर से करना चाहो, उसे योजना मे डाल दो। आजाद की कार्य-योजनाओ को इस अर्थ मे न लिया जाय। 'कार्य' (एक्शन) से उनका तात्पर्य होता था—किसी का सर फोडना, किसी को गोली से उडाना, किसी पर बम फेकना या किसी खजाने पर डाके डालना। आजाद इन कार्यो की सभावनाओ पर ठडे दिमाग से विचार करते, उनकी विधि निर्धारित करते, तैयारी का निरीक्षण करते और सतोपजनक स्थिति देखकर कार्य का आदेश देते। उनकी कार्य योजना इतनी पूर्ण होती थी कि उसमे नुक्ता-चीनी करने का किसी को अवसर ही नही मिलता था।

डाके डालने के विषय मे आजाद का मत था कि जब तक अन्य उपायो से धन मिलता हो, तब तक डाके न डाले जायँ। डाके भी यदि सरकारी खजानो पर डाले जायं तो ठीक, अन्यथा समाज के व्यक्तियो पर अत्यावश्यक स्थिति मे ही डाके डाले जायें। अपने पक्ष के समर्थन मे वे जन-मत बिगाडना नही चाहते थे। आजाद ने अपने जीवन के अधिकाश डाके श्री रामप्रसाद बिस्मिल के साथ प्रारम्भिक क्रान्तिकारी जीवन मे ही डाले थे। बाद मे तो उनकी साख जम जाने पर लोग स्वय ही उनके दल की आर्थिक सहायता करने लगे थे।

हत्यायो के पक्ष में भी आजाद नही रहते थे। यद्यपि आतकवाद के वे पूर्ण समर्थक रहे पर जब तक अनिवार्य न हो जाय तब तक किसी की जान लेना वे ठीक नही समझते थे। जब उन्हे विश्वास हो जाता था कि एक व्यक्ति की जान बचाने से कई व्यक्तियो की जान बच जायगी तभी वे हत्या का समर्थन करते थे।

आजाद की संगठन-क्षमता

दल की सगठन क्षमता के अन्तर्गत दल मे नए सैनिको की भर्ती करना, सदस्यो मे कार्य-वितरण करना, अनुशासन पालन की ओर ध्यान रखना, विवादास्पद प्रकरणो का निर्णय करना, अस्त्र-शस्त्र की व्यवस्था करना तथा अपने दल को लक्ष्य-पूर्ति की ओर अग्रसर करना, ये काम प्रमुख रूप से आते है। आजाद इन सभी कामो मे साधारण प्रतिभा का परिचय देते थे।

नए सैनिको की भरती मे आजाद कभी उतावलेपन मे काम नही लेते थे। वे घूमते-फिरते काम के योग्य व्यक्तियो पर दृष्टि रखते और परोक्ष रूप से ही उन्हे कई अवसरो पर परखते और सभी तरह से ठोक बजाकर उन्हे अपने दल में सम्मिलित करते थे। उनकी दृष्टि इतनी पैनी रहती थी कि

लोगो के दिल का सारा भेद वह ले आती थी। दल मे सम्मिलित कर लेने के पश्चात् उन सदस्यो को गोपनीय भेद नही बताए जाते थे, वरन् पहले उनसे ऐसे काम लिए जाते थे जिनसे उनके हौसले का पता चल जाय। विश्वस्त सिद्ध होने पर आजाद अपनी आत्मीयता का उन पर इतना गहरा रग चढाते थे कि उसके उतरने की कोई सभावना ही नही रहती थी।

दल के सदस्यो मे कार्य-वितरण करते समय आजाद उसकी रुचियो एव क्षमताओ का पूरा ध्यान रखते थे। किसी को गुप्तचर विभाग मे रखते, किसी को हथियार इकट्ठा करने का काम देते, किसी को मोर्चे पर खडा करते, किसी को प्रचार कार्य देते और किसी को आवश्यकता के समय के लिए सुरक्षित रखते। किसी भी प्रकार के बौद्धिक कार्य के लिए वे भगतसिह, भगवती चरण, विजय कुमार सिन्हा और शिव वर्मा पर अधिक विश्वास रखते थे। मरने-मारने के काम मे वे स्वय आगे रहते और राजगुरु को भी इस योग्य समझते थे। द्वितीय मोर्चे पर वे झाँसी के साथियो को रखते थे और अस्त्र-शस्त्र आदि की सम्हाल के लिए वे साथी कुन्दललाल गुप्त को उत्तरदायित्व देते थे।

आजाद दल के अनुशासन का पालन कठोरता से कराते थे। दल मे प्रविष्ट होने पर प्रत्येक सदस्य को नया नाम दिया जाता था। सभी लोग उसे नए नाम से जानते थे। कोई भी व्यक्ति पुराने नाम जानने की जिज्ञासा प्रकट नही कर सकता था। झाँसी के क्रान्तिकारियो ने मुझे बताया कि वे भगतसिह के साथ वर्षो तक रहे पर उसका असली नाम तब जान पाये जब उसने केन्द्रीय असेम्बली मे बम फेका और अखबारो मे चित्र के साथ उसका नाम छपा। किसी भी सदस्य को फोटो खिचवाने की अनुमति नही थी। फोटो उसी दशा मे खिचवाए जाते थे जब कोई साथी ऐसे साहसिक कार्य पर जाता, जहाँ से जीवित लौटने की आशा न हो।

हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना के सदस्यों के उपनाम इस प्रकार थे—

चन्द्रशेखर आजाद : पण्डितजी, भैया, बलराज

सरदार भगतसिह : कानपुर मे स्वय का धारण किया हुआ नाम बलवन्तसिह, तथा बाद मे दल का दिया हुआ नाम 'रणजीत'

राजगुरु : रघुनाथ

सुखदेव : विलेजर

बटुकेश्वर दत्त : मोहन

शिव वर्मा : प्रभात
विजयकुमार सिन्हा . बच्चू
यशपाल : सोहन
भगवानदास माहौर : कैलास
विश्वनाथ वैशम्पायन . बच्चन
मलकापुरकर : सखाराम
भगवतीचरण वोहरा : वावू भाई, हरी भाई
जयदेव कपूर : हरीश
प्र मवती : वेवे
दुर्गादेवी : भाभी
सुशीला मोहन · दीदी
प्रकाशवती · कमला
महावीरसिंह : ठाकुर भाई
कैलास पति : कालीचरण
फणीन्द्र घोप · दादा
कुन्दनलाल : न० २

दल का अनुशासन भग करने की दशा मे कठोर से कठोर दंड-देने की व्यवस्था की। दल का भेद वाहर देने की दशा मे तो एक ही दण्ड दिया जाता था और वह था मृत्यु दण्ड।

अस्त्र शस्त्र की व्यवस्था के लिए सभी उपाय काम मे लाए जाते थे। सरकारी खजानो या बड़े जमीदारो के यहाँ डाके इसी उद्देश्य से डाले जाते थे कि जो धन-प्राप्त हो, उससे हथियार खरीदे जाये। व्यक्तिगत प्रयासो द्वारा भी इधर-उधर से अस्त्र शास्त्र प्राप्त किए जाते थे। आजाद ने ग्वालियर के छात्रो से मेल-जोल इसलिए वढाया था, उन्हे ज्ञात था कि ग्वालियर के छात्रावासो मे मरहठो और ठाकुरो के लडके रहते हैं और उनके घरो पर हथियार रहते है। उनके द्वारा अपने घरो के हथियार पार करके मँगाए जा सकते है। कुछ सीमा तक आजाद को इस कार्य मे सफलता भी मिली थी।

सारे हथियार कुछ केन्द्रो पर रखे जाते थे और आवश्यकता के समय उन्हे इधर-उधर भेजा जाता था। एक-एक कारतूस का वारीकी के साथ हिसाव रखा जाता था। हथियारो की सफाई और परीक्षण का ध्यान रखा जाता था।

वम के कारखाने कई स्थानो पर चलाए जाते थे जिनका उल्लेख पहले किया जा चुका है।

आजाद की वीरता

वीरता आजाद का जन्मजात गुण था। वीरता की घुट्टी पीकर ही आजाद ने अपना जीवन प्रारम्भ किया था। जिस स्थान पर रहे, उन्हे वीरता का वातावरण मिलता रहा या यो कहिए कि वे इस प्रकार के वातावरण का निर्माण करते रहे।

आजाद का प्रचण्ड यौवन वीरता का जगमगाता हुआ वह दर्पण था जिसमे समाज ने अपने गौरव के दर्शन किए। आजाद ने कभी किसी की चुनौती को अस्वीकार नही किया। अपने बचपन जैसी कोमल अवस्था मे भी वे शेर के शिकार मे केवल तीर-कमान लेकर बिना किसी वाहन के सम्मिलित होते थे। जिस परिस्थिति मे और सब दहल जाते थे, उसमे आजाद सबसे आगे रहते थे। मन्मथनाथ गुप्त ने एक घटना का उल्लेख किया है—

दिवाली के समय बच्चे रंगीन दियासलाई जलाकर आनन्द मना रहे थे। आजाद ने अपने साथियो को बताया कि जब एक रगीन सलाई के जलने से इतना प्रकाश होता है तो सभी सलाइयाँ एक साथ जलाई जाँय तो बहुत ही प्रकाश होगा। सब साथी इस प्रस्ताव से बहुत प्रसन्न हुए पर किसी की हिम्मत नही पड़ती थी कि इतनी सारी सलाइयो को एक साथ जलाएँ, क्योंकि रोशनी के साथ सलाइयो की आँच से हाथ जल जाने का खतरा भी था। जब कोई तैयार नही हुआ तो स्वय सामने आए और कहा कि मै एक साथ सब सलाइयो को जलाऊँगा। उन्होने सलाइयाँ जला कर भी दिखादी। तमाशा तो हुआ, साथ ही उनका हाथ भी जल गया, पर उन्होने उफ तक नही की। जले हुए हाथ को देखकर लडके उपचार के लिए दौड पड़े, पर उन्हे स्वय कोई फिक्र नही थी और वे खडे-खडे मुस्करा रहे थे।

आजाद की वीरता की धाक उस समय लोगों पर सार्वजनिक रूप से जम गई थी जब बनारस मे असहयोग आन्दोलन मे पकडे जाने पर उनके नगे बदन पर कस-कस कर पन्द्रह बेत जल्लाद ने लगाए थे। उस समय आजाद की अवस्था केवल चौदह वर्ष की थी। जब उन्हे बाँधा जाने लगा तो वे कडक कर बोले "क्यों बाँधते हो? मै भागूँगा नही, लगाओ बेत" और सचमुच ही वीरता के साथ 'भारत-माता की जय', 'महात्मा गाधी की जय' और 'वन्देमातरम्' का जयघोष करते हुए उन्होंने जल्लाद के हाथो बेतो की भयकर मार खाई यहाँ तक कि बेहोश होकर गिर पडे पर कायरता का कोई भाव उनके मुख पर नही आया। कई दिन तक उनके घाव भरे नही, और दिल पर लगा हुआ घाव तो भर ही नही सका।

जिन दिनो आजाद ग्वालियर मे युवको के सगठन और अस्त्र-शस्त्र इकट्ठे करने का कार्य कर रहे थे, उन दिनों वे कॉलेज के छात्रावास मे ठहरा करते थे । एक दिन छात्रावास के लडको ने तय किया कि वीरता की डींग मारने वाले इस पडित को भूत लीला करके डराना चाहिए ताकि कभी यह बढ-बढ कर बात न करे ।

आधीरात को भूत-लीला का हुल्लड हुआ । एक छत पर नर-कंकाल घूमता हुआ और भयावनी बोलियॉ बोलता दिखाई दिया । एक वृक्ष से अगार बरसने प्रारम्भ हुए । पानी की बहुत ऊँची टकी पर से हड्डियो की वर्षा हुई और विचित्र चेहरे आग उगलते हुए दिखाई दिए । सब लडको ने भयभीत होने का अभिनय करते हुए आजाद को भी भाग जाने के लिए कहा । आजाद क्यो भागने लगे । उन्होने अपना कोट पहना और उसकी जेबो मे पत्थर भरते हुए भूतो की ओर लपक पडे । जिधर भूत-लीला हो रही थी उधर कसकस कर ऐसे पत्थर मारे कि अब भूतो को जान बचाना मुश्किल हो गया । जो कम ऊँचाई पर थे, वे तो कूद कर भागे पर जो अधिक ऊँचाई पर थे उनके गिर पड़ने और हड्डी-पसली टूटने का भय था । चारो ओर हाहाकार मच गया । आजाद की उपल वर्षा रोक कर युक्ति पूर्वक दिलासा देकर साथियो को उतारा गया । सभी भूतो ने उतर कर आजाद की वीरता की भूरि-भूरि प्रशसा की और वे सबसे बडे भूत माने जाने लगे ।

आजाद की वीरता का उल्लेख उनके साहसिक अभियानो के अन्तर्गत किया ही जा चुका है कि किस प्रकार उन्होने सान्डर्स को पुलिस के दफ्तर मे ही जाकर मारा था । इलाहाबाद के अलफ्रेड पार्क मे पुलिस के साथ आजाद का अन्तिम युद्ध तो स्वय मे वीरता का एक सपूर्ण इतिहास है जो पढने वालो के हृदयो मे भी वीरता का सचार करता रहेगा । आजाद का बलिदान वीरता का वह शिलालेख है जो समय की छाती पर खुदा हुआ भावी पीढियो को प्रेरणा प्रदान करता रहेगा ।

आजाद का साहस तथा धैर्य

साहस हृदय का वह भाव है जिसके अतर्गत कठिन कार्यो को करने की उमग, सकटापन्न स्थिति मे अडिगता तथा सफलता एव असफलता की स्थिति मे भी निरन्तर उत्साह की प्रवृत्ति पाई जाती है । इस दृष्टि-कोण से आजाद के हृदय मे साहस कूट-कूट कर भरा हुआ था । वह यौवन ही क्या जो कॉटो मे स्वय न उलझे । आजाद जाती हुई मौत को छेड़ने वाले-व्यक्तियो मे से थे ।

झाँसी मे रहते हुए आजाद ने सोचा कि मोटर ड्राइवरी सीख लेनी चाहिए क्योंकि क्रान्तिकारियो के लिए ऐसे हुनर बडे उपयोगी होते है। श्री रामानन्द ड्राइवर के यहाँ रहने लगे और बुन्देलखण्ड मोटर कपनी मे मोटर ठीक करना और उसे चलाने का काम सीखने लगे। अच्छी तरह मोटर चलाने लगे। विचार आया कि मोटर चलाने का लाइसेस लेना चाहिए, पर इसके लिये पुलिस के सुपरिन्टेन्डेन्ट के पास जाकर मोटर चलाने की कला का प्रदर्शन करना अनिवार्य था। आजाद के विरुद्ध वारन्ट था ही और उन्हे पकड़ने या मारने के लिए बडे पुरस्कार की घोषणा हो ही चुकी थी। ऐसी स्थिति मे पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट के पास जाना, यम के पास जाने के बराबर था। आजाद के साहस ने उन्हे ललकारा और आजाद पुलिस थाने मे पहुँच गये। पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट ने कई तरह से आजाद की परीक्षा ली, बिगडी हुई मोटरो की खामियाँ पूछी, छोटी बडी कई गाडियाँ चलवाकर देखी, यहाँ तक कि अपनी खुद की कार उनसे चलवाई और आजाद थे जो घण्टो तक परीक्षा देते रहे और मोटर चलाने का लाइसेस लेकर चले आए। इसे साहस नही कहेगे तो क्या कहेगे।

केवल एक बार नही, कई बार आजाद कई पुलिस थानो मे जाकर पुलिस वालो से गपशप लडा आया करते थे। कई बार तो ऐसा भी हुआ कि पुलिस स्टेशन पर उनके पकडने के इनाम का घोषणा-पत्र चिपका हुआ है और आप स्वय उसी थाने मे खडे होकर आजाद को पकड कर इनाम पाने की बात पुलिस वालो से कर रहे है। कहा जाता है कि एक बार आजाद और भगतसिह दोनो ही लखनऊ के न्यायालय मे काकोरी के अभियुक्तो के मामले की कार्यवाही देख-सुन आए थे। भगतसिह कोई राजकुमार बना था और आजाद उनके निजी सचिव।

जब दीर्घ अनशन के उपरान्त साथी यतीन्द्रनाथदास शहीद हो गए तो पंजाब से बगाल ले जाते हुए उनके शव के अन्तिम दर्शन आजाद कानपुर के रेलवे स्टेशन पर हजारो नागरिको और पुलिस की भीड को चीर कर रेल के डिब्बे मे घुसकर कर आए थे। पडित जवाहरलाल नेहरू ने उन्हे पहचान भी लिया था पर वे मुस्कराकर रह गए।

आजाद मे हद दर्जे की कष्ट-सहिष्णुता थी। उनका कहना था कि कोई मेरा शरीर काटता रहे और मै उसे कटता हुआ हँसते-हँसते देख सकता हूँ। अपना यह दावा उन्होने कई बार सिद्ध करके दिखा दिया। बचपन मे दियासलाई से हाथ जलाना, जल्लाद के हाथो बतो की मार से खाल उधड़वा देना, उनकी कष्ट-सहिष्णुता के ज्वलत उदाहरण है।

एक बार मोटर मे हैडल लगाते हुए आजाद की कलाई की हड्डी जगह से खिसक गई। सरकारी अस्पताल ले जाया गया जहाँ अँग्रेज डाक्टर था। उसने कहा बेहोश करके हड्डी जगह पर बिठानी होगी। आजाद ने कहा, तुम यो ही बिठा दो मै देखता रहूँगा। यहाँ उनकी कष्ट-सहिष्णुता का पता तो चलता ही है पर इसके साथ उनके मनोवैज्ञानिक ज्ञान का पता भी चलता है। आजाद जानते थे कि बेहोशी की दशा मे आदमी बड़बडाता है। उन्हे भय था कि कही बेहोशी की दशा मे मै दल का कोई भेद नहीं खोल दूँ।

साहस मे हतोत्साह न होने की भावना भी छिपी रहती है। जीवन के अन्तिम दिनो मे जब अनुत्तरदायी व्यक्तियो के दल मे प्रविष्ट हो जाने से दल के भेद खुलने लगे और कुछ सदस्य गद्दार निकलने लगे तो आजाद बहुत दुःखी हुए पर हतोत्साह नहीं हुए। उन्होने दल को विघटित कर स्वतत्र रूप से अपने गुट बना कर क्रान्तिकारी कार्य करने की अनुमति दे दी पर उस मार्ग को छोड़ा नही।

आजाद की सतर्कता

प्रत्येक क्रान्तिकारी की गर्दन पर सदैव कच्चे धागे से बँधी हुई नंगी तलवार लटकती रहती थी। तनिक सी भी असावधानी का अर्थ होता था गिरफ्तारी या मौत और इस प्रकार दल का खात्मा। आजाद के लिए यह खतरा सबसे अधिक इसलिए था कि वे अपनी सेना के कमाडर-इन-चीफ थे और उन्हे समाप्त करने के लिए ब्रिटिश सरकार अपना पूरा जोर लगा रही थी। सतर्कता का सबसे अधिक महत्वपूर्ण कारण आजाद के लिए इसलिए और था कि वे जीवित न पकड़े जाने की प्रतिज्ञा कर चुके थे। अतः अपने दल को जीवित रखने के लिए आजाद बहुत ही सतर्कता से काम लेते थे। उनकी सतर्कता के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे है—

आजाद को इलाहाबाद से वैशम्पायन के साथ कानपुर जाना था। किसी भेदिये ने पुलिस को समाचार दे दिया कि आजाद कानपुर जा रहे है। गुप्तचर ने पुलिस को यह भी बता दिया कि दोनो क्रान्तिकारी लुधियाना की शाल ओढकर रवाना हुए है। पुलिस ने स्टेशन पर घेरा डाल दिया। आजाद ने वैशम्पायन से कहा कि हमने चौक मे कोट सिलने डाले थे, उन्हे उठाते चले। दोनो चौक पहुँचे और कोट उठा लिए। आत्म-प्रेरणा-वशात् ही या सतर्कता की दृष्टि से आजाद ने प्रस्ताव रखा कि कोट पहन लिए जॉय और शाल पेटी में डाल लिए जॉय। ऐसा ही किया गया। पेटी मे बम का मसाला भी था। दोनो कोट पहने हुए स्टेशन पर पहुँचे। पुलिस

लुधियाना की शाल ओढ़े हुए व्यक्तियो को तलाश करती रही और ये ठाठ से बिना टोके हुए प्लेटफार्म पर पहुँच गए। एक डिब्बे मे सशस्त्र पुलिस बैठ गई कि इलाहाबाद और कानपुर के बीच कही भी उन्हे पकडा जाय या गोली से उड़ा दिया जाय। कितने सकट का समय था, पर आजाद का हौसला भी इस सकट से कम नही था। आजाद उसी डिब्बे मे बैठे जिसमे पुलिस बैठी। पुलिस यह कल्पना कैसे कर सकती थी कि जिस डिब्बे में वह है, उसमे कोई क्रान्तिकारी आएगा। कानपुर के स्टेशन पर कुली के साथ सामान आगे भेजकर और एक-एक करके दोनो अलग-अलग फाटक के बाहर हो गए। पुलिस प्रतीक्षा करती रही कि दो शालधारी व्यक्ति एक साथ आएँ और वह उन्हे पकड़े। क्या आश्चर्य यदि कोई अन्य शाल-धारी व्यक्ति पकड लिए गए हो।

झाँसी मे रहते हुए आजाद की इच्छा प्रबल हुई कि अपनी जननी और जन्म-भूमि के दर्शन करने चाहिए। साथी सदाशिवराव मलकापुरकर को साथ ले लिया। देहली-बम्बई लाइन पर दोहद रेलवे स्टेशन पर उतर कर भावरा के लिए मोटर मिलती थी। आजाद ने सोचा, यदि झाँसी से सीधे दोहद के टिकट लिए जाएँगे तो किसी को सन्देह हो सकता है। अत सतर्कता के नाते उन्होने झाँसी से भोपाल के टिकिट लिए। भोपाल से उज्जैन के टिकट लिए और उतर पड़े।

आजाद ने उज्जैन उतर कर नगर-भ्रमण प्रारम्भ कर दिया। क्षिप्रा के घाटो पर स्नान-ध्यान किया। जो स्थान उन्होने बैठने के लिए चुना वह एकान्त का था और वहाँ एक छत्री बनी हुई थी। सयोग की बात देखिए कि यह छत्री वीरवर दुर्गादास की छत्री थी, जहाँ दो क्रान्ति-वीर विश्राम कर रहे थे।

आजाद ने उज्जैन से नागदा के टिकिट लिए और नागदा से दोहद के। इस प्रकार खण्ड-खण्ड मे अपनी यात्रा सपन्न करके वे सकुशल अपने गाँव पहुँचे गए।

आजाद केवल अपने लिए ही सतर्क नही रहते थे पर अपने सभी साथियो के लिए सतर्क रहना वे अपना उत्तरदायित्व समझते थे। एक बार शचीन्द्र नाथ बख्शी एक पिस्तौल का परीक्षण करने लगे। पिस्तौल की नाल भगवान दास माहौर की ओर थी। शचीन्द्र जी का ख्याल था कि पिस्तौल खाली है। पिस्तौल के घोडे पर उनका हाथ गया और उसे आधा दबा भी दिया। इतने मे ही वज्र-वेग से आजाद ने उनका हाथ ऊँचा कर दिया। पिस्तौल

चल गई और गोली छत मे जाकर लगी। यदि आजाद यह सतर्कता न वरतते तो माहौर की जीवन लीला समाप्त ही थी।

आजाद की सूझ-बूझ

किसी परिस्थिति पर शान्त मन से चिन्तन करके निर्णय ले लेने का कार्य तो वहुधा सभी कर लेते है पर आकस्मिक रूप से किसी गभीर स्थिति का निर्माण हो जाने पर कोई सही कदम उठा लेना विरलो का ही काम होता है। आजाद इन्ही विरलो म से थे, पलक मारते ही किसी स्थिति की संभावनाओ को समझकर उसके दुष्परिणाम से स्वय भी वच पाते थे और अपने दल को भी वचा लेते थे। अपनी इस प्रत्युत्पन्न मति के कारण ही वे सकटो के पहाड को रुई की तरह उडा देते थे।

ग्वालियर के जनकगज मुहल्ले मे आजाद ने वम का कारखाना स्थापित किया था। जिस मकान मे उन्होने यह काम प्रारम्भ किया था उसका मालिक वहुधा उनसे मिलने चला आया करता था। उनके दो छोटे-छोटे वच्चे भी इनसे हिल गए थे। इन लोगो के आने-जाने को ये इसलिए प्रोत्साहित करते थे कि किसी को किसी गोपनीय कार्य का सन्देह न हो। एक वार आजाद और उनके साथी कमरा वन्द करके लगोट चढा कर वम का मसाला तैयार कर रहे थे। इसी समय वे परिचित वालक-मित्र आगए और उनमे से एक ने अपना छोटा हाथ अन्दर डाल कर कुडी खोली दी। ठीक उसी समय मकान मालिक भी धडधडाता हुआ आता दिखाई दिया। ये लोग नग-धडग तो थे ही और वमो का मसाला भी इधर-उधर विखरा पडा था। इतना अवकाश भी नही था कि कपड़े पहन सकते और सामान को इधर-उधर कर सकते। आजाद ने तहमत वॉधते-वॉधते एक मटके का पानी इस तरह ठेल दिया कि वच्चे और उनके पिता जी पानी का रेला आते देख वही ठिठक कर रह गए। आजाद वोले "आइए! जरा ठहरिए! कुछ बिच्छू-इच्छू न निकले इसलिए हम लोग सफाई कर रहे है। आ जाइए! निकल आइए!·· अच्छा ठहरिए!" आजाद ने उनको वातो मे कुछ देर उलझाए रखा और इतनी देर मे अत्यन्त फुर्ती से साथियो ने भी तहमत लपेट लिए और वम का सामान इधर-उधर छिपा दिया। यदि उन्होने सूझ-वूझ स काम न लिया होता तो सारा भडा-फोड हो जाता।

इसी प्रकार एक स्थिति और आई थी जव एक वच्चे ने काम विगाड दिया होता।-आजाद के ही साथी डॉ० भगवानदास माहौर से सुनिए—

"एक बार भाई सदाशिव के घर मे ऊपर अटारी मे आजाद हम लोगो

को एक नई पिस्तौल और उसको चलाने, भरने आदि की बातें सिखा रहे थे। सदाशिव का डेढ़-दो साल का भानजा भी वहीं पर था। यों तो सब तरफ के किवाड़ बन्द करके साँकल लगा दी गई थी ताकि सहसा घर का कोई व्यक्ति वहाँ चला न आए, परन्तु यह समझ कर कि यह बच्चा अभी क्या समझे, उसके सामने ही पिस्तौल निकाल लिया गया और उसकी सब क्रियाएँ आजाद ने हम लोगों को समझायीं। बच्चा सब देखता रहा। इत्तिफाक ऐसा हुआ कि उस बच्चे के पिता, यानी भाई सदाशिव के बहनोई ने वहाँ आना चाहा और उनके लिए कुंडी खोलने के पहले यों ही एक तकिए के नीचे पिस्तौल छिपा लिया गया। मगर जैसे ही सदाशिव के बहनोई कमरे में घुसे, तो वह बच्चा किलक के तुरन्त बोला, "काका दम्बूक !" अब हम लोग सब सन्न होकर रह गए कि यह बच्चा क्या गजब ढाने वाला है। हम लोग तो एक-दूसरे का मुँह देखने लगे परन्तु आजाद तुरन्त उस बच्चे से खेल के लहजे में भिड़ गए, "हाँ चलाओ बन्दूक, चलाओ !" और आप अपने बाँए हाथ की मुट्ठी को बन्दूक की नली का आकार बना कर और उसके पीछे अँगूठे में दाँए हाथ की तर्जनी से आँटा देकर मध्यमा और अंगूठे से चुटकी बजाकर मुँह से बड़ी जोर से बोले, "धूड़ङ !" फिर जिस तकिये के नीचे पिस्तौल छिपा ली गई थी उस पर आजाद स्वयं बैठ गए और आपने बच्चे को गोद में उठा लिया, उसका मुँह तकिये से दूसरी दिशा में करके बोले, "तुम भी बनाओ बन्दूक !" और आपने उसकी मुट्ठी से उसी प्रकार बन्दूक बनवा कर चुटकी बजवाई और कई बार बड़े जोर से बोले "धूडङ !-धूडङ !" बच्चा खेल में लग गया नहीं तो तकिए के नीचे बन्दूक होने का इशारा वह कर ही रहा था और यदि कहीं सदाशिव के बहनोई उस दिन उस पिस्तौल को देख लेते तो जाने क्या-क्या उपद्रव न हो जाता।"

इस प्रकार की होती थी आजाद की सूझ-बूझ। बिगडी हुई या बिगडती हुई स्थिति को सम्हाल लेने में उन्हें कमाल हासिल था। २७ फरवरी सन् १९६५ ई० को जब भावरा में आजाद का बलिदान-दिवस मनाया गया था तो उनका अस्थि-कलश लेकर उनके फूफा प० शिवविनायक मिश्र वैद्य भी आए थे। आजाद की सूझ-बूझ के दो किस्से उनसे भी मालूम हुए—

बात उन दिनो की है जब बनारस मे चन्द्रशेखर आजाद सस्कृत विद्यापीठ मे पढ रहे थे। उस समय उनकी उम्र चौदह-पन्द्रह वर्ष की थी। असहयोग मे बेतो की सजा पा चुके थे और कॉंग्रेस के स्वय-सेवक की तरह कार्य करते थे। कॉंग्रेस ने अपना कोई नोटिस छपवाया और गोपनीय रूप से उसे सब जगह चिपकाना था। माननीय सम्पूर्णानन्द जी ने नोटिस की एक प्रति आजाद को दी और पूछा, "क्या तुम यह नोटिस अभी पुलिस कोतवाली के सामने बिजली के खम्भे पर चिपका सकते हो ?" आजाद ने उत्तर दिया, "इसमे कौन-सी बडी बात है।" आजाद ने वह पर्चा लिया और उसमे जिस तरफ लिखावट थी उस तरफ किनारो पर थोडी लेई लगा कर अपनी पीठ पर चिपका लिया और दूसरी ओर अर्थात् कागज की पीठ पर ज्यादा लेई लगा दी। आजाद अपनी पीठ पर उलटा नोटिस चिपका कर सिपाही के पास गए जो खम्भे के पास ही खडा था। खम्भे की तरफ पीठ करके आजाद खडे हो गए और सिपाही से बाते करने लगे। थोडी देर तक वे खम्भे से सटकर खड़े रहे और अपनी पीठ खम्भे मे रगड कर वह नोटिस उस पर चिपका दिया। बातो मे लगाकर वे सिपाही को दूसरी तरफ ले गए और खम्भे से दूर हटा कर उससे राम-राम करके चलते बने। थोडी देर पश्चात् राह चलने वाले उधर से निकले तो खम्भे पर नोटिस चिपका देखकर उसे पढने लगे। काफी भीड इकट्ठी होने लगी। सिपाही यह देख-देख कर बहुत परेशान हुआ कि उसके निरन्तर वही खड़े रहने पर भी वह नोटिम कौन चिपका गया। शायद उस दिन से वह अपने उस बाल-मित्र की तलाश मे जरूर रहा होगा।

फरारी की दशा मे भी आजाद बनारस काफी रहे। काशी के बैजनत्था मुहल्ले मे आजाद एक बुढिया के घर ठहरा करते थे जो कोयले की दूकान चलाती थी। एक बार पुलिस को आजाद के वहाँ होने कासदेह हो गया। पुलिस ने बैजनत्था मुहल्ले को घेर कर आजाद को पकडना चाहा। बुढ़िया के मकान मे पुलिस को आता देख आजाद कोयले के एक खाली बोरे मे घुस गए और बुढिया से कहा, "अम्मा मेरे ऊपर कोयला डालकर बोरा खुला छोड़ देना और पुलिस वाले पूछे तो कह देना कि एक तगडा-सा लडका आया जरूर था पर पीछे से दीवाल कूद कर निकल गया।" बुढिया ने ऐसा ही किया। पुलिस आई। घर का कोना-कोना छान मारा, आजाद को कोसते भी रहे और फिर जिधर से दीवाल फाँदने की सभावना थी उधर पहुँच कर पडौस के मकान की तलाशी लेने लगे। इधर आजाद समाधिस्थ होकर कई घटे बोरे मे बैठे रहे और बुढिया के बताने पर कि अब कोई नही है, बोरे से

बाहर निकले। कोयले मे ढके होने के कारण आजाद काले भूत बन रहे थे। धोती और ऊपर चढाई और कोयले का एक खाली बोरा कधे पर डाल कर चलते बने। कौन कह सकता था कि वे कोयला ढोने वाले हम्माल नही थे।

आजाद की सूझ-बूझ सदैव ही उनके सक्रिय मस्तिष्क की क्षमताओ का परिचय देती थी। एक ओर जहाँ वे शारीरिक बल मे भीम थे, तो दूसरी ओर उनकी प्रखरबुद्धि भी लोगो को आश्चर्य मे डालती थी। क्रान्तिकारियो के गोपनीय पर्चे बाँटने के काम वे अपने ऊपर ही लेते थे। एक बार एक पर्चा जो एक ही दिन मे सारे भारतवर्ष मे बाँटा गया था, बनारस के घर-घर मे उसे पहुँचाने का काम आजाद ने ही किया था। हर दफ्तर का जो भी रजिस्टर खोला जाता, उसमे वह पर्चा निकलता था। कही चपरासियो को और कही बाबुओ को अपनी ओर मिलाकर आजाद ने यह कार्य किया था।

दल के प्रति निष्ठा एवं निःस्वार्थ त्याग व ईमानदारी

आजाद का जीवन अपने स्वय के लिए नही; वरन् देश, समाज और अपने दल के लिए था। निरन्तर भूख-प्यास और थकान से चूर होकर भी वे दल के काम मे कभी शिथिलता नही आने देते थे। कई बार ऐसे अवसर आते थे जब दिन-दिन भर भागना पडता था, रात-रात भर जागना पड़ता था और सामने आया हुआ भोजन त्यागना पडता था, पर आजाद थे जो सब तरह का उत्पीडन सहकर भी शिकायत या शिकवे का भाव तक अपने मुख पर नही आने देते थे। वे समझते थे कि उनकी निराशा, पूरे दल की निराशा बन जाएगी। अपने सभी साथियो को हँसाते, गुदगुदाते, समझाते, डाटते, फटकारते और पुचकारते और उनसे दल का काम कराते। जीवन का एक-एक क्षण एक निष्काम साधक की भाँति वे देश के हित-चिन्तन मे लगा रहे थे। अपनी स्वय की बात जाने दीजिए अपने माता-पिता की विपन्नावस्था की चिन्ता भी उन्हे नही थी। यह जानते हुए भी कि माता-पिता को दोनो समय भोजन नही मिल रहा है और उनकी जीवन-ज्योति बिना तेल के दीपक की भाँति क्षीण होती जा रही है, कभी उन्होने किसी से भी उनके संकटो का उल्लेख भी नही किया और जिस किसी ने थोडी सहानुभूति दिखाई भी, उसे डाट दिया। इस सम्बन्ध मे भगतसिह उनकी फटकार सुन ही चुके थे। एक बार स्व० श्री गणेशशकर विद्यार्थी ने भी उनके माता-पिता के पास कुछ पहुँचाना चाहा, पर आजाद ने वह रास्ता ही बन्द कर दिया। घटना इस प्रकार है—

आजाद स्वय तो अपने माता-पिता से मिलने बार-बार अपने घर भावरा

नही जा सकते थे, वे कभी-कभी अपने मित्र श्री मनोहरलाल त्रिवेदी को अपने पास बुलाकर माता-पिता का कुशल-क्षेम पूछ लेते थे। एक बार उन्होने कानपुर मे त्रिवेदी जी को बुलवाया। त्रिवेदी जी कानपुर पहुँचे और आजाद से मिले। वे स्व० श्री बालकृष्ण शर्मा नवीन से भी मिले और आजाद के माता-पिता के निर्धनता-जन्य कष्टो का चित्रण भी उनके सामने किया। श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' और श्री गणेशशकर विद्यार्थी का आग्रह था कि आजाद के माता-पिता की कुछ सहायता कर दी जाए। आजाद को इसकी जानकारी नही थी। विद्यार्थी जी के अस्वस्थ होने के कारण श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने दो-ढाई सौ रुपए तभी दिए और विद्यार्थी जी के स्वस्थ होने पर आगे और व्यवस्था करने का आश्वासन दिया। श्री मनोहरलाल त्रिवेदी ने कभी एकान्त पाकर आजाद को यह बात बताई। आजाद एकदम क्रोधित होगए और श्री त्रिवेदी जी से वे रुपए छीन लिए। अपने पलग के पास रखी हुई अलमारी का ताला एक ही झटके मे तोड़कर अलमारी खोली और उसमे वे रुपए डाल दिए। अलमारी मे पहले स भी कुछ रुपए पडे हुए थे। आजाद क्रोध के आवेग मे त्रिवेदी जी से कहने लगे—

"क्या मै अपने माता-पिता के लिए भीख माँगता हूँ? यह रुपया भी मै अपनी जान पर खेलकर लाया हूँ। अगर इन्हें मै दे दूँ तो कोई मेरा क्या कर लेगा? लेकिन मै ऐसा नहीं कर सकता। यह पैसा केवल मातृ-भूमि की सेवा के लिए ही है। केवल मेरे ही माता-पिता नही है। सभी क्रान्तकारियो के माता-पिता है। आप मेरे माता-पिता का ध्यान रखना। मै अगर उन्हे कष्ट में देखूँगा अथवा सुनूँगा, तो पिस्तौल की दो गोलियाँ उनकी सेवा करने के लिए बहुत होगी। मै उनकी यही सेवा कर सकूँगा। मेरे माता-पिता के विषय में या मेरे न रहने पर भी मेरे विषय में, या मुझसे अपने सम्बन्ध के विषय में किसी से कुछ कहकर अथवा लिखकर कभी किसी प्रकार का लाभ उठाने का प्रयत्न न करना।"

बेचारे मनोहरलाल त्रिवेदी की सिट्टी-पिट्टी गुम होगई। जब तक आजाद के माता-पिता जीवित रहे, वे यथाशक्ति उनकी सहायता करते रहे और उनका दुख-दर्द किसी को नही सुनाया। आज वे स्वय भी उसी दशा मे रह कर आजाद के स्मृति-चिह्न—उसकी कुटिया की रक्षा कर रहे है।

विभिन्न साधनो से दल की जो आय होती थी, उसका हिसाब स्वयं आजाद रखते थे और एक पैसा भी फालतू खर्च नही होने देते थे। जब सामूहिक भोजन बनता तो खिचड़ी सबसे अधिक पसन्द की जाती थी जो थोड़े समय मे ही बिना झझट के बन जाती थी। दाल और रोटी बनाते समय किसी मटके को फोडकर उसके खप्पर मे दाल बनती थी और उसी खप्पर के चारों ओर बैठकर हाथो मे रोटियाँ लेकर सब लोग खाते थे। कभी-कभी दोनो समय के भोजन के लिये प्रति सदस्य चार आने के हिसाब से आजाद सबको पैसे बाँट देते थे। यदि कोई उन पैसो को अन्य कामो मे खर्च करदे तो उसे भूखा ही रहना पडता था या आजाद अपने पैसो मे से कुछ उसे देकर स्वय अध-पेट या भूखे रह जाते थे। कठिन से कठिन स्थिति मे भी आजाद एक पैसा भी फालतू खर्च नही करते थे क्योकि दल के धन की रक्षा करना वे अपना नैतिक कर्तव्य समझते थे।

जहाँ एक ओर विविध उपायो से शस्त्र आदि क्रय करने के लिये अर्थ-सग्रह किया जाता था वहाँ आजाद अनैतिक उपायो को सदैव हतोत्साहित करते थे। जिस समय आजाद ओरछा के जगलो मे आश्रय लिये हुये थे, उन दिनो ग्राम ढिमरपुरा के नम्बरदार से उनका घरोपा हो गया था। उन दिनो गाँवो मे डाके पडा करते थे इसलिये नम्बरदार अपनी तिजोरी की चाबी आजाद के पास रखते थे। आजाद तिजोरी की वह चाबी अपने जनेऊ में बाँधे हुये झाँसी, दतिया और आस-पास के गाँवो मे घूमते रहते थे। आजाद को तिजोरी की चाबी देने मे उनके प्रति अटूट विश्वास तो सबसे बड़ा कारण था ही, दूसरा कारण यह भी था कि नम्बरदार जानते थे कि यदि चाबी स्वयं उनके पास रहेगी तो डाकू लोग उनसे छीन सकते है पर आजाद से चाबी छीनना असंभव-सी बात है। तिजोरी की चाबी निरतर उनके पास रहते हुये भी आजाद ने उसमे से कभी एक पैसा निकालने का विचार भी नही किया। यदि वे चाहते तो किसी भी दिन उसकी सफाई करके भाग सकते थे। अपने चरित्र पर दगा और चोरी का लाछन उन्हे कैसे सहन होता?

आजाद की नारी-भावना

आजाद की चारित्रिक विशेषताओ मे नारी के प्रति उनकी सम्मान-भावना गर्व करने की वस्तु है। उनके जीवन मे नारी केवल माँ बनकर आई और अन्त तक उनके इस दृष्टिकोण मे परिवर्तन नही हुआ। एक सच्चे क्रान्तिकारी होने के नाते, अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिये वे व्यर्थ की बातो मे उलझना भी नही चाहते थे। चूँकि आजाद अधिक पढ़े-लिखे नही थे और

जीवन के प्रारम्भिक दिनो मे उन्हे सामान्य वातावरण मे रहना पडा था, इसलिये नारी के प्रति उनकी भावना कुछ-कुछ उसी कोटि की थी जैसी साधु-सतों की होती है, जो लक्ष्य की प्राप्ति मे नारी को बाधक मानते है। क्रान्तिकारी जीवन के प्रारम्भ मे नारी से दूर-दूर रहने की भावना स्वय उनमे भी थी और इसका उपदेश वे अपने साथियो को भी देते रहते थे। ससार के अनुभवो के आधार पर उनकी यही धारणा बनी थी कि नारी के प्रति सम्मोहन, साधक को अपने लक्ष्य से दूर कर देता है।

श्री यशपाल ने सिंहावलोकन मे आजाद का एक सस्मरण लिखा है—

"एक रोज राजगुरु कही से बहुत सुन्दर स्त्री की तस्वीर का एक कैलेन्डर ले आया और लाकर नाई की मंडी (आगरा) वाले मकान में लटका दिया। आजाद कही बाहर से लौटे। बच्चन (वैशम्पायन) ने उस कैलेन्डर की ओर सकेत किया—भैया देखो, यह कौन ले आया?

आजाद ने कैलेण्डर की ओर देखा। माथे पर बल पड़ गए। कैलेन्डर को कील समेत दीवार से खींच लिया और पकड़ कर फेंक दिया।

थोड़ी देर बाद राजगुरु लौटा। दीवार से अपना कैलेन्डर गायब देखकर ऊँचे स्वर मे पुकार उठा—"अरे! हमारा कैलेन्डर क्या हुआ?"

बच्चन ने होठ दबाकर फर्श पर पड़े कैलेन्डर के टुकड़ो की ओर देखा। राजगुरु ने झुँझलाहट और क्रोध के स्वर में प्रश्न किया—"यह किसने किया?"

"हमने किया।" आजाद भला किससे डरते थे।

आजाद के प्रति आदर से स्वर को कुछ धीमा कर राजगुरु ने विरोध किया—"आपने क्यों फाड़ डाला? हम इतने शौक से तस्वीर लाये थे।"

"हमें-तुम्हे ऐसी तस्वीरों से क्या मतलब?" आजाद ने डपट दिया। "वाह! कितनी खूबसूरत थी।"

"हमें तुम्हे खूबसूरत से मतलब? नाराजगी से ऊँचे स्वर में आजाद ने डॉटा।

"तो जो खूबसूरत होगा, उसे फाड़ डालोगे, तोड़ डालोगे?" राजगुरु भी अड़ गया।

"हाँ तोड़ डालेंगे।" आजाद ने सीना तान लिया।

"तो जाकर ताजमहल को भी तोड़ डालो।" राजगुरु ने चुनौती दी।

"हाँ तोड़ डालेंगे, जब हमारा वश चलेगा।" आजाद की आँखों में सुर्ख डोरे उभर आए।

दूसरे साथियों को होंठ दबाए, आँखे चुराते देख राजगुरु की झल्लाहट मुस्कराहट में बदल गई।"

इस सबसे यही निष्कर्ष निकलता है कि आजाद क्रान्ति-साधना को योग-साधना से कम नही समझते थे और इसीलिए वे नारी-सम्मोहन से दूर रहने का उपदेश देते थे।

आजाद नारी को नही, वे पुरुष की दुर्बलता और उसके असंयम को बुरा समझते थे। नारी के प्रति तो उनके हृदय मे अपार श्रद्धा-भावना भरी थी। दल का कार्य करते हुए भी नारी के प्रति कभी उन्होने असम्मान प्रकट नहीं किया और न किसी को करने दिया। श्री मन्मथनाथ गुप्त ने आजाद की नारी-भावना का एक सुन्दर सस्मरण दिया है—

अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व मे प्रतापगढ़ जिले के एक गाँव मे डाका डाला गया जिसमें मन्मथनाथ गुप्त और चन्द्रशेखर आजाद भी सम्मिलित हुए। भवन के जिस भाग मे आजाद को नियुक्त किया गया था उस ओर घर की महिलाओ ने आजाद पर आक्रमण कर दिया और डंडों आदि से आजाद की पिटाई प्रारम्भ कर दी। उन्हे पिटाई करने का प्रोत्साहन इसलिए और मिला कि आजाद प्रतिरोध नही कर रहे थे और किसी भी महिला के ऊपर हाथ उठाना भारतीय सस्कृति के प्रतिकूल समझते थे। स्थिति यहाँ तक बिगडी कि महिलाओ ने आजाद की पिस्तौल पकड़ ली और उसे छीनने लगी। यदि वे चाहते तो उन्हे एक ही धक्के मे पीछे हटा सकते थे या उन्ही के डंडे छीन कर उनके ऊपर ही प्रयोग कर सकते थे, पर आजाद ने ऐसा नही किया। परिणाम यह हुआ कि महिलाओ ने आजाद की पिस्तौल तक छीन ली और आजाद ने फिर भी उन पर आक्रमण नही किया। इसी समय एकदम वापिस चलने के लिए नेता का आदेश मिला और आजाद महिलाओ के हाथ से मार खाकर तथा नारी-सम्मान मे उन्हे पिस्तौल समर्पित करके वापिस चले गए। जब बिस्मिल ने यह कहानी सुनी तो उन्हे पिस्तौल चले जाने का दुःख तो हुआ पर आजाद के चरित्र पर गर्व अधिक हुआ।

जिन दिनो दल का नेतृत्व आजाद के हाथों मे आ गया, फिर तो वे नारियो के सम्मान का और भी अधिक ध्यान रखने लगे। उन दिनो एक अँग्रेज सम्पादक क्रान्तिकारियो के प्रति बहुत कुत्सित बाते लिखा करता था।

सब लोग उससे क्रुद्ध थे। आजाद के एक साथी ने योजना प्रस्तुत करते हुए कहा कि वह संपादक अमुक समय पर अपनी पत्नी के साथ मोटर साइकिल पर घूमने निकलता है, तभी दोनों को मार दिया जाय। इस पर आजाद ने साथी को झिड़क दिया था।

"स्त्रियों और बच्चों पर हाथ उठाना, यही आतंकवादियों का धर्म होगा क्या?"

साथी ने अपनी भूल स्वीकार की। आजाद ने स्पष्ट निर्देश दे दिया था कि यदि किसी साथी ने किसी नारी के प्रति असम्मान प्रकट किया तो वह आजाद की गोली का शिकार होगा।

अनुबंधित प्रणय अपराध नहीं है, पर फिर भी आजाद के जीवन में प्रणय के क्षण आए ही नहीं और यदि आए भी तो आजाद ने उन्हें 'बैरंग' वापिस कर दिया। ओरछा में सातार सरिता के तट पर ब्रह्मचारी के रूप में रहते समय एक नारी के समर्पण को ठुकरा कर आजाद ने आस-पास के गाँवों में अपने चरित्र की वह धाक जमाई थी कि बहुओं और बेटियों के वे संरक्षक माने जाने लगे थे और गाँव से शहर तक आजाद के साथ अपनी बहू-बेटियों को भेजते हुए किसी को भी संकोच नहीं होता था। जो अपने जीवन का कोई निश्चित उद्देश्य बना कर उसकी पूर्ति के प्रयास में अपने को खपा देता है, वह इस प्रकार के प्रलोभनों से मार्गान्तरित नहीं होता। आजाद के व्यक्तित्व पर दृढ़ चरित्र की वह चमक थी जिसे मन की कोई भी दुर्बलता आँख खोल कर नहीं देख सकती थी।

अपने सिर पर कफन बाँध कर चलने वाला व्यक्ति शादी का सेहरा बाँधने की कल्पना कैसे कर सकता था। आजाद ही क्यों, उनके दल में जो भी व्यक्ति आया, वह अपने घर-बार को तिलांजलि देकर आया। क्रान्ति के पथ पर तो केवल मृत्यु ही प्रणयिनी बनती है। फिर आजाद जैसा ठोस लोहे का आदमी किसी सुकुमारी की मृणाल-बाहुओं में कैसे बँध कर रह सकता था। वह तो जंजीरें तोड़ने आया था, उनमें बँधने नहीं। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि जब किसी व्यक्ति के मन में कोई चोर होगा तो वह उसे छिपाने के लिए अपने आचरण का प्रदर्शन बहुत बढ़ा-चढ़ा कर करेगा और जो व्यक्ति बहुत साफ दिल का होगा वह कोई भी बात निःसंकोच रूप से कह सकता है। एक बार अपने दल में बैठे हुए आजाद ने अपनी भावी पत्नी की रूप-रेखा बताई थी। उस समय वहाँ यशपाल और प्रकाशवती भी चर्चाओं में भाग ले रहे थे और आजाद को मालूम था कि वे दोनों प्रणय में अनुबंधित हो चुके हैं, फिर भी सहज-स्वच्छन्दता के भाव से आजाद ने कहा—

"मैं सोचता हूँ, अगर मै ब्याह करूँ भी तो किससे करूँ ? मेरी तबियत के लायक लड़की मिल ही नहीं सकती, कम से कम हिन्दुस्तान में नहीं मिल सकती। इसी को देखो—प्रकाशपाल की ओर संकेत कर—यह दुइयाँ किस लायक है ? यह रायफल को उठाकर एक मील भी नही चल सकती। 'दीदी' ही को देखो, इन लोगों का शरीर क्या है ? हाँ भाभी कुछ है, पर वह भी कुछ नही। मुझे तो ऐसी चाहिए कि रायफल एक कंधे पर और दूसरे पर कारतूसों की बोरी लादकर पहाड़-पहाड़ पर घूमती फिरे। बस, इसी तरह लड़ते-लड़ते मर जायँ। ऐसी तो मिल सकती है फ्रंटियर में।"

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, यह आजाद की किसी मनोविकृत्यात्मक भावना का विस्फोट नही, वरन् उनकी सहज निश्छल चिन्तन-धारा का पावन प्रवाह है जिसमे पड़कर कलुप और खोट अस्तित्वहीन हो जाते है।

आजाद की नारी-भावना विकास करते-करते उस सीमा तक पहुँच गई थी जब क्रान्ति के क्षेत्र मे उनका सहयोग आवश्यक समझा जाने लगा था। उनके 'हिन्तुस्तान समाजवादी प्रजातत्र सेना' मे नारियो का सम्मानपूर्ण स्थान बन चुका था और सदस्यायो के रूप मे वे प्रतिगृहीत हो चुकी थी। बहन प्रेमवती, प्रकाशवती, सुशीला दीदी और दुर्गा भाभी की सेवाओ ने क्रान्तिकारी कार्यक्रम मे नई जान डाली दी थी। सगठन का यह नया स्वरूप आजाद की उदारता एवं विशाल-हृदयता का ही परिचायक है। इसीलिए तो आजाद के युग को सशस्त्र-क्रान्ति का प्रगतिशील युग कहा जाता है।

आजाद एवं किवदन्तियाँ

आजाद के विपय के किंवदन्तियो की कमी नही, वरन् भरमार ही है। जो व्यक्ति जितना महान हो जाता है, वह उतना ही बहु-चर्चित भी हो जाता है। गुण-चर्चाएँ ही किंवदन्तियो का रूप धारण कर लेती है। किंवदन्तियाँ मानव-चिन्तन की वे धाराएँ है जो यथार्थ के धरातल पर नही, कल्पना के अधर मे शत-मुखी होकर प्रवाहित होती है। किंवदन्तियाँ भावुकों की इच्छाओ एव मनोभावो के साकार रूप मे अवतरित होकर अपने इष्ट-देव की चरम-अभ्यर्थना मे अपने अस्तित्व की सार्थकता समझती है। मनोवैज्ञानिक विश्लेषण से किंवदन्तियो के कुछ आधारो का निरूपण हम इस प्रकार कर सकते है—

१. अपने श्रद्धास्पद व्यक्तियो के गुणो का बढा-चढ़ा कर बखान करने की प्रवृत्ति सामान्य रूप से सभी मे पाई जाती है।

२. एक मुँह से दूसरे मुँह तक वात पहुँचने मे इतने परिवर्तन आ जाते है कि वात मौलिक न लग कर एकदम मन-गढ़त लगने लगती है।

३. महान व्यक्तियो से अपने संवन्धो की चर्चा करने मे सभी गौरव का अनुभव करते हैं। और इसीलिए वास्तव मे सम्बन्ध न होते हुए भी काल्पनिक सम्बन्धो की स्थापना करके गौरव की अनुभूति की जाती है।

आजाद के विपय मे ये सभी सत्य चरितार्थ होते है। आज भी कई व्यक्ति यह कहते हुए मिलते है कि उन्होने आजाद को देखा था, उसका सानिध्य प्राप्त किया था और अमुक-अमुक प्रकार से उसकी सहायता की थी। सामाजिक प्रतिष्ठा का लोभ लोगो को इस प्रकार की किंवदन्तियाँ गढने के लिए वाध्य करता है।

आजाद लगभग सन् १६२६ मे कुछ दिन वम्वई मे रहे थे। उस समय वे मजदूरी करके पेट भरा करते थे और उन दिनो उनसे सवधो की स्थापना वहुत वडे अनिष्ट के निमत्रण से कम नही थी। आज जव वे महापुरुषो की श्रेणी में गिने जाते है, तो अव उनसे अपने निकट के सम्वन्धो का उल्लेख करने वाले अगणित निकल आते है। वम्वई मे एक महिला है जिन्हे आजाद की पत्नी कहा जाता है। आश्चर्य की बात यह है कि जव उन श्रीमती से इस सवध मे कुछ पूछा जाता है तो वे अस्पष्ट 'हाँ-हूँ' करके 'मौन सम्मति लक्षण' की स्थिति का लाभ उठा लेती है। उनका उल्लेख करने वाले एक सज्जन से मैंने पूछा कि उन श्रीमती की इस समय (सन् १६६६ मे) क्या अवस्था होगी तो उन्होने उनकी अवस्था लगभग ४५ वर्ष बताई। अब आप ही हिसाब लगा कर देखिए—

यदि आज आजाद जीवित होते तो उनकी अवस्था ६० वर्ष की होती और इस हिसाव से वे उन श्रीमती जी से १५ वर्ष वडे ठहरते। आजाद जव सन् १६२६ ई० मे वम्वई मे थे तव उनकी अवस्था लगभग २० वर्ष रही होगी और इस हिसाव से उन श्रीमती जी की अवस्था उस समय केवल ५ वर्ष की रही होगी। पाठको मे से कोई भी क्या इस प्रकार की कल्पना कर सकते है कि वीस वर्ष के पट्ठे आजाद ने क्या पाँच वर्ष की वालिका के साथ शादी की होगी ? उन श्रीमतीजी को चाहिए कि अव वे कोई नई कहानी गढे।

किंवदन्तियो का प्रसग चल पड़ा है, इसलिए उनकी निस्सारता प्रकट करने के लिए एक और उदाहरण दे रहा हुँ—

अमर हुतात्मा वटुकेश्वर दत्त से मै उस समय मिला था जब वे दिल्ली के सरकारी अस्पताल मे पड़े हुए जीवन की अन्तिम घड़ियाँ गिन रहे थे।

हम लोगों ने लगातार दस घण्टे तक वातचीत की। अपने वच्चो को उन्होने हठ करके कही कोई सर्कस देखने भेज दिया था। हम लोगो के सौभाग्य से उस दिन क्रान्तिकारी पत्रकार श्री चमनलाल आजाद भी नही आ सके थे, अन्यथा दत्त जी के शुभचिन्तक होने के नाते वे हम लोगो को इतनी देर तक बाते नही करने देते। हाँ तो दत्त जी ने कहना प्रारम्भ किया—

"सरल जी! यहाँ मुझे देखने कई व्यक्ति आते हैं और कई प्रकार से वे हमारी सेवाओं के प्रति युग की उदासीनता का उल्लख करके हमारे साथ सहानुभूति प्रदर्शित करते है। कुछ दिन पूर्व ही एक सज्जन आए और कहने लगे—"क्रान्तिकारियों के आश्रितों की आजकल बड़ी दुर्दशा हो रही है, उन्हें कोई नही पूछता। कल ही मेरे पास अमर शहीद सरदार भगतसिंह की पत्नी आई थीं। वे और उनका बच्चा दोनों भूखों मर रहे थे। मैने उन्हें तत्काल सौ रुपए दिए और आवश्यकता के समय फिर भी लेते रहने का अनुरोध किया।"

उन सज्जन के मुंह से भगतसिंह की पत्नी और उनके बच्चे की बात सुन कर मै तड़प उठा और उनकी अच्छी तरह खबर लेकर उन्हें बताया कि भगतसिंह ने तो शादी ही नहीं की थी। वे सज्जन (?) कोई बहाना बना कर ऐसे रफू हुए जैसे चुनाव जीतने के बाद नेताओं के वायदे रफू हो जाते है।"

जब क्रान्तिकारियो एवं शहीदो के साथियों के जीवित रहते हुए मनगढत बातो का यह हाल है, फिर उनके उठ जाने के पश्चात् क्या होगा। आजाद के विषय मे भी सैकड़ो मनगढ़ंत बाते कह कर लोग गौरवान्वित होते है। कथन की पुष्टि स्वय आजाद के क्रान्तिकारी साथी श्री भगवानदास माहौर के शब्दो मे इस प्रकार पढी जा सकती है—

"अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद का संपूर्ण प्रामाणिक जीवन चरित्र हम लोगों में से कोई एक व्यक्ति अलग से लिख ही नही सकता, और हम यह देख ही रहे हैं कि आजाद के विषय में अनेक मिथ्या कल्पित किंवदन्तियाँ लोगों में चल पड़ी है। समाचार पत्रो और सामयिक पत्रों में आजाद सम्बन्धी लेख कभी अर्द्ध, सत्य, कभी पूर्णतः कल्पित बातों से भरे ही छपते रहते हैं।"

आजाद का चिन्तन

आजाद चिन्तक नही, कर्मयोगी थे। वे सोचते कम थे, काम अधिक

करते थे। इसका अर्थ यह न लिया जाय कि वे विना सोचे समझे काम करते थे। यहाँ सोचने-विचारने से तात्पर्य सैद्धान्तिक चिन्तन से है। किसी विशेष प्रकार की राजनीतिक विचार-धारा के चक्कर मे न पड़ कर आजाद अपनी दलगत योजनाओ को कार्य रूप मे परिणत करने के लिए सोचते भी थे और तदनुसार कार्य भी करते थे। आज के युग म राजनीतिक विचार धाराओं के कुछ सांचे हमने बना लिए है और उन्ही सांचो मे विठाकर हम प्रत्येक व्यक्ति को देखने के आदी हो गए है। फिर आजाद की विचार-धारा पर विचार करना आवश्यक ही है तो उनके कार्यों के आधार पर ही उनकी विचार-धारा निश्चित की जा सकती है। आजाद के विचारक रूप का विवेचन करने के पूर्व श्री यशपाल के इस कथन पर विचार करना होगा—

"आजाद विचारक नही, सेनापति था। जिन विचारों या उद्देश्यो को लेकर 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातंत्र सेना ने जान-जोखिम का मार्ग चुना था, उस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए आजाद ने कोई कसर न छोड़ी। उसका काम विचारों का विश्लेषण नहीं था, विचारों को लेकर चलने वाले सैनिको का संचालन करना था।"

क्या आजाद मार्क्सवादी थे ?

भगतसिंह-आजाद युग के कुछ अवशिष्ट क्रान्तिकारियो द्वारा मार्क्सवाद अपना लेने के कारण सहज रूप से ही आजाद के ऊपर भी इसी-विचार-धारा का आरोप किया जाता है। वस्तुस्थिति इससे भिन्न है। आजाद मार्क्सवादी थे या नही, इस पर विचार करने के पूर्व मार्क्सवाद की मान्यताओ एव स्थापनाओ का स्वल्प विवेचन करना आवश्यक प्रतीत होता है।

मार्क्सवाद के सस्थापक हैनरिक कार्ल मार्क्स, वैज्ञानिक समाजवाद के पिता है। उनके पूर्व श्रमिकवाद केवल एक विचार या आकाक्षा के रूप मे विद्यमान था, परन्तु मार्क्स ने उसे वैज्ञानिक आधार प्रदान कर उसे एक महान शक्ति के रूप मे सगठित कर दिया।

मार्क्स के विचारो के दार्शनिक विचारो के आधारो को हम इस प्रकार श्रेणीवद्ध कर सकते है—

(१) द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद और वर्ग-सघर्ष, (२) इतिहास की भौतिकवादी या आर्थिक व्यवस्था, (३) अतिरिक्त मूल्य का सिद्धात, (४) पूँजीवाद के विषय मे भविष्यवाणी, (५) सर्वहारावर्ग का अधिनायकत्व, और (६) राज्य विषयक सिद्धान्त।

मार्क्सवाद की इस वैज्ञानिक समीक्षा के आधार पर यदि हम देखें तो पाएँगे कि चन्द्रशेखर आजाद इस प्रकार के मार्क्सवाद से सर्वथा अनभिज्ञ थे । आजाद ही क्या, उनके सभी साथी मार्क्सवाद के विषय मे कोई स्पष्ट धारणा नही रखते थे । रूस से कुछ साहित्य फ्रन्टियर होता हुआ पजाब मे पहुँचता था और लोग चोरी-चोरी उसे पढते थे । यशपाल और भगतसिह उन विचारो को अपना चुके थे पर फिर भी उस समय उसके सिद्धान्तो को वे भी हृदयंगम नही कर सके थे । आजाद ने कुछ तो इन लोगो के सपर्क मे तथा कुछ अपनी अनुभूतियो से समाज की कुछ भावना की थी और उसके आधार पर हम कह सकते है कि आजाद यद्यपि मार्क्सवादी नही थे, फिर भी उनके विचार कही-कही मार्क्सवाद से मेल खा जाते है ।

जैसा कि कहा जा चुका है, चन्द्रशेखर आजाद विचारक नही, साधक थे । उनके कर्त्तव्य से उनके चिन्तन का पता लगाया जा सकता है । द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद आदर्श के स्थान पर भौतिकता को सत्य मानता है और विचारक के स्थान पर वस्तु को प्रधानता देता है । आजाद यथार्थोन्मुख आदर्शवादी थे । वे जीवन और जगत को सत्य मानकर जूझने की प्रक्रिया मे विश्वास रखते थे और अगले जीवन के सुखो की कल्पना करने के बजाय इस जीवन को ही दासता के अभिशाप से मुक्त करके उसे जीने के योग्य बनान चाहते थे ।

आजाद स्वय एक निर्धन परिवार मे उत्पन्न हुये थे जिस पर सपन्न वर्ग सब तरह से हावी था, अत. ऐसे व्यक्ति द्वारा अपने अधिकारों के लिए सघर्ष की बात सोचना स्वाभाविक ही था, अन्तर केवल इतना ही था कि आजाद पहले विदेशी शासको के वर्ग को समाप्त करना चाहते थे, फिर आन्तरिक वर्गो से जूझने की कल्पना उनके मन मे आती । उन्होने एक बार व्यक्त भी किया था कि देशी रियासतो मे जो अत्याचार होते है, उनसे भी कभी निबटने का कार्यक्रम उन्हे बनाना पड़ेगा ।

इतिहास की आर्थिक व्याख्या करना आजाद के वश का रोग नही था । वे इतिहास की व्याख्या करने नही आये थे, इतिहास का निर्माण करने आए थे । इतिहास के जिस युग मे वे स्वयं रह रहे थे वह एक मात्र दासत्व, सामंतवादी एव पूजीवादी युग था और उनके अभिशापों का नाश करने का बीड़ा उन्होने उठाया था ।

अतिरिक्त मूल्य के सिद्धान्त को समझने के लिए सर खपाने की आवश्यकता आजाद ने नही समझी । वे तो एक सिद्धान्त समझते थे कि श्रमिक को

उसके श्रम का उचित मूल्य मिलना चाहिए। आजाद स्वयं वम्बई मे रहकर श्रमिको की दुर्दशा अपनी आँखो से देख आये थे, इसलिए जब कभी श्रमिको के हितो की वात चलती तो वे अधिकारपूर्वक कुछ कह सकते थे। केन्द्रीय एसेम्बली मे बम विस्फोट कराने के पीछे भी श्रमिको का हित चिन्तन था।

पूँजीवाद के विषय मे आजाद ने कोई भविष्यवाणी नही की, उन्होने तो सघर्ष किया। वे ब्रिटिश शासन को ही सबसे बडा पूँजीवादी मानते थे जो भारत के वैभव का शोषण करके उसे खोखला बना रहा था। यही कारण है कि आजाद चन्दा वसूली मे विश्वास न करके अग्रेजी साम्राज्य पर ही डाका डालने के पक्ष मे थे। देश के पूँजीपति वर्ग से निबटना उनके द्वितीय कार्यक्रम का अग था।

सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के विषय मे आजाद के विचारो मे कोई मतभेद नही था। वे इस वर्ग को उचित स्थान दिलाने की कल्पना करते थे और इसके लिए उन्होने क्रान्ति का माध्यम चुना ही था।

राज्य के विषय मे आजाद की कोई स्पष्ट कल्पना नही थी। सबसे पहले तो अपने देश मे अपने राज्य की स्थापना उनका मुख्य उद्देश्य था। साथ ही साथ प्रजातान्त्रिक प्रणाली की रूप रेखा उनके दल ने अवश्य बनाई थी क्योकि उनके दल का नाम ही रखा गया था, 'हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र समाजवादी सेना।'

इस प्रकार हम देखते है कि आजाद के मन मे मार्क्सवाद के सिद्धान्त ग्रहण किए हुए नही वरन् स्वत अनुभूत थे। फिर भी उन्हे मार्क्सवादी नही कहा जा सकता।

क्या आजाद फासिस्ट थे ?

आजाद को कुछ लोग फासिस्ट भी कहते है, विशेष रूप से स्व० पं० जवाहरलाल नेहरू को आजाद के प्रति इस प्रकार का सन्देह हो गया था। इलाहाबाद मे रहते हुए आजाद एक दिन प० जवाहरलाल नेहरू से मिलने आनन्द भवन जा पहुँचे। प० नेहरू से उनकी खूब खुलकर बाते हुई। उनके साथ खाना भी खाया। बहस के बीच मे प० नेहरू ने यह निष्कर्ष तो निकाल लिया कि आजाद मार्क्सवादी नही है, पर उनके फासिस्ट होने का सन्देह उन्हे हो गया। इसका मूल कारण यह था कि आजाद तो केवल कर्मठ सैनिक की भाँति काम करना जानते थे, बहस करना नही। वे पंडित जी की बातो मे उलझ गए और उनकी बातो का ठीक-ठीक उत्तर न देने के कारण फासिस्ट समझ लिए गए।

मेरे मत से आजाद को फासिस्ट समझना, समझदारी की बात नही है। फासिज्म के सिद्धान्तो की मोटी रूप रेखाएँ इस प्रकार है—

१—फासिज्म अहिंसा मे अविश्वास रखता है।

२—वह आतकवादी उपायो को वैध मानता है।

३—वह सेना की प्रधानता से अपने उद्देश्यो की पूर्ति करना चाहता है।

४—फासिज्म क्रान्ति-विरोधी होकर साम्राज्यवादी तथा परोक्ष रूप से पूँजीवादी व्यवस्था को जीवित रखना चाहता है।

इन सिद्धान्तो के आधार पर हम देखेगे कि आजाद फासिस्ट विलकुल नही थे।

यह ठीक है कि आजाद अहिंसा मे अविश्वास रखते थे पर इसके साथ ही साथ वे अनावश्यक खून-खच्चर के पक्ष मे भी नही थे। हत्याओ के वे सर्वथा विरोधी थे और जब तक कोई अपरिहार्य कारण उपस्थित न हो जाय तव तक वे किसी की हत्या नही करते थे और न करने देते थे। वे साम्राज्यवाद से युद्ध अवश्य चाहते थे। अत आजाद फासिस्ट कोटि के व्यक्ति नही ठहरते।

फासिज्म का विश्वास आतकवादी उपायो मे रहता है। आजाद और उनके दल ने भी आतकवाद की नीति को स्वीकार किया था। आजाद कहा करते थे।

"अँग्रेज जब तक इस देश मे शासक के रूप में रहें, हमारी उनसे गोली चलती ही रहनी चाहिए। समझौते का कोई अर्थ नही है। अँग्रेजो से हमारा एक ही समझौता हो सकता है कि वह अपना बोरिया-बिस्तर सम्हाल कर यहाँ से चल दे।"

कहना न होगा कि आजाद के आतंकवाद और फासिज्म के आतकवाद मे वहुत अतर था। फासिज्म अकारण ही मार-काट, लूट पाट और दमन-चक्र से लोगो को आतकित करते रहना चाहता है कि वे सर ही न उठा सके। आजाद का विश्वास इस प्रकार के आतकवाद मे नही था। यदि लुक-छिप कर अँग्रेजो को मारना ही उनका उद्देश्य होता तो वे कईयो का सफाया कर चुके होते। वे तो उनके साथ युद्ध जैसी स्थिति चाहते थे और उनसे किसी प्रकार का समझौता उन्हे असह्य था। अत आजाद पर फासिस्ट होने का आरोप निराधार है।

सेना के जिस स्वामित्व की कल्पना फासिज्म करता है, वह आजाद के लिए असभव थी। आजाद के पास स्वतत्र राष्ट्रो की तरह विशाल सेना कहाँ से आती, वे तो स्वय 'सरफरोशी की तमन्ना' लिए हुए साथियो की

सेना तैयार कर रहे थे। उनके दल मे सेना की विशालता शस्त्र-सज्जा भले ही न रहे पर देश के लिए मर-मिटने की तीव्र भावना उनमे किसी सेना से कही अधिक थी और स्वय आजाद मे इतिहास के प्रसिद्ध सेनापतियों से किसी प्रकार की कम क्षमता नही थी। यदि आजाद के पास विशाल सज्जित सेना होती भी, तो वे उसके द्वारा दमन और अपने प्रभाव-स्थापना की बात न सोचते।

आजाद फासिज्म की क्रान्ति भावनाओ के ठीक विपरीत थे। क्रान्ति का साकार स्वरूप क्रान्ति-विरोधी कैसे हो सकता है। आजाद तो साम्राज्यवाद को जड मे उखाड कर उसके स्थान पर प्रजातान्त्रिक समाजवाद लाना चाहते थे जिसमे पूँजीवाद के सरक्षण का प्रश्न ही नही उठता। अतः सभी दृष्टियो से आजाद को फासिस्ट विचार-धारा का व्यक्ति बताना भारी भूल होगी और उनके प्रति अन्याय भी होगा।

क्या आजाद रूढिवादी थे ?

आजाद को रूढ़िवादी कहना अपनी अज्ञानता का परिचय देने के साथ उनके प्रति घोर अन्याय करना होगा। रूढिवाद की सकुचित धारा को तोड़कर आजाद विचारो के उन्मुक्त वातावरण मे विचरण कर रहे थे। आजाद का जीवन निरन्तर विकास-क्रम का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है। एक कट्टर सनातनी परिवार मे उत्पन्न होकर आजाद ने विचारो की जो प्रगति दिखाई वह उनके लिए एक बहुत बडी उपलब्धि मानी जायगी। आजाद जिस परिवार मे उत्पन्न हुए थे उसमे छुआ-छूत की भावना बहुत प्रबल थी। चौके के बाहर बैठकर भोजन करना निकृष्ट पाप माना जाता था। क्रान्ति के क्षेत्र म कदम रखते ही आजाद ने इस प्रकार के बन्धनो का काट कर फेक दिया।

अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल के सपर्क मे आकर आजाद पर आर्य-समाजी विचार-धारा का प्रभाव पड़ा था और उनकी प्रारम्भिक सनातनी कट्टरता एक दम दूर हो गई थी। खान-पान के विषय मे उन्हे कोई परहेज नही रह गया था और उनके ईश्वरवादी दृष्टिकोण मे भी परिवर्तन आया था। यह ठीक है कि आजाद अपने अज्ञातवास मे हनुमान-भक्त थे पर इस भक्ति के दो कारण प्रबल थे। एक तो यह कि अज्ञातवास मे रहते हुए उन्हे बाल-ब्रह्मचारी के सभी रूपो का प्रदर्शन करना अनिवार्य हो गया था। दूसरी बात यह थी कि केवल हनुमान ही क्या, वे सभी बलशाली व्यक्तियो के भक्त थे और उसी प्रकार की साधना स्वय भी करते थे। कुछ दिन तक आजाद

एक मठाधीश के सच्चे चेले के रूप मे रहकर उसी प्रकार की उदासी संतों जैसी साधना सफलता पूर्वक करते रहे थे। इसका यह अर्थ नही लेना चाहिए कि आजाद उस सन्त परम्परा मे दीक्षित हो गए थे। उनकी योजना तो यह थी कि कब वह मठाधीश मरे और कब वे उसके उत्तराधिकारी बन कर उसकी अटूट सपत्ति के स्वामी बनकर दल के कार्यो में उसका उपयोग करे। जब उन्होने देखा कि वह 'साला' मरता ही नही है, तो वे मठ छोड छाड़कर चले आए। ये सब बाते सिद्ध करती है, कि आजाद किसी भक्ति भावना को क्रान्ति की साधना के रूप मे अपनाते थे, अपने शाश्वत विश्वासो के रूप मे नही। सरदार भगतसिंह के साथ रहकर आजाद के विचारो में अत्यधिक परिवर्तन आया था। अब वे धर्म-कर्म और ईश्वरवाद के चक्कर मे न पड़कर बड़े स्पष्ट विचारो के व्यक्ति हो गए थे। यह नही कि उन्होने साम्यवादी अनीश्वरवाद अपना लिया था, अब वे ईश्वर के स्थान पर देश के चिन्तन मे ही रहते थे। 'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना' के विधान के अनुसार कोई भी सदस्य किसी विशेष धर्म मे दीक्षित होकर कोई ऐसा चिन्ह धारण नही कर सकता था जिससे उसके धर्म का पता चले। इसीलिए तो भगतसिंह को केश-विहीन होना पडा था। फिर उस सेना के सेनापति होने के नाते आजाद रूढिवाद मे बँधकर कैसे रह सकते थे।

ठाकुरो और राजा-रजवाड़ो के साथ आजाद कभी-कभी आमिष-भोजन भी कर लेते थे पर उसके प्रति उनकी कोई रुचि नही थी। वे तो परिस्थिति वश अपने असली स्वरूप को प्रकट न होने देने के लिए इस प्रकार का व्यवहार करते थे। तात्पर्य यह कि आजाद रूढ़िवाद के घोर विरोधी थे। साम्प्रदायिकतावाद की तो उनमे गन्ध भी नही थी।

क्या आजाद समाजवादी थे ?

'हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना, के सेनाध्यक्ष होते हुए भी सैद्धान्तिक समाजवाद के क्षेत्र मे आजाद की स्थिति एक सैनिक की स्थिति थी। दल की नीति का निर्धारण करने के स्थान पर उसके सगठन की ओर उनकी क्षमताओ की अधिक उपयोगिता सिद्ध हुई। फिर भी समाजवादी सेना के सेनापति होने के नाते उनके विचारो मे समाजवादी रचना के तत्व स्वाभाविक ही थे। इस सम्बन्ध मे श्री यशपाल के विचार पढ़िए—

> "आजाद मिट्टी के माधो नहीं थे। समाजवाद का अर्थ समझे बिना न तो वे इस दल का नाम बदलने मे सहमत होते और न उसकी

कमाण्डरी की जिम्मेदारी ही लेने को तैयार होते। आजाद के जीवन का क्षेत्र सिद्धान्तो की बारीक आलोचना नहीं था।"

आजाद ने आजाद हिन्दुस्तान के लिए जिस सरकार की कल्पना की थी वह उन्ही के मुँह स सुनिए और उनकी राजनीतिक विचार-धारा का पता लगाइए—

"हमे तो फ्रन्टियर से लेकर वर्मा तक और नैपाल से लेकर करॉंची तक के हर हिन्दुस्तानी को साथ लेकर एक तगड़ी सरकार बनानी है। जब फिरंगी भाग जाएँगे, तब ऐसी सरकार बनेगी और हर आदमी खुशहाल होगा।"

आजाद . एक मूल्याकन

आजाद आजाद था। अभिशप्त दासता के अन्धकार मे उसने अपने प्राणो की मशाल जलाकर हमे आजादी का मार्ग दिखाया। आजाद मानव नही, महामानव था। रूढिवाद एव परम्परावादी भावनाओ के घेरे को तोड कर आजाद व्यक्तित्व की उस ऊँचाई तक जा पहुँचा जिसे देखते हुए हमारे अहवाद की टोपी नीचे गिर जाती है। आजाद उन मसीहाओ मे से एक था जो बार-बार इस धरती पर नही आते है, और जब आते है तो ससार को कुछ अनोखी देन देकर जाते है। आजाद वह व्यक्ति था जिसके व्यक्तित्व मे राम का शौर्य, शकर का लोक-कल्याण, दधीचि का त्याग, हरिश्चन्द्र की दानवीरता, बुद्ध की निष्ठा, महावीर का सयम, पैगम्बर की साधना एव ईसा की क्षमा आदि सभी महान गुण घुले-मिले थे। आजाद की देशभक्ति मे मीरा की तडप थी और चैतन्य की तन्मयता। देश की मुक्ति आजाद का लक्ष्य था और वीरता उसका धर्म।

आजाद की भावना हमारे देश की आजादी को अमर रखे।

चन्द्रशेखर आजाद

आत्म-दर्शन

चन्द्रशेखर नाम, सूरज का प्रखर उत्ताप हूँ मै,
फूटते ज्वाला-मुखी-सा, क्रान्ति का उद्घोष हूँ मैं।
कोश जख्मों का, लगे इतिहास के जो वक्ष पर है,
चीखते प्रतिशोध का जलता हुआ आक्रोश हूँ मैं।

विवश अधरों पर सुलगता गीत हूँ विद्रोह का मै,
नाश के मन पर नशे जैसा चढ़ा उन्माद हूँ मैं।
मैं गुलामी का कफन, उजला सपन स्वाधीनता का,
नाम से आजाद, हर संकल्प से फौलाद हूँ मैं।

आँसुओ को, तेज मै तेजाव का देने चला हूँ,
जो रही कल तक पराजय, आज उस पर जीत हूँ मैं।
मै प्रभंजन हूँ, घुटन के बादलों को चीर देने,
विजलियों की धडकनों का कड़कता संगीत हूँ मैं।

सिसकियो पर, अव किसी अन्याय को पलने न दूँगा,
जुल्म के सिक्के किसी के, मैं यहाँ चलने न दूँगा।
खून के दीपक जला कर अव दिवाली ही मनेगी,
इस धरा पर, अव दिलो की होलियाँ जलने न दूँगा।

राज-सत्ता में हुए मदहोश दीवानो ! लुटेरो !
मै तुम्हारे जुल्म के आघात को ललकारता हूँ।
मै तुम्हारे दंभ को—पाखंड को, देता चुनौती,
मै तुम्हारी जात को—औकात को ललकारता हूँ।

मै जमाने को जगाने, आज यह आवाज देता—
इन्कलाबी आग मे, अन्याय की होली जलाओ।
तुम नही कातर स्वरो में न्याय की अव भीख माँगो,
गर्जना के घोष मे विद्रोह के अव गीत गाओ।

आग भूखे पेट की, अधिकार देती है सभी को,
चूसते जो खून, उनकी वोटियाँ हम नोच खाएँ।
जिन भुजाओं मे कसक—कुछ कर दिखाने की ठसक है,
वे न भूखे पेट, दिल की आग ही अपनी दिखाएँ।

और मरना ही हमे जव, तड़प कर घुट कर मरे क्यों,
छातियों में गोलियाँ खाकर शहादत से मरे हम।
मेमनो की भाँति मिमिया कर नही गर्दन कटाएँ,
स्वाभिमानी शीष ऊँचा रख, बगावत से मरे हम।

इसलिए, मै देश के हर आदमी से कह रहा हूँ,
आदमीयत का तकाजा है, वतन के हो सिपाही।
हड्डियों में शक्ति वह पैदा करें, तलवार मुरझे,
तोप का मुंह बन्द कर, हम जुल्म पर ढाएँ तबाही।

कलम के जादूगरो से कह रही युग-चेतना यह,
लेखनी की धार से, अंधेर का वे वक्ष फाड़े।
रक्त, मज्जा, हड्डियों के मूल्य पर जो बन रहा हो,
तोड़ दे उसके कंगूरे, उस महल को वे उजाड़े।

बिक गई यदि कलम, तो फिर देश कैसे बच सकेगा,
सर कलम हो, कलम का सर शर्म से झुकने न पाए।
चल रही तलवार या बन्दूक हो जब देश के हित,
यह चले—चलती रहे, क्षण भर कलम रुकने न पाए।

यह कलम ऐसे चले, श्रम-साधना की ज्यों कुदाली,
वर्ग-भेदों की शिलाएँ तोड़ चकनाचूर कर दे।
यह चले ऐसे कि चलते खेत मे हल जिस तरह हैं,
उर्वरा अपनी धरा की, मोतियों से माँग भर दे।

यह चले ऐसे कि उजड़े देश का सौभाग्य लिख दे,
यह चले ऐसे कि पतझड़ में बहारे मुस्कराएँ।
यह चले ऐसे कि फसलें झूम कर गाएँ बधावे,
यह चले तो गर्व से खलिहान अपने सर उठाएँ।

यह कलम ऐसे चले, ज्यों पुण्य की है बेल चलती,
यह कलम बन कर कटारी पाप के फाड़े कलेजे।
यह कलम ऐसे चले, चलते प्रगति के पाँव जैसे,
यह कलम चल कर हमारे देश का गौरव सहेजे।

सृष्टि नवयुग की करे हम, पुण्य-पावन इस धरा पर,
हाथ श्रम के, आज नूतन सर्जना करके दिखाएँ।
हो कला की साधना का श्रेय जन-कल्याणकारी,
हम सिपाही, देश के दुर्भाग्य को जड़ से मिटाएँ।

●●●

क्रान्ति-दर्शन

कौन कहता है कि हम है सरफिरे, खूनी, लुटेरे ?
कौन यह जो कापुरुष कह कर हमें धिक्कारता है ?
कौन यह जो गोलियों की भर्त्सना भरपेट करके,
गोलियों से तेज, हमको गालियों से मारता है।

जिन शिराओं में उबलता खून यौवन का हठीला,
शान्ति का ठण्डा जहर यह कौन उसमे भर रहा है ?
मुक्ति की समरस्थली मे. मारने-मरने चले हम,
कौन यह हिंसा-अहिसा का विवेचन कर रहा है ?

कौन तुम ? तुम पूज्य बापू ! राष्ट्र-अधिनायक हमारे,
तुम बहिष्कृत कर रहे, ये क्रान्तिकारी योजनाएं ?
आत्म-उत्सर्जन करे, स्वाधीनता हित हम शलभ से,
और तुम कहते, घृणित है ये सभी हिसक विधाएं।

तो सुनो युगदेव ! यह मै चन्द्रशेखर कह रहा हूँ,
सत्य ही खूनी, लुटेरे और हम सब सरफिरे है।
दासता के घृणित बादल छा गए जब से धरा पर,
मेघ हिसा के, हमारे मुक्त मन पर आ घिरे है।

सत्य ही खूनी कि हमको खून के पथ का भरोसा,
खून के पथ पर सदा स्वाधीनता का रथ चला है।
युद्ध के भीषण कगारे पर अहिसा भीरुता है,
मुक्ति के प्यासे मृगों को इस भुलावे ने छला है।

हड्डियों का खाद देकर खून से सींचा जिसे है,
मुक्ति की वह फसल, मौसम के प्रहारों मे टिकी है।
प्रार्थनाओं-याचनाओं ने सँवारा जिस फसल को,
वह सदा काटी गई, लूटी गई सस्ती बिकी है।

प्रार्थनाओं-याचनाओं से अगर बचती प्रतिष्ठा,
गजनवी महमूद, तो फिर मूर्ति-भंजक क्यों कहाता ?
तोड़ता क्यों मूर्तियाँ, क्यों फोडता मस्तक हमारे,
क्यों अहिंसक खून वह निर्दोष लोगों का बहाता ?

युद्ध के संहार में, हिंसा-अहिंसा कुछ नही है,
मारना-मरना, विजय का मर्म स्वाभाविक समर का।
युद्ध में वीणा नहीं, रणभेरियाँ या शंख बजते,
युद्ध का है कर्म हिंसा, है अहिंसा धर्म घर का।

कर रहे हैं युद्ध हम भी, लक्ष्य है स्वाधीनता का,
खून का परिचय, वतन के दुश्मनों को दे रहे है।
डूबते-तिरते दिखाई दे रहे तुम आँसुओ मे,
खून के तूफान मे, हम नाव अपनी खे रहे है।

मन्त्र है बलिदान, जो साधन हमारी सिद्धि का है,
खून का सूरज उगा, अभिशाप का हम तम हटाते।
जिस सरलता से कटाते लोग है नाखून अपने,
देश के हित उस तरह, हम शीप है अपने कटाते।

स्वाभिमानी गर्व से ऊँचा रहे, मस्तक कहाता,
जो पराजय से झुके, धड के लिए सर बोझ भारी।
रोष के उत्ताप से खौले नही, वह खून कैसा,
आदमी ही क्या, न यदि ललकार बन जाती कटारी।

इसलिए खूनी भले हमको कहो, कहते रहो, हम,
ताप अपने खून का ठण्डा कभी होने न देंगे।
खून से धोकर दिखा देंगे कलुष यह दासता का,
हम किसी को आँसुओं से दाग यह धोने न देंगे।

तुम अहिंसा भाव से सह लो भले अपमान माँ का,
किन्तु हम उस आततायी का कलेजा फाड देंगे।
दृष्टि डालेगा अगर कोई हमारी पूज्य माँ पर,
वक्ष में उसके हुमक कर तेज खंजर गाड़ देंगे।

मातृ-भू माँ से बड़ी है, है दुसह अपमान इसका,
है उचित, हम शस्त्र-बल से शत्रु का मस्तक झुकाएँ।
रक्त का शोषण हमारा कर रहा जो क्रूरता से,
खून का बदला करारा खून से ही हम चुकाएँ।

है अहिंसा आत्म-बल, तुम आत्म-बल से लड रहे हो,
शस्त्र-बल के साथ हम भी आत्म-बल अपना लगाते।
शान्ति की लोरी सुना कर, तुम सुलाते वीरता को,
क्रान्ति के उद्‌घोष से हम बाहुबल को है जगाते।

आत्म-बल होता, तभी तो शस्त्र अपना बल दिखाते,
कायरों के हाथ में है शस्त्र बस केवल खिलौने।
मारना-मरना उन्हें है खेल, जिनमें आत्म-बल है,
आत्म-बल जिनमें नही, है अर्थियाँ उनको बिछौने।

और हाँ तुमने हमे पागल कहा, सच ही कहा है,
खून की हर बूँद मै उद्दाम पागलपन भरा है
हम न यौवन में बुढापे के कभी हामी रहे है,
छेड़ता जो काल को, हम मे वही यौवन भरा है।

होश खोकर, जोश जो निर्दोष लोगों को सताये,
पाप है वह जोश, ऐसे जोश मे आना बुरा है।
यदि वतन के दुश्मनों का खून पीने जोश आए,
इस तरह के जोश से, फिर होश में आना बुरा है।

बढ़ रहे संकल्प से हम, लक्ष्य अपने सामने है,
साथ है संबल हमारे, वतन की दीवानगी का।
देश का सौदा, नहीं हम कर रहे सौदागरों से,
दे रहे परिचय उन्हे हम हिन्द की मर्दानगी का।

है लुटेरे भी कि हम है लूटते यश शत्रुओं का,
लूटते जो देश को, हम कोश उनके लूटते है।
लूटते है नींद उनकी, चैन से सोने न देते,
कॉपते है नाम से, 'हम होश उनके लूटते है।

हम नहीं हम, आज हम भूकम्प है—विस्फोट भी है,
खून में तूफान की पागल रवानी घुल गई है।
आज शोलों से भड़कते है सभी अरमान दिल के,
आज कुछ करके दिखाने को जवानी तुल गई है।

'सरफरोशी की तमन्ना' से उठे हम सरफिरे कुछ,
मस्तकों का मोल, देखे कौन है कितना चुकाता।
देखना है, रक्त किसकी देह मे गाढा अधिक है,
देखना है, कौन किसका गर्व मिट्टी में मिलाता।

हम, दमन के दाँत पैने तोडने पर तुल गए है,
वक्ष ताने हम खड़े, यम से नहीं डरने चले है।
खेल हम इसको समझते, मौत यह हौआ नही है,
मौत से भी आज दो-दो हाथ हम करने चले है।

जो कफन बाँधे, हथेली पर रखे सर कूद पड़ते,
मौत हो या मौत का भी बाप, वे डरते नही है ।
वीर मरते एक ही है बार जीवन में, निडर हो,
कायरों की भाँति सौ-सौ बार वे मरते नही है ।

क्या हुआ दो-चार या दस-बीस है हम, हम बहुत हैं,
हम हजारो और लाखों के लिए भारी पड़ेगे ।
सिह-शावक एक, जैसे चीरता दल गीदड़ों के,
हम उसी बल से तुम्हारी छातियो पर जा चढ़ेगे ।

दूध माँ का, आज अपनी आन हमको दे रहा है,
शक्ति माँ के दूध की अब हम दिखा कर ही रहेगे ।
नाचता है नग्न होकर, पीट कर जो ढोल अपना,
सभ्यता का हम सबक उसको सिखाकर ही रहेगे ।

आज यौवन की कड़कती धूप देती है चुनौती,
हम किसी के पाप की छाया यहाँ टिकने न देगे ।
मस्तको का मोल देकर, हम खरीदेगे अमरता,
देश का सम्मान, मर कर भी कभी बिकने न देगे ।

गर्जना कर, फिर यही संकल्प हम दुहरा रहे है,
हम, वतन की शान को—अभिमान को जिन्दा रखेंगे ।
देश के उत्थान हित, बलिदान को जिन्दा रखेंगे,
खून के तूफान हिन्दुस्तान को जिन्दा रखेगे ।

और जननायक ! भले ही तुम हमे अपना न समझो,
तुम भले कोसो, हमारे आज बम-विस्फोट को भी ।
सह रहे आघात हम जैसे विदेशी राज-मद के,
झेल लेगे प्राण, अपनो की करारी चोट को भी ।

किन्तु दुहरी मार भी विचलित न हमको कर सकेगी,
चोट खाकर और भड़केंगी हमारी भावनाएं,
और खौलेगा हमारा खून, मचलेगी जवानी,
और भी उद्दण्ड होंगी क्रान्तिकारी योजनाएं।

बम हमारे, दुश्मनो के गर्व को खाकर रहेंगे,
दासता के दुर्ग को, विस्फोट इनके तोड़ देंगे।
और पिस्तौलें हमारी, गीत गायेंगी विजय के,
वज्र-दृढ संकल्प, युग की धार को भी मोड़ देंगे।

अब निराशा का कुहासा पथ न धूमिल कर सकेगा,
क्रान्ति की हर किरण, आत्मा का उजाला बन गई है।
आज केवल बम नही, है प्राण भी विस्फोट करते,
शत्रु के संहार को, हर साँस ज्वाला बन गई है।

भावरा

ग्राम-धरा

मंजरित इस आम्र-तरु की छाँह में बैठो पथिक ! तुम,
मै समीरण से कहूँ, वह अतिथि पर पंखा झलेगा।
गाँव के मेहमान की अभ्यर्थना है धर्म सबका,
वह हमारे पाहुने की भावनाओं में ढलेगा।

नागरिक सुकुमार सुविधाएँ, सुखद अनुभूतियाँ बहु,
दे कहाँ से तुम्हे सूखी पत्तियो का यह बिछावन।
आत्मा की छाँह की, पर तुम्हे शीतलता मिलेगी,
ग्राम-अंतर की मिलेगी भावना पावन-सुहावन।

और परिचय मैं बता दूँ, भावरा कहते मुझे सब,
जो घुमड़ती ही रहे, उस याद जैसा गाँव हूँ मैं।
छोड़ जाता जो समय के वक्ष पर दृढ़-चिह्न अपना,
अंगदी व्यक्तित्व का अनगढ़ हठीला पाँव हूँ मैं।'

सभ्यता की वर्ण-माला की लिखी पहली लिखावट,
सुभग मंगल तिलक-सा हूँ, संस्कृति के भाल पर मैं।
हो रहा संकोच, कैसे मैं बखानूँ रूप अपना,
एक तिल जैसा हुआ प्रस्थित प्रकृति के गाल पर मैं।

गिरि-शिखरियों के सुहावन सुखद आँगन मे अवस्थित,
छू रही नभ को हठीली विंध्य-पर्वत की भुजाएँ।
लग रहा, जैसे प्रकृति के पालने में झूलता मैं,
गगन के छत से बँधी ये डोरियाँ गिरि-मेखलाएँ।

या कि माँ की गोद मे, मैं दुबक कर बैठा हुआ-सा,
माँगती मेरे लिए वह, हाथ ऊँचे कर दुआएँ।
या पिलाने दूध, आँचल ओट माँ ने कर लिया हो,
ले बलैया, टालती हो वह सभी मेरी बलाएँ।

या कि नटखट एक बालक ओट लेकर छिप गया हो,
माँ प्रकट हो, उछल औचक हूप! कर उसको डराने।
चौकती-सी देख उसको, डर गई ?' कहकर चिढाने,
डाल गलबहियाँ, विजय के गर्व से फिर खिलखिलाने।

और अब इस ओर देखो, ताल यह जल से भरा जो,
चमकता ऐसे, चमकता जिस तरह श्रम का पसीना।
या कि पर्वत-शृंखला की प्रिय अँगूठी मे जड़ा हो,
जगमगाता शुभ्र शुभ अनमोल सुन्दर-सा नगीना।

या कि वृत्ताकार दर्पण, हो खचित वर्तुल परिधि में,
शैल-मालाएँ सँवर कर रूप इसमें झाँकती हों।
स्वच्छ, जैसे दूधिया चादर बिछाई हो किसी ने,
फूल-पुरइन, उँगलियाँ जैसे सितारे टाँकती हों।

देखते हो तुम पथिक! तरुवृन्द अपने पास ही जो,
ये सुकृत जैसे, समय अनुकूल फलते-फूलते हैं।
झूमने लगते कभी फल-भार के उन्माद से ये,
चढ समीरण के हिडोले पर कभी ये झूलते है।

रात है इन पर उतरती, साधना की शान्ति जैसी,
और उजले दिन कि जैसे तेज हो तप का बिखरता।
शान्ति मन में, पर यहाँ संघर्ष जीवन में निरन्तर,
कर्म की आराधना से, मन यहाँ सब का निखरता।

ग्राम-वासी लोग, जैसे साधना-रत कर्मयोगी,
सन्त जैसे सरल मन, अवधूत जैसे आदिवासी।
पुण्य के प्रति नित विचारों मे प्रगति मिलती यहाँ पर,
और मिलती पाप के प्रति यहाँ जीवन में उदासी।

ग्राम-घर, ऊँचे भवन कुछ, संकुचित-सी कुछ झुपड़िएँ,
बहुरिएँ, ज्यों ससुर जी को देखकर शरमा गई हों।
कुछ अटरिएँ धवल, शोभित है घरौदो में कि जैसे,
बाल-मुख में दूध की कुछ-कुछ दँतुलिएँ आ गई हों।

और अब अनमोल निधि अपनी दिखाऊँ पथिक तुमको,
सिंह-जैसी खोह-सी यह झोंपड़ी जो दिख रही है।
यह प्रगति के पत्र पर अपनी अगति की लेखनी से,
गर्व की लिपि मे विगत गौरव-कथाएँ लिख रही है।

एक दिन था, जब कि इसकी कोख की पीड़ा फली थी,
एक दिन आया कि सोया भाग्य जब इसका जगा था।
एक ऐसा दिन सुनहला आ गया इस झोंपड़ी में,
चन्द्रशेखर नाम से जब शौर्य का सूरज उगा था।

मिल गई थी ज्योति घर को, लाल गुदड़ी को मिला था,
उल्लसित ममतामयी माँ को मिला था शिशु सलोना।
वंश को दीपक, पिता को सिंह-शावक मिल गया था,
गाँव वालो को मिला था खेलता-हँसता खिलौना।

सरल शैशव को मिले जब बालपन के चपल पग, तो,
गाँव घर था, और क्रीडागार थे मैदान जंगल।
वह प्रकृति की पाठशाला में खुला भू-ज्ञान पढ़ता,
साथियो के साथ वन मे वह मनाता मोद-मंगल।

हो गए गिरि-शृंग बौने, हौसले ऊँचे हुए थे,
जब हुआ मन, चन्द्रशेखर जंगलों को छानता था।
नापता रहता विटप वट, आम्र, पीपल, ताड़ के वह,
शैल का हर शिखर उसका तेज लोहा मानता था।

भील-बालक, बाल-सेना के सभी सैनिक सुभट थे,
जंगलो मे तीर-कमठे ले सभी निर्भय विचरते।
साधते सच्चे निशाने, होड़ आपस मे लगाकर,
हिंस्र-पशु, इस सैन्य-दल की गन्ध पाकर ही सिहरते।

एक दिन बालक अहेरी भटक कर जा दूर निकले,
अगम पर्वत की ढलानो पर जमा जंगल घना था।
एक झाड़ी से उछल कर गुरगुराता सिंह निकला,
होश सबके उड़ गए, यह मौत से ही सामना था।

चढ गए झट तीर कमठों पर स्वयं अभ्यस्त गति से,
घूरती उस मौत से आँखें सभी की मिल रही थीं ।
साँस रोके ये खड़े सन्नद्ध अपने मोर्चे पर,
धड़कनें गतिवान थीं, पलकें न पल को हिल रही थीं ।

सिंह वह विकराल-भीषण काल, सम्मुख ही अड़ा था,
सजगता से धड़कनों की चपल आहट ले रहा था ।
खोजता था वह बहाना, झपटने आखेटकों पर,
रोष के आवेश में, वह पूँछ में बल दे रहा था ।

किन्तु यह क्या, एक प्रस्तर प्रस्खलित हो लड़खड़ाया,
सिंह ने हमला समझ, विकराल एक छलाँग मारी ।
सामने से बाण-वर्षा हो गई घनघोर गति से,
सिंह के आवेश की, आखेटकों ने लू उतारी ।

किन्तु मरता क्या न करता, तड़प घायल सिंह उछला,
लगा, जैसे एक बालक को दबोचा, फाड़ खाया ।
वज्र-गति से सनसनाता तीर मस्तक फोड़ बैठा,
काल जो बनने चला था, काल को उसने बुलाया ।

चन्द्रशेखर को सभी ने घेर हाथों पर उठाया,
जान की बाजी लगा कर, जान थी उसने बचाई ।
भावना के बोझ से दब, शब्द बाहर आ न पाए,
दे रहे थे नयन सबके मूक भाषा में बधाई ।

एक कोने से उछल कर आ गया प्रस्ताव झट से,
दीर्घ-जीवी मित्र हो, माँगें सभी प्रभु से दुआएँ ।
हो न यदि आपत्ति ब्राह्मण-देवता को तो सभी मिल,
सिंह का आमिष बना, सहभोज कर खुशियाँ मनाएँ ।

चन्दशेखर की परीक्षा थी, खरा उत्तर दिया यह,
मानता, कुल-धर्म आमिष-भोज की अनुमति न देता।
साथियों का साथ देना, एक यह भी धर्म मेरा,
है नही मानव, समय ही धर्म का होता प्रणेता।

एक पल की देर होती, सिह हमको फाड़ खाता,
मान्य है प्रस्ताव, अपने शत्रु को हम फाड़ खाएँ।
प्यास मानव-रक्त से अपनी बुझाने जो चला था,
कर उसे उदरस्थ, हम भी भूख अब अपनी मिटाएँ।

हम समय की माँग को पूरा करेगे साथ देकर,
हम निरीहो पर सदय हो, सतत संरक्षण करेगे।
जो हमारी जान का ग्राहक बने, कैसे बचेगा,
हम न छोडेगे उसे संहार कर, भक्षण करेगे।

●●●

बावली माँ

वर्ण केवल एक, जिस पर वर्णमाला ही निछावर,
शब्द केवल एक जिसमें अर्थ का सागर भरा है।
ऊष्मित ममता, अधिक व्यापक गगन की नीलिमा से,
दिव्य वह अस्तित्व माँ जैसे सहन-शीला धरा है।

योग की तप-साधना से कम न पावन त्याग माँ का,
ज्वार सागर का न पागल, मातृ-उर के ज्वार-सा है।
और भावों के कई उपमान मिल सकते हमे हैं,
किन्तु कोई प्यार दुनिया का न माँ के प्यार-सा है।

छू न सकती मातृ-मन को विश्व की ऊँचाइयाँ सब,
मातृ-उर से अधिक कोई सिंधु भी गहरा नही है।
पुत्र के तन पर न रोयाँ एक ऐसा मिल सकेगा,
मातृ-ममता का सजग जिस पर कड़ा पहरा नही है।

विश्व की प्रत्येक माँ, विधि की अनोखी एक रचना,
भावना प्रत्येक माँ की, एक साँचे में ढली है।
राग की अनुराग की, तप-त्याग की प्रतिमूर्ति माँ है,
मानवी, देवी, मगर संतान हित माँ बावली है।

बावली माँ एक रहती थी यहाँ भी पथिक पाहुन,
छाँह पलकों की किए निज पूत को वह पालती थी।
चन्द्रशेखर चन्द्र-माँ के भाग्य नभ का चन्द्रमा था,
ढाल बनकर लाल की वह सब बलायें टालती थी।

एक रोयाँ भी कभी दुखता दिखे यदि लाढ़ले का,
अंक मे सुत, रात आँखों में लिए वह जागती थी।
पल्लुओं से देव-द्वारे झाड़ती, माथा रगड़ती,
वह मनाती थी मनौती, विकल घर-घर भागती थी।

एक क्यों, आते कई दिन, जब कि जल आहार होता,
लाल को ममतामयी, भूखा कभी सोने न देती।
काट लेती दिन, अभावों की चुनरिया ओढकर वह,
किन्तु आँखों के सितारे को दुखी होने न देती।

पर वही माँ एक दिन थी खिन्न, जब भोजन परोसा,
बैठ मेरे लाढ़ले! खाले तनिक, वह कह न पाई।
चन्द्रशेखर सकपकाया देखता माँ का मलिन मुख,
लाँघ संयम के किनारे, बढ़ चली माँ की रुलाई।

हिचकियों की दीर्घ कारा से हुई जब मुक्त वाणी,
सिसकियो ने फुसफुसाया, "चाँद तू मेरा सलोना।
आज मोहन से कहूँ कैसे कि मोहन-भोग खाले,
जब कि रूखा और सूखा, है बना भोजन अलोना।

ला रही थी मै पडौसिन से नमक, पर ला न पाई,
लाल! तेरे पूज्य बापू ने उसे वापिस कराया।
तड़प कर बोले, भले भूखे रहें चिन्ता नही कुछ,
माँग कर खाकर जिये हम, इसलिए जीवन न पाया।"

"माँ! दुखी मत हो कि तेरा स्नेह षड्‌रस से अधिक है,
मधुर व्यंजन समझ यह भोजन अलोना खा सकूँगा।
मैं पिता के स्वाभिमानी शीप को झुकने न दूँगा,
आन अपने वंश की मै शान से अपना सकूँगा।

आज तेरे स्नेह की सौगन्ध खाकर कह रहा माँ !
गर्म मेरा खून, तेरे दूध का सम्मान होगा।
मै अभावों से लड़ूँगा, और लड़कर जी सकूँगा,
साथ स्नेहाशीष तेरा, काल भी वरदान होगा।"

और उस दिन—तीन दिन फिर और था भोजन अलोना,
लकड़ियाँ माँ ने वटोरी, बेच उनको नमक आया।
पर किसी को खेद किंचित भी नही इस हाल पर था,
बन गया था घर किला, यह भेद बाहर जा न पाया।

किन्तु निर्धनता अकेली, थी नही माँ की परीक्षा,
भाग्य पर उसके भयानक एक पर्वत और टूटा।
जो हृदय का हार प्रिय, आधार जीवन का सुदृढ़ था,
हाय रे दुर्भाग्य ! उस आधार का भी साथ छूटा।

भाग्य-नभ का चन्द्र, उसकी दृष्टि से ओझल हुआ था,
कर दिया गृह-त्याग सुत ने, माँ वियोगिन हो गई थी।
छटपटाती-तड़पती वह, मीन हो जल-हीन जैसे,
खो गई थी प्राण-निधि, चिर-वेदना वह वो गई थी।

वस गया जा निर्धना का नयन-धन वाराणसी में,
चन्द्रशेखर गंग-तट पर ज्ञान-घट भरने गया था।
क्या पता माँ को कि गंगाजल अनल-प्रेरक वनेगा,
जानती कैसे कि उसका लाल क्या करने गया था।

एक ही विश्वास में अटकी हुई थी भावनाएँ,
लौट आएगा किसी दिन, गोद का शृंगार उसका।
अर्चना, आशीष, अहरह साधना-आराधना में,
खप रही थीं वृद्ध साँसें, तप रहा था प्यार उसका।

जेठ की तपती दुपहरी में ववण्डर घूमता जव,
लाल की अनुहार लख, वह भेटने उसको लपकती।
किन्तु सूखे पात-सा कृश-गात क्या आघात सहता,
वात-चक्रित देह धरती पर पके फल-सी टपकती।

झूमते गजराज-से, जव सघन पावस-दूत घिरते,
सिंह-सुत की विविध आकृतियाँ उसे दिखती वनों मे।
गर्जना का भान होता, क्रुद्ध जव विद्युत तड़कती,
तैरती सुधियाँ सुअन की इन्द्र-धनुषी चितवनों में।

जव शरद का चन्द्र उगता, देखती थी एकटक वह,
चाहती, वह गोद मे उसके उछल कर वैठ जाए।
आज किस वन पर हुआ धावा, उजाडा कौन उपवन,
साहसिक अभियान अपने, वह सहमता-सा सुनाए।

चिन्दियाँ कुछ ओढनी से फाड़ चन्दा को दिखाती—
जीर्ण ले-ले, तू नये कुछ वस्त्र चन्दू को सिलाना,
याद तो होगा, तुझे उसने सगा मामा वनाया,
दूध से कुछ भात अपने भानजे को जा खिलाना।

स्वर्ण-किरणों का विछाता जाल जव हेमन्त का रवि,
सुधि उमड़ती, दशहरे, पर लाल सोना लूटता था।
हौसला किसका, लगा कर होड़ उससे तेज दौड़े,
छोड़कर पीछे सभी को, तीर-सा वह छूटता था।

जव गली में शोर होता, झगडते वालक परस्पर,
जव किसी के चीखने का स्वर उसे पड़ता सुनाई।
भास होता, आज चन्दर ने किसी को धर दवोचा,
वह छड़ी लेकर लपकती, कोसती उसकी ढिठाई।

जब शिशिर के शीत मे वह देखती बालक ठिठुरते,
याद करती, चन्द्र कैसा निर्वसन हो घूमता था
ढेर सूखी पत्तियों का जब सखा उसके जलाते,
फाँदता लपटे, कभी उनके शिखर वह चूमता था।

आग-सी वन मे लगा उन्मत्त जब टेसू दहकते,
सुधि सताती, ढेर सारी डालियाँ वह तोड़ लाता।
रंग केसरिया बनाता, फूल टेसू के गला कर,
खूब होली खेलता जो भी निकलता वह भिगाता।

लाढ़ले की विविध लीलाएँ उसे जब याद आती,
कौध जाती वेदना, कस कर कलेजा थाम लेती।
ज्योति आँखों की भटकती थी अँधेरे के वनों में,
छोड़ती निश्वास, अपने लाल का वह नाम लेती।

याचना करती, कुशल उसकी मना, अशरण-शरण प्रभु !
लौट आए लाल मेरा, युक्ति वह उसको सिखाना।
मै अकेली ही बहुत हूँ झेलने दारुण व्यथाएँ,
तू किसी माँ को कभी दुर्दिन नहीं ऐसे दिखाना।

वाराणसी

लहरें

उच्छल गंगा का हिल्लोलित अंतर है,
भावना प्रगति की मानो हुई प्रखर है।
लहरे है, जो रुकने का नाम न लेती,
तट की बाँहों में वे विश्राम न लेती।

बढते जाने की उनमे होड़ लगी है,
मंत्रो मे जैसे अद्भुत शक्ति जगी है।
हर लहर, लहर को आगे ठेल रही है,
हर लहर, लहर की गति को झेल रही है।

बढ़ना, बढ़ते जाना सक्रिय जीवन है,
तट से बँध कर रह जाना घुटन-सड़न है।
जो कूद पड़ा लहरों में, पार हुआ है,
जो जूझ पड़ा, सपना साकार हुआ है।

जो लीक पुरातनता की छोड़ न पाया,
जिसका बल युग-धारा को मोड़ न पाया।
वह मानव क्या, जो बन्धन तोड़ न पाया,
जो अन्यायो के घट को फोड़ न पाया।

ये लहरे है, आता है इन्हें लहरना,
बढने की धुन में भाता नही ठहरना।
तुम कौन ? यहाँ जो गुमसुम बैठे तट पर,
निश्चल-निष्क्रिय, जीवन के इस पनघट पर।

देखो जलधारा पर तिरती नौकाएँ,
जीवन-धारा पर तिरती अभिलाषाएँ।
उथले में, कुछ गहरे मे नहा रहे है,
अपने कल्मष गंगा मे बहा रहे है।

कछुए कुलबुल कर रहे कामनाओं से,
कुछ डूबे है अवदमित वासनाओं से।
कुछ दानी उनको दाने चुगा रहे है,
पाथेय पुण्य के अंकुर उगा रहे है।

घाटों पर जाग्रत जीवन मचल रहा है,
खामोशी को कोलाहल निगल रहा है,
नर-नारी बालक-वृद्ध युवा आए है,
वे अपनी वय की साध साथ लाए है।

बच्चे, बचपन के खेलों पर ललचाये,
बच्चों के बाबा, पुण्य कमाने आये।
क्या बात कहें उनकी जिनमें यौवन है,
छायावादी कविता-सी हर धड़कन है।

यौवन की साँसो मे है सुमन महकते,
यौवन की साँसों में अगार दहकते।
यौवन की साँसो के शृंगार चहकते,
यौवन की साँसों के हैं तार बहकते।

यौवन, उफनाते हुए दूध का घट है,
यौवन, सागर है, शान्त नही यह तट है।
यौवन, अभिलाषाओं का वंशीवट है,
यौवन रंगीन उमंगों का पनघट है।

यौवन आता तो जीवन ही जीवन है,
यौवन आता, बेबस हो जाता मन है।
यौवन के क्षण सपनों के हाथों बिकते,
यौवन के पाँव नही धरती पर टिकते।

तुम कौन, घाट से टिके हुए बैठे हो?
तुम किसके हाथों बिके हुए बैठे हो?
बिक चुका यहाँ नृप हरिश्चन्द्र-सा दानी,
रोहित-सा बेटा, तारा जैसी रानी।

तो सुनो, छलकते जीवन की मै गगरी,
देखो, मैं बाबा विश्वनाथ की नगरी।
जो बड़भागी, वे लोग यहाँ रहते है,
परिचय दूँ? वाराणसी मुझे कहते है।

शिव के त्रिशूल पर बैठी मै इठलाती,
मै दैहिक, दैविक, भौतिक शूल मिटाती।
जीने वालों को दिव्य ज्ञान देती हूँ,
मरने वालो को मोक्ष-दान देती हूँ।

शंकर बाबा की कैसे कहूँ कहानी,
उन जैसा कोई मिला न अवढर दानी।
तप की विभूति तन पर शोभित होती है,
यश-गंगा उनके जटा-जूट धोती है।

है तेज-पुंज-सा उन्नत भाल दमकता,
कहने वाले कहते है चन्द्र चमकता।
वे युग का विष पीने वाले विषपायी,
अपने भक्तों को वे सदैव वरदायी।

विषयों के विषधर उन्हें नही डसते है,
जन-मंगल ही उनके मन में बसते है।
वे सुनते अनहद-नाद विश्व-भय-हारी,
इसलिए लोग कहते, नादिया सवारी।

वे वर्तमान के मान, भूत है वश में,
अभिप्रेत भविष्यत है मन के तर्कश में।
जग के विचित्र गुण-गण उनके अनुचर हैं,
वे पर्वतीय-सुषमा-पति शिव-शंकर हैं।

क्या मृग-मरीचिका कोई उसे लुभाए,
जो मृग-छाला को आसन स्वयं बनाए।
वे धूरजटी, धुन की धूनी रमते हैं,
व्यवधान विफल होते जब वे जमते है।

मैंने तुमको शिव का माहात्म्य बताया,
मैंने गंगा की लहरों का गुण गाया।
तुम उठो पथिक, झटको यह आत्म-उदासी,
जग से जूझो, तुम बनो नही सन्यासी।

गंगा की लहरों से शीतलता पाओ,
मन्दिर में बाबा के दर्शन कर आओ।
तुमको रहस्य कुछ और बताऊँगी मैं,
अपने बेटे का गौरव गाऊँगी मे।

● ● ●

खूनी मेंहदी

हाँ सुनो पथिक ! जो बात कह रही हूँ मैं,
कब से उसका संताप सह रही हूँ मैं।
कह देने से मन हलका हो जाता है,
दुख का उफान फिर तल में सो जाता है।

तुम अभी जहाँ बैठे, यह वही ठिकाना,
बैठा करता था बूढ़ा एक पुराना।
सब लोग उसे पागल ! पागल ! कहते थे,
उसकी गतियों से सावधान रहते थे।

वह कभी 'मार डालूँगा !' चिल्लाता था,
वह कभी-कभी खुद पर ही झल्लाता था।
वह अपने से ही बातें करता रहता,
कुछ उत्पीड़न से आहें भरता रहता।

वह कभी हवा में सीधा हाथ झटकता,
वह बार-बार पत्थर पर उसे पटकता।
इस तरह हाथ लोहू-लुहान हो जाता,
पागल का कुछ ठंडा उफान हो जाता।

बढ़ गया एक दिन आत्म-दाह जब भारी।
गंगा-मैया में ही छलाँग दे मारी,
जर्जरित देह को लहरों ने झकझोरा,
यों टूट गया साँसों का कच्चा डोरा।

चल निकली, जितने मुँह उतनी ही बातें,
जन-पथ पर चलतीं बातों की बारातें।
चर्चाओं के मंथन से अभिमत निकला,
वह पाप धो रहा था अपना कुछ पिछला।

यह पागल था पहले जल्लाद भयानक,
उसका सारा जीवन ही क्रूर कथानक।
जाने कितनों के जीवन-दीप बुझाए,
उसने जाने कितने माँ-बाप रुलाए।

उसके अंतर में नहीं दया-ममता थी,
दानवी वृत्ति की अपरिसीम क्षमता थी।
जल्लाद दैत्याकार महाबल-शाली,
उसकी आँखों में चिता ज्वाल की लाली।

उसकी गति में हत्याओं की हलचल थी,
मति में जघन्य पापों की चहल-पहल थी।
वह क्रुद्ध बाज-सा जिसके ऊपर टूटा,
तन के पिंजड़े से प्राण-पखेरू छूटा।

वह दैत्य एक दिन जब अपनी पर आया,
निर्बोध एक बालक पर हाथ उठाया।
इस बाल-सिंह का नाम चन्द्रशेखर था,
जलती भट्टी का ताप लिए अन्तर था।

वह भी जन-आन्दोलन में कूद पड़ा था,
शासन ने उसको इसीलिए जकड़ा था।
देखे केवल चौदह वसन्त जीवन के,
संकल्प उग्र हो गए उदित यौवन के।

वह तड़प उठा, "बाँधो न मुझे हत्यारो!
पन्द्रह क्या, पन्द्रहसौ कोड़े तुम मारो।
मैं जहाँ खड़ा हूँ, तिलभर नहीं हिलूँगा,
मैं हर कोड़े पर हँसता हुआ मिलूँगा।

जो दण्ड मिले, वरदान समझ ले लूंगा,
आघात भयंकर फूल समझ झेलूंगा।
जो मार पड़ेगी उसका स्वाद चखूँगा,
जो दूध पिया है उसकी लाज रखूँगा।"

यह कह वह बालक खड़ा हो गया तनकर,
जल्लाद झपट वैठा सक्रोध उफन कर।
पूरी ताकत से एक हाथ दे मारा,
बालक बोला गांधी की जय का नारा।

फिर और जोर से उसने हाथ जमाया,
भारत-माता की जय का नारा आया।
क्रोधांध दैत्य ने हाथ तीसरा छोड़ा,
कुछ खाल खींच कर ले आया वह कोड़ा।

चौथा कोड़ा हो गया खून से तर था,
विचलित किंचित भी नही चन्द्रशेखर था।
निर्वसन देह पर पड़े तड़ातड़ कोड़े,
भरपूर हाथ उस नर-दानव ने छोड़े।

कोमल काया कोड़ों से जूझ रही थी,
उसको जन-नायक की जय सूझ रही थी।
जल्लाद, हाथ, कस-कस कर गया जमाता,
हर हाथ खाल उसकी उधेड़ ले आता।

बालक ने चाहा नहीं वार से बचना,
खूनी मेंहदी की हुई देह पर रचना।
उसने अपना कोई व्रण नहीं टटोला,
वह गाँधी की—भारत माँ की जय बोला।

उस नरम उमर ने मार भयंकर खाई,
अधखिले फूल ने वज्र-शक्ति दिखलाई।
कुसुमादपि उसकी देह बनी फौलादी,
बस झेल गया आघात क्रूर जल्लादी।

लोगों के दिल पर अब उसका आसन था,
यह देख-देख ईर्ष्यालु हुआ शासन था।
हर अन्तर ही अब उसका अपना घर था,
अनुदिन उसका चिन्तन हो रहा प्रखर था।

जन-भावों पर छागया चन्द्रशेखर था,
नक्षत्र नया आगया चन्द्रशेखर था।
कायरता को खागया चन्द्रशेखर था,
आजाद नाम पागया चन्द्रशेखर था।

वह धरती का अनुराग लिए फिरता था,
तन पर कोड़ों के दाग लिए फिरता था।
वह स्वर में विप्लव-राग लिए फिरता था,
वह उर मे जलती आग लिए फिरता था।

सहला न सका उसके घावों को गांधी,
आ गई क्रान्तिकारी भावो की आँधी।
लपटों का सरगम छिड़ा उग्र जीवन में,
वह धूमकेतु-सा निकला क्रान्ति-गगन में।

काकोरी

लघुता की गुरुता

मैं शान्त, मौन, गम्भीर भावनाओं का स्वर,
लघु ग्राम एक मैं दूर नगर कोलाहल से।
मैं हूँ सागर में सरिता का अस्तित्व-बोध,
मैं छिटक गया घुँघरू, जीवन की पायल से।

बालक की जिज्ञासा-माला का एक प्रश्न,
जिसका उत्तर बन जाय बड़ों को हैरानी।
जिसका जैसा जी चाहे अर्थ लगा बैठे,
मैं संतों की—अवधूतों की अटपद बानी।

जगमग-जगमग विस्तीर्ण सौर-मण्डल का मैं,
टिमटिम करता छोटा सा एक सितारा हूँ।
मैं भूल-भुलैयों का व्यापक निर्देश नही,
मैं अक्लमन्द को हलका एक इशारा हूँ।

मैं उपदेशों का परिधिहीन विस्तार नहीं,
लघु सूत्र एक, मैं चिन्तनशील मनस्वी का।
मैं विधि-निषेध संयुक्त विशद साधना नहीं,
पल एक सुफल का पहुँचे हुए तपस्वी का।

मुझ मैं न राज-पथ इच्छाओं से विशद विपुल,
मेरी निधियाँ है, तृप्ति-भावना-सी गलियाँ।
विकृतियों के स्मारक से मुझ में सौध नहीं,
मेरे कच्चे घर, गौरव की विरदावलियाँ।

मेरी संस्कृति को, चपल सभ्यता की दासी,
उँगलियाँ थाम कर चलना नहीं सिखाती है।
मेरे विकास में पौरुष का विश्वास सजग,
मेरी लघुता, गुरुता को मार्ग दिखाती है।

संसद का करते दृश्य उपस्थित है अलाव,
मंत्रालय बन जाती मेरी चौपालें हैं।'
कर्मठ किसान उत्पादन का लड़ते चुनाव,
मत-पत्र बना करतीं गेहूँ की बालें है।'

मेरी संपत्ति, बन्दिनी नही कोषालय की,
बिखरी रहती है वह खेतों-खलिहानों में।
मेरी गरिमा न अनावृत-सी है नागरिका,
शोभित होती है वह धानी परिधानों में।

बचपन चौकड़ियाँ भरता हुआ चला जाता,
यौवन का चढ़ता रंग चटखती तीसी है।
दूल्हा-सा सजता चना गुलाबी सेहरे में,
उस पर सवार नादान उमर पच्चीसी है।

सर-सर करती है सरसों पवन-झकोरों से,
मुख पर मल दी, मानो विवाह की हल्दी है।
छेड़ती उसे अरहर, 'गोरी कुछ ठहर और,
प्रियतम घर जाने की ऐसी क्या जल्दी है।'

रानी-सी पुजती ज्वार छत्र धारण करके,
चम-चम मोती-से दाने सबका मन हरते
मक्का के भुट्टे चँवर लिए तैयार खड़े,
रजगिरा बाजरा झुक-झुक अभिवादन करते।

मैं कैसे पूरा विवरण दूँ निज वैभव का,
सम्पन्न खेत, यश-गाथा-से फैले रहते।
उजले रहते लोगों के मन दर्पण जैसे,
श्रम-साधक केवल हाथ-पैर मैले रहते।

नारियाँ नहीं, देवियाँ कहें तो अच्छा है,
सच्चे अर्थों में वे सब अन्न-पूर्णाएँ।
शुभ ग्रह जैसी वे गृह की जन्म-पत्रिका में,
वे पुरुष हाथ में प्रबल भाग्य की रेखाएँ।

उँगली की कूँची से घर की दीवारों पर,
जब करतीं वे अनगढ़ चित्रों की रचनाएँ।
तो सच मानो कृतकृत्य कला हो जाती है,
मिल पाती हैं उपयुक्त न उनको उपमाएँ।

तो मैं ऐसी जीवंत चेतना का प्रहरी,
लघु ग्राम एक, पर बहुत बड़े दिल वाला हूँ।
मै संघर्षो के पौठे पर हरियाया हूँ,
मैं गया नही नाजों-नखरों में पाला हूँ।

लखनवी शान, वैसे पड़ौस में ही मेरे,
पर मैंने उससे की सदैव सीना-जोरी।
क्या नाम बताना ही होगा मुझको हुजूर !
तो सुनिए, मुझको कहते है सब काकोरी।

जी हाँ काकोरी, मै काकोरी ग्राम एक,
जो क्रान्ति-काल मे लपटों जैसा चमक गया।
मैंने देखा धरती के दीवानों का दल,
साम्राज्यवाद की छाती पर आ धमक गया।

मै धीरज से खिलवाड़ करूँगा नही अधिक,
क्या हुआ, किस तरह हुआ, तुम्हे बतलाता हूँ।
विश्वास सुनी बातों पर कम ही करता हूँ।
आँखों देखी ही तुमको आज सुनाता हूँ।

●●●

रेल की नकेल

दिनकर ने ली दिन की अपनी पूँजी समेट;
वह था बिलकुल घर जाने की तैयारी में।
रह गई शेष थी तनिक क्षीण आभा उसकी,
जैसे कुछ निधि फँस कर रह जाय उधारी में।

वह रही-सही पूँजी डूबती दिखाई दी,
था डूब रहा सूरज का लाल-लाल गोला।
देवता प्रचारित करने शिला-खण्ड पर ही,
हो लेप दिया जैसे शुभ सिन्दूरी चोला।

धँस रहा क्षितिज में लाल-लाल सूरज ऐसे,
लग जाय आग, जल-पोत समन्दर में डूबे।
रोहित आभा पर तिमिर हो रहा था हावी,
नैराश्य-ग्रसित हों जैसे अच्छे मंसूबे।

पंछी, दल के दल बढ़े जा रहे थे ऐसे—
जाते हों जैसे श्रमिक रात की पाली के।
थी कान्ति क्षीण हो रही दिवाकर की ऐसे—
शोषित हों दिन जैसे यौवन की लाली के

वन से चर कर घर को थीं गाएँ लौट रहीं,
गोधूलि अधर में उठ कर ऐसी छाई थी—
छू रही किनारे दो, जैसे कोई धारा,
या धरती-अम्बर की हो रही सगाई थी।

मेरी साँसें भी श्लथ थी, दिन भर के श्रम से,
मैने सोचा, अब मैं सन्ध्या-वन्दन कर लूँ।
प्रेरणा मिली जो जीवन के संघर्षो से,
उसका कृतज्ञता से मै अभिनन्दन कर लूँ।

स्वर तभी सुनाई दिया मुझे कुछ धक-धक-धक,
दिख पड़ी धुएँ की काली रेखा भी ऐसे।
व्यक्तित्व कुटिल जब दिखता है, तब दिखता है,
अपकीर्ति चला करती आगे-आगे जैसे।

आ रही रेल गाड़ी थी कोई इठलाती,
फक-फट छक-छक वह बोल बोलती थी ऐसे—
कहती हो जैसे, सुनो ! सुनो ! लखनऊ वालो !
क्या पता तुम्हे जब्बलपुर के छः छः पैसे।'

लखनऊ वाले उत्तर दें, इसके पहले ही,
लग गई चाल को नजर किसी दीवाने की।
हक्की-बक्की भौचक्की-सी वह ठिठक गई,
रफ्तार समझ में आई नही जमाने की।

समझाने उसको क्रान्तिवीर कुछ कूद पड़े,
कानों में सिंहों की भीषण गर्जना पड़ी।
हम नहीं छुएँगे जान-माल जनता का, पर
तुम हिलो नही, जब तक यह गाड़ी रहे खड़ी।

रह गए सन्न सब लोग, बोल निकले कैसे,
सब दुबक गए दम साधे गोरे पलटनिया।
लुट रहा खजाना था अँग्रेजी शासन का,
बिक नही रहा था नमक, मिर्च, हलदी, धनिया।

पिल पड़े छैनियाँ-घन ले वीर तिजोरी पर,
तो मार-मार उसकी हड्डी-पसली तोड़ी।
जो माल हजम कर बैठी थी वह भारत का,
सब छीन लिया, उस पर न एक कौड़ी छोड़ी।

जो कुछ भी पाया, सब समेट वे खिसक गए,
जड़ दिया तमाचा शासन के मुँह पर भारी।
तिलमिला उठे अँग्रेज बहादुर चाँटे से,
खिलखिला उठे भारत के वीर क्रान्तिकारी।

मैने देखा, वे क्रान्ति-वीर सब ही के सब,
यौवन-मद में मदमाते सिंह हठीले थे।
थे पुष्ट पक्ष, गर्वोन्नत मस्तक, सबलबाहु,
तेजोद्दीप्त, बलशाली और गठीले थे।

नेता तो नेता था ही, उसका क्या कहना,
अंगारों से यौवन वाला वह बिस्मिल था।
आजाद चन्द्रशेखर भी था उन्नीस नहीं,
वह आत्म-व्रली, संकल्पी, निडर, शेरदिल था।

वैसे जब आती उमर, सभी होते जवान,
कुछ और बात थी उस पर चढ़ी जवानी में।
संकल्प धधकते थे उसके उर में ऐसे—
लग जाए जैसे आग सिन्धु के पानी में।

———

लखनऊ

खुली बग़ावत

लखनऊ नाम, क्या आप कहेंगे नगर मुझे ?
जी नहीं, कृपा करके मुझको नगरी कहिए।
मन ऊब गया हो अगर आपका जीवन-से,
तशरीफ लाइए, आप यहाँ आकर रहिए।

देखेंगे मेरा रूप, 'वाह !' कह बैठेंगे,
सम्भव है चोरी-छिपे आह भी भर लेंगे।
सपने, जो छलते रहे आपको अब तक हैं,
वे अपने सपने आप यहाँ सच कर लेंगे

इस कदर घूर कर आप देखते क्यों मुझको,
छलछला उठी क्यों प्यास हृदय की आँखों में ?
परिचय पाने को उत्सुक हों, तो सुनिएगा,
मैं ऐसी-वैसी नही, एक हूँ लाखों में।

मैं किसी मेढ़ पर खिला जङ्गली फूल नहीं,
मैं स्निग्ध सुमन की कोमल मृदुल पाँखुरी हूँ।
मै नहीं सिपाही जैसा खड़ा तानपूरा,
जो अधर-शयन करती, मैं वही बाँसुरी हूँ।

मैं रूप-रंग की नही चटख भर ही केवल
मैं सिक्त-सुरभि भी, जो मन को हुलसाती है।
मै दूध-नहाई हुई चाँदनी की फिसलन,
वह धूप नही मैं, जो तन को झुलसाती है।

मै नही किसी के फूहड़ अट्टहास जैसी,
मैं लजवन्ती मुस्कानों की मृदु सिहरन हूँ।
मैं किसी रूप के प्यासे की हूँ नजर नही,
अध-खुले नयन की बाँकी-तिरछी चितवन हूँ।

अरमान भीड़ बनकर बौराए-से फिरते,
अव्यक्त खुमारी-सी मन पर छा जाती है।
सुरमई किनारी की सिन्दूरी साड़ी मे,
जब नेह-निमन्त्रण-सी सन्ध्या आ जाती है।

है नाज और नखरे मेरे आभूषण, पर,
मशहूर नही केवल लखनवी नजाकत है।
जब कभी जुल्म की छाया मुझ पर पड़ती है,
हर चितवन ही बन जाती खुली बगावत है।

लावा बन जाता खून खौलता हुआ, और,
विस्फोट अनय की लघु आहट बन जाती है।
हर शोख अदा करती विद्रोह भयानक है,
हर भाव आग, हर साँस लपट बन जाती है।

यदि सुनी आपने हो चर्चा सत्तावन की,
यदि पृष्ठ पलट कर देखे हों इतिहासों के।
मेरे विद्रोही पैरों ने मुँह कुचले थे,
नापाक इरादे लिए खून के प्यासों के।

तब थिरक उठे थे पाँव, जवानी नाची थी,
लहलह करते जलते भीषण अंगारों पर।
धड़ से फिरंगियों के सर उछल-उछल पड़ते,
जब हाथ जवानों के पड़ते तलवारों पर।

आँखों में उतरे हुए खून की सुर्खी ले,
रण-खेतों में जब मेरे शेर उतरते थे।
अँग्रेज लड़ाके बख्शो! बख्शो! चिल्लाते,
नापाक इरादे तोबा! तोबा! करते थे।

मैं वही लखनऊ, मुझमें वही खून अब भी,
बरजोर खून में अब भी वही रवानी है।
हर बूँद खून की, है पागल तूफान लिए,
हर बूँद, जोश की जलती हुई निशानी है।

हाँ, एक बात रह गई और वह भी कह दूँ,
अँग्रेज हुकूमत ने फिर मुँह की खाई थी।
अपने आँचल से मैंने तेज हवा की थी,
जब आग क्रान्तिकारी दल ने भड़काई थी।

वे मुट्ठी भर, लेकिन पहाड़ से टकराए,
साम्राज्यवाद की कैसी शान उछाली थी।
दुनिया के आगे बड़ी नाक वाले बनते,
उस बड़ी नाक में उनने कौड़ी डाली थी।

काकोरी कहता, क्रान्तिकारियों ने उनकी,
गाड़ी तो क्या, सचमुच इज्जत ही लूटी थी।
जब रास खींच कर उसे रोक ली, तो उनकी—
छूटती कहाँ से गाड़ी, नाड़ी छूटी थी।

वह लुटी-पिटी गाड़ी आई रोती-रोती,
वे क्रान्ति-वीर आए इठलाते मदमाते।
अपनी आँखो से मैंने दोनों को देखा,
वे दिन रह-रह कर अब भी मुझे याद आते।

बिस्मिल, उफ-कैसा विकट हौसला था उसमें,
वह जान झोंक देने मे औरों से बढ़कर।
अशफाक चाँद-सूरज का एक नमूना था,
वह चमक उठा, शासन की छाती पर चढ़ कर।

रोशन, बहादुरी को रोशन करने आया,
वह अक्खड़ता है अब न देखने को मिलती।
राजेन्द्र गजब की अलमस्ती उसने पाई,
जो उसे देखता, मन की कली-कली खिलती।

आजाद, नहीं मिलती उसकी कोई मिसाल,
क्या विकट दिलेरी और बला की तेजी थी।
कुछ खास तौर से अपने हाथों से गढ़कर,
वह हस्ती मालिक ने दुनिया में भेजी थी।

वह झूम-झूम कर चलना, उसका इठलाना,
वह जोखिम में उसका आगे-आगे रहना।
वह शान, बहुत मुश्किल करना उसका बयान,
वह वतन-परस्ती उसकी, उसका क्या कहना।

अफसोस! जाल में उलझ गए उनमें से कुछ,
फिर हुआ न्याय का नाटक, जैसे होता है:
वे झूल गए फन्दे पर हँसते-हँसते ही,
दिल करके उनकी याद आज भी रोता है।

आजाद, नाम जैसा खुद भी आजाद रहा,
अँग्रेज हुकूमत छू न सकी उसकी छाया।
वह आँख-मिचौनी रहा खेलता उससे ही,
था नोंच रहा खम्भा, वह शासन खिसियाया।

● ● ●

विकट हौसला

ले रहे आप रुचि हैं मेरी इन बातों में,
इसलिए कर रहा दिल, कुछ और सुनाऊँ मैं।
आजाद किस तरह लुका-छिपी खेला करता,
कुछ और करिश्मे देखे हुए, सुनाऊँ मैं।

आ सकी न कोई उसके दिल में दुर्बलता,
आती कैसे, वह शक्ल देख घबराती थी।
धीरता डालती थी उस पर अपने डोरे,
वीरता निछावर उस पर हो-हो जाती थी।

शासन की आँखों में वह धूल झोंकता था,
पानी में रहकर बैर मगर से करता था।
जब कमजोरी उसके दिल में थी आ न सकी,
डर भी उसके दिल में आने से डरता था।

स्वच्छन्द पवन जैसी उसकी इच्छाएँ थी,
अरमान अग्नि-मुख-पर्वत जैसे बलशाली।
उसकी गति-विधियाँ होनहार की गति जैसी,
आजाद शत्रु के लिए बना करता बाली।

उस दिन उसके मन में यह इच्छा तडप उठी,
अशफाक जेल में है, उससे मिल आऊँ मै।
दो बातें करना सचमुच अगर पाप है तो,
दर्शन करके ही जी की जलन मिटाऊँ मै।

इच्छा का अंकुर उगा, पात फूटे-फैले,
जीवन लहराया, फूलों ने थे फ़ल पाए।
जेलर साहब ने सुना, वहाँ उनसे मिलने,
कोई अच्छे-खासे तगड़े लाला आए।

"बन्दगी, हुजूरे आली ! मैं साहू चन्दर,
हाजिर हूँ अपने वतन बड़ौदा से आकर।
सोचा, हुजूर की खिदमत में कुछ अर्ज करूँ,
मैं देखूँ अपना भाग्य यहाँ भी अजमा कर।

मै मूँगफली का बहुत बड़ा व्यापारी था,
पिट गया सभी व्यापार, दिवाला निकल गया।
सोचा, दुर्दिन में घर से दूर रहूँ चलकर,
रोजी-रोटी के लिए करूँ कुछ काम नया।

सुनते हैं, रसद कैदियों को जो दी जाती,
यह काम दिया जाता है, ठेकेदारों को।
इस साल इनायत हो मुझ पर गरीब-परवर !
मिल जाए रोटी, हम जैसे बेचारों को।

जो सिफ्त काम में मेरे, वह भी बतला दूँ,
वह रसद, जेल के कैदी यद्यपि खाएँगे।
पर असर पड़ेगा रसद बाँटने वालों पर,
वे मुझ जैसे, मोटे-तगड़े हो जाएँगे।"

"लालाजी ! यह दिल्लगी नहीं, गर सच है तो,
हम कोशिश करके काम तुम्हें दिलवाएँगे।
पर खौफ हमें, यदि अनशन कर बैठे कैदी,
तो क्या उन जैसे पिचक नही हम जाएँगे।

झाँसी

मौत की माँग

मै झाँसी, दुश्मन के मंसूबों की फाँसी,
मैं ज्योति वीरता के ज्वलंत आदर्शों की।
स्वातंत्र्य हेतु तलवार सान पर चढ़ी हुई,
जीवंत प्रेरणा मैं भीषण संघर्षों की।

मेरी मिट्टी में बारूदी विस्फोट सजग,
हर कंकड़ ही मेरा, बलिदान-कहानी है।
हर पत्थर है बेजोड़ वीरता का स्मारक,
मैं वह, जिसमें पर्याय आग का, पानी है।

मै वह, जिसकी बरजोर हवाओं में बिजली,
जिसकी हर पत्ती के है तेवर तने हुए ।
जिससे टकरा कर मौत स्वयं मुँह की खाए,
मेरे बेटे है उसी धातु के बने हुए ।

तलवार हाथ मे लिए बुन्देला टूट पड़े,
दुश्मन पर्वत भी हो तो वह हट जाएगा ।
वह टूट जायगा किन्तु झुकेगा नहीं कभी,
धरती के हित वह खड़ा-खड़ा कट जाएगा ।

यदि नाम पूछना हो मेरा, तो सुनो पथिक !
लन्दन वालों से पूछो, वे बतलाएँगे ।
झाँसी कहने के पहले थर-थर काँपेगे,
लेते ही मेरा नाम, घाव हरियायेगे ।

जब डींग मारते हों वे कभी वीरता की,
ले दो झाँसी का नाम, मुर्दनी छाएगी ।
वे भले भूल जाएँ अपने राजा-रानी,
झाँसी की रानी नही भुलाई जाएगी ।

मैं झाँसी, मेरा नाम स्वयं इतिहास एक,
अक्षर-अक्षर बलिदान कहानी कहता है ।
जब कभी देश का मान दाव पर लगता है,
मेरा विद्रोही खून नहीं चुप रहता है ।

मेरी मिट्टी के आगे सोना मिट्टी है,
मेरी मिट्टी, हर देश-भक्त को चन्दन है ।
हर कण सजीवता की जीवित परिभाषा है,
हर क्षण जीवन का सर्वोपरि अभिनन्दन है ।

जिनके अंतर में देश-भक्ति की अमर ज्योति,
वे दीवाने, मेरे दर्शन को आते है।
उनकी भावुकता मेरे लिए समस्या है,
मेरी मिट्टी, वे अपने शीष चढ़ाते है।

आया था ऐसा ही दीवाना एक कभी,
शायद उसने कुछ आक-धतूरा खाया था।
सब लोग माँगते सुखी, दीर्घ, अच्छा जीवन,
वह मुझसे अच्छी मौत माँगने आया था।

बोला, माँ! दे सकती हो तो यह वर दे-दे,
आजादी के तेरे सपने साकार करूँ।
ालेख प्रेरणा की जो रहे पीढ़ियों को,
ो मुर्दों को जीवन दे, ऐसी मौत मरूँ।

ह गई स्तब्ध, जब उसकी अटपट माँग सुनी,
ाँ' या 'ना' इनमे से कुछ भी कैसे कहती।
ासने मुझको माँ कह, मेरी पद-रज ली थी।
मौत कं बन कर उसकी मौत भला कैसे सहती।

ा' भी इसलिए नही मेरे मुँह से निकला,
ुग-ध्वनि उसकी वाणी मे मुझे सुनाई दी।
आजादी की तस्वीर गढ़ी थी जो मैने,
उसके संकल्पों में मुझको दिखलाई दी।

मैं इतना ही कह सकी, यशस्वी रहो वत्स!
तेरा जीवन, मेरे सपनों की गोद पले।
क्या कहूँ मौत की, मौत नही, वह जीवन हो,
तेरे इच्छा-पथ पर वह सहमी हुई चले।

● ● ●

वर की खोज

आजाद, गोद मे मेरी ऐसे आ बैठा,
सचमुच ही जैसे मैने उसको गोद लिया।
उसके प्रति इतना स्वाभाविक आकर्षण था,
जैसे हठमठ हो उसने मेरा दूध पिया।

अँग्रेजी शासन के मुँह पर थप्पड़ जड़कर,
मेरी गोदी मे आ बैठा निर्भीक-मना।
जैसे घर मे ऊँचाई पर हो चित्र टँगा,
पंछी उसके पीछे ले अपना नीड़ बना।

या जैसे कोई सिह देख अपना शिकार,
कुछ दुवक, संकुचित हो धरती से सट जाए।
फिर अपनी पूरी शक्ति लगा भर कर उछाल,
कसमसा तीर-सा छूटे, उसे झपट खाए।

वैसे ही वह आजाद वीर वज्रांग बली,
दम साधे था अपने दुश्मन पर फट पड़ने।
कर रहा शक्ति का सचय था सक्रियता से,
साम्राज्यवाद के दुर्दम दानव से लड़ने।

अज्ञात वास ही केवल उसका लक्ष्य न था,
वह सूत्र क्रान्ति के धीरे-धीरे जोड़ रहा।
यौवन, जो होता चकाचौध पर न्यौछावर,
संघर्षों के पथ पर वह उसको मोड़ रहा।

उर्वरा भूमि में यत्न-लता लहलहा उठी,
कलियों ने आँखें खोलीं, श्रम ने फल पाए ।
आजाद अकेला नही शत्रु के सम्मुख था,
विश्वस्त मित्र थे अब उसके दाँए-बाँए ।

यौवन की आँधी उठी वेग से हहराती,
लड़खड़ा उठी अत्याचारों की सजल घटा ।
आराध्य देश, व्यक्तित्व श्लेष था उन सबका,
संकल्प-साधना अनुप्रास की दिव्य छटा ।

जब सुखद नींद की घनी छाँह में, लोगों के
यौवन के मीठे मादक सपने पलते थे ।
कर्तव्य-सजग उनके अंतर भट्टी बनते,
संकल्प मुक्ति के, गोले जैसे ढलते थे ।

संकल्प अकेले ढलते, ऐसी बात न थी,
निर्मित होते सचमुच विध्वंसक बम गोले ।
था बारूदी उत्साह भड़क उठने आतुर,
सब तुले हुए थे, जो होना है सो होले ।

हम भूख-प्यास जिस आवश्यकता को कहते,
उस दुर्बलता के आगे थे वे झुके नही ।
उठ गए पाँव, तूफान ताकता रहा उन्हें,
वे आग और पानी से बाधित रुके नही ।

क्या वस्तु विवशता है, उनने जाना न कभी,
भय क्या है, उससे परिचय भी तो हुआ नही ।
घर की सीमाओं ने उनको बाँधा न कभी,
अपनों की ममता ने उनका मन छुआ नही ।

आजाद, देश की आजादी था खोज रहा,
संघर्ष-शील मन के संकल्पों के वन में।
हर साँस दासता से भारी-भारी लगती,
कस रही खाल थी उसकी, माँ के बन्धन में।

भुजदंड फड़कते थे अरि का मर्दन करने,
वह दाँत पीसता था उसको खा जाने को।
उसका यौवन था प्रलय-मेघ-सा घुमड़ रहा,
धरती के दुश्मन पर विनाश बरसाने को।

था सूँघ रहा शासन भी उसकी गतिविधियाँ,
वह डाल रहा था जाल, उसे उलझाने को।
बढ़ रही समस्याएँ थीं उसकी दिन-दूनी,
आजाद चाहिए था उनको सुलझाने को।

हथकड़ियाँ थीं बेचैन वरण करने उसका,
वे आस लगाए उसकी, बैठी थीं क्वाँरी।
ससुराल बने, यह कारागृह की साध रही,
कर रहे सभी थे धूमधाम से तैयारी।

बढ़ रहे भाव, आजाद अकड़ता जाता था,
था माँग रहा वह भी दहेज में आजादी।
शासन ससुरा, यह देने को तैयार न था,
इस उलझन में थी अटक रही अब तक शादी।

जब देखा, उसको सभी दबाने तुले हुए,
सब उसे फाँसने डाल रहे घेरा भारी।
तो वह भी सबको धता बता कर निकल गया,
रम गया कहीं वह, बन कर बाल-ब्रह्मचारी।

ओरछा

अज्ञात योगी

ओरछा नाम, मैंने भी जीवन देखा,
मै ग्राम-नगर दोनो की सीमा-रेखा।
खण्डहर, बीते वैभव की याद दिलाते,
अब लहराते है खेत गॉव के नाते।

खण्डहर जिनमें साहित्य दबा सोता है,
उसकी साँसों का भास मुझे होता है।
लगता है, जैसे केशव बोल रहे है,
कानों में जैसे मधुरस घोल रहे है।

लगता है, जैसे इन्द्र-सभा मुखरित है,
लगता है, जैसे राज प्रजा का हित है।
लगता है, जैसे हर घर कला-निकेतन,
लगता, जैसे रस-सराबोर जड़-चेतन।

स्वर के झूलों पर राग झूलता दिखता,
गौरव से है हर वक्ष फूलता दिखता।
कुछ छायाएँ, जैसे हिलती-डुलती हैं,
जैसे वे आपस में मिलती-जुलती है।

प्रेरणा यहाँ है प्राणवंत कण-कण में,
युग के युग जैसे समा रहे हर क्षण में।
बीते वैभव की याद गर्व बनती है,
वह वर्तमान को पुण्य-पर्व बनती है।

चढ़ रही धूल यश पर यद्यपि विस्मृति की,
पर है विचित्र कुछ चाल समय की गति की।
कोई झोका आता है धूल उड़ाता,
वह मेरे गौरव को फिर से चमकाता।

कुछ दिन पहले ही ऐसा झोका आया,
वह मुझको बिलकुल नई चेतना लाया।
वह पवन झकोरा मनुज-देह-धारी था,
वह कोई पहुँचा हुआ ब्रह्मचारी था।

पूछा, तो बोला नाम हरी शंकर है,
जीवन बिलकुल आजाद, देश ही घर है।
जिस जगह लगा मन, योगी रम जाता है,
जीवन-प्रवाह कुछ दिन को थम जाता है।

उस योगी में कुछ कान्ति विलक्षण देखी,
अव्यक्त साधना उसमें हर क्षण देखी।
तन ऐसा, जैसे पौरुष देह धरे हो,
मन ऐसा, जैसे पूरा सिंधु भरे हो।

मुख पर ज्वलंत जैसे संकल्प लिपे हों,
वाणी में जैसे अगणित भेद छिपे हों।
आँखों में जैसे कोई लौ जलती हो,
संसृति, जैसे संकेतों पर चलती हो।

योगी की कुटिया थी सातार किनारे,
हो सिद्धि खड़ी जैसे साधन के द्वारे।
फलवती हुई हो जैसे कठिन तपस्या,
या लिए चुनौती कोई जटिल समस्या।

सातार, कि जैसे इच्छा मचल रही हो,
चाँदी, जैसे आतप से पिघल रही हो।
चलती, तो चट्टानों से टकराती थी,
वह उछल-उछल संघर्ष गीत गाती थी।

कहती हो जैसे, जीवन केवल गति है,
गतिशील समय, गतिशील स्वयं संसृति है।
यदि बैठ गए थक कर, जीवन की यति है,
जीवन की यति, बस दुर्गति ही दुर्गति है।

वह कुटिया भी उसकी हाँ में हाँ भरती,
संघर्ष निरन्तर क्रुद्ध वन से करती।
जर्जरित पात झोकों से उड़ जाते थे,
योगी के श्रम से वे फिर जुड़ जाते थे।

वर्षा आती, तो छाजन रोक न पाता,
योगी कोने में सिमटा रात विताता।
था शिशिर-समीरण, जैसे तीर चलाता,
हड्डी-हड्डी को भेद प्राण छू जाता।

कोई योगी को विचलित कर न सका था,
डर उसे डराता, पर वह डर न सका था।
अर्जुन-वृक्षों पर झुकता घना अँधेरा,
भूतों-प्रेतों का जैसे उन पर डेरा।

हर रात विकट भय की सराँय होती थी,
जगली हवा की साँय-साँय होती थी।
वाहर हू! हू! करके शृगाल रोते थे,
अच्छे-अच्छे अपना धीरज खोते थे।

थे कभी भयानक वन पशु शोर मचाते,
दरवाजे पर ही सिंह कभी आ जाते।
योगी, जैसे भय को दुर्वेद्य किला था,
पर्वत जैसा अविचल मन उसे मिला था।

श्रम उसके जीवन का अति पावन क्रम था,
वजरग वली की पूजा नित्य-नियम था।
सिंदूरी चोला उन्हें चढ़ाया करता,
कुछ इधर-उधर भी वह हो आया करता।

जा रहा एक दिन था वह वन-प्रान्तर में,
थे घुमड़ रहे कुछ भाव सजग अंतर में।
आ निकट, पुलिस वालों ने उसको घेरा,
"सच-सच वतला क्या असल नाम है तेरा?

लगता तू ही आजाद क्रान्तिकारी है,
यह भेष बदल कर बना ब्रह्मचारी है।
हम अभी साथ ले चलते तुझको थाने,
सब आ जाएगी तेरी अकल ठिकाने।"

योगी बोला, "क्यों तुम सब मुझे सताते,
आजाद क्रान्तिकारी क्यो मुझे बताते।
वैसे मै हूँ आजाद क्योकि योगी हूँ,
मै नही किसी का चर वेतन-भोगी हूँ।

जिसने घर छोड़ा, बना ब्रह्मचारी है,
वह व्यक्ति कर्म से सदा क्रान्तिकारी है।
पर छोड़ो इन बातों को, तुम घर जाओ,
मैं हनूमान का भक्त, न मुझे सताओ।

बजरग वली को चोला मुझे चढाना,
जब जी चाहे, तुम भी प्रसाद ले जाना।"
योगी ने उनको भरमाया बातों में,
क्या जीते उससे कोई प्रतिघातों में।

उनको टरका, योगी कुटिया पर आया,
निज इष्टदेव को आकर शीप नवाया।
बोला, "बजरंगी! खूब बचाया तूने,
संकट मे अच्छा मार्ग सुझाया तूने।

पकडा जाता तो हवा जेल की खाता,
सब किए-कराए पर पानी फिर जाता।
तेरे बल पर मै हरदम यही कहूँगा,
आजाद नाम, हरदम आजाद रहूँगा।

पैदा न हुआ कोई, जो मुझको पकड़े,
जंजीरों में मुझको कोई क्या जकड़े।
यह पुलिस, स्वयं हारेगी और थकेगी,
जीतेजी, मेरी छाया छू न सकेगी।"

●●●

योग-माया

अनुदिन प्रसरित योगी की ख्याति-परिधि थी,
वढ़ रही ब्याज जैसी ही यश की निधि थी।
सौरभ को क्या कोई बन्दी कर पाया ?
क्या नही क्षितिज से सूरज वाहर आया ?

विश्वास जहाँ जमता, श्रद्धा वढ़ती है,
वह तेज नशे जैसी मन पर चढ़ती है।
यश की निधि लूटे कभी नही लुटती है,
जितनी लूटो, वह दूनी आ जुटती है।

जव कीर्ति-कौमुदी फैल गई घर-घर में,
कुटिया का योगी था सवके अंतर में।
लग गए भक्त-जन अब दर्शन को आने,
अर्पित करते थे लोग फूल, फल पाने।

थी एक साँझ, वह बेला गोधूली थी,
वन-प्रांतर मे संध्या फूली-फूली थी।
वरदान प्रकृति ने शोभा का पाया था,
मन का हुलास, जैसे वाहर आया था।

योगी यह मोहक दृश्य निहार रहा था,
वह मन में उसका चित्र उतार रहा था।
उसकी तन्मयता में कुछ वाधा आई,
दी उसे मृदुल कोमल पदचाप सुनाई।

कुछ क्षण में ही उसके सम्मुख आकृति थी,
जैसे कि देह धर आई स्वयं प्रकृति थी।
तन की द्युति, जैसे फेनिल चन्द्र-घटा हो,
अलकावलि, जैसे श्यामल सघन घटा हो।

आँखे, जैसे दो झीले भरी-भरी हों,
पुतलियाँ, कि जल मे तिरती हुई तरी हों।
पलके, जैसे सीपियाँ मोतियों वाली,
करती वरौनियाँ निज धन की रखवाली।

भृकुटी, जैसे दो इन्द्र-धनुप उग आए,
चितवन, जैसे मन्मथ ने तीर चलाए।
उर, जैसे लहराता तूफानी सागर,
करता हो जैसे अपना ओज उजागर।

वह यौवन, जैसे लेता हो अँगड़ाई,
साँसो मे जैसे केशर-गंध समाई।
गति, जैसे गर्वीली नागिन लहराए,
जिस ओर चले, भारी उत्पात मचाए।

उत्पात उपस्थित योगी के सम्मुख था,
जैसे कि समन्वित हो आया सुख-दुख था।
दोनों अवाक्, दोनों हतप्रभ, सम्मोहित,
जैसे प्रभाव हो पारस्परिक प्ररोहित।

युग जैसे भारी लगे उन्हें कुछ क्षण थे,
दोनों अंतर ही वोझिल भाव-प्रवण थे।
प्रकृतिस्थ भावनाएँ, अव मौन मुखर था,
अव हुआ निनादित वीणा से मृदु स्वर था।

"योगी के द्वारे दर्शन को आई हूँ,
मैं भेट हेतु, कामना एक लाई हूँ
आशा है खाली हाथ नही जाऊँगी,
जो मेरे मन में है, वह वर पाऊँगी।"

"कल्याण कामना हेतु देवि ! प्रस्तुत हूँ,
केवल साधक, मैं सिद्ध नही विश्रुत हूँ।
अभ्यास योग का है मेरा साधारण,
क्या पूछूँ मै इस अमित कृपा का कारण ?"

"मेरी पीड़ा का पूंछ रहे हो कारण,
कारण भी तुम ही, उसके तुम्ही निवारण।
सब जान-बूझ अनजान बन रहे योगी,
क्यों नही मुझे वरदान बन रहे योगी ?

यह योग-साधना किसके हित अपनाई ?
चढते यौवन मे यह विरक्ति क्यों आई ?
क्या साध किसी की रह जाएगी प्यासी ?
यह रम्य रूप, मन मे क्यो वनी उदासी ?"

"वरदान वनूँगा कैसे मै कल्याणी,
गृह-हीन प्रथिक, बिलकुल नगण्य-सा प्राणी।
यह प्यास, प्यास है नहीं, मात्र विकृति है,
है तृप्ति एक इसकी, वह भाव-सुकृति है।

मै स्वयं रूप का भक्त, रूप वह मन का,
सौन्दर्य नही होता है केवल तन का।
तुम जिसे रूप कहती हो, वह तो छल है,
वह रूप, आत्मा का ही केवल है।"वल

"मै मन देती योगी! तुम मुझको वल दो,
हम वने मनोवल, जीवन को संवल दो।
दो तन होकर, हम एक रूप हो जाएँ,
जिस लिए मिला जीवन, उसका फल पाएँ।

"तुम पुरुष, और मैं प्रकृति-स्वरूपा नारी,
हम दोनों ही सह-जीवन के अधिकारी।
मनु के आगे श्रद्धा हो रही समर्पित,
हम करे आज नव-जीवन, नव-रस अर्जित।"

तुम शक्ति-स्वरूपा, फिर क्यों यह दुर्वलता?
क्या शोभित नारी को इतनी चंचलता?
कुल-शील आदि कुछ ज्ञात नही है मेरा,
क्यों व्यक्त अपरिचित के प्रति स्नेह घनेरा?"

"है प्रणय नही दुर्बलता, शाश्वत वल है,
यह मानव जीवन का पावन शतदल है।
अनुबंध प्रणय का कोई पाप नही है,
वरदान प्रणय है, वह अभिशाप नही है।

कुल-शील नही निर्णायक कभी प्रणय के,
कुल-शील नहीं बन्धन है कभी हृदय के।
पल एक वहुत है, दो अंतर मिल जाने,
रवि-रश्मि एक है बहुत कमल खिल जाने।

तुम मेरे हो, जब से तुमको देखा है,
व्यवधान नही अब विधि-निषेध रेखा है।
पल भर में ही तुमको पहचान लिया है,
मैंने तुमको बस अपना मान लिया है।"

"अनुबंध, देवि ! दो हृदयों में होता है,
उर एक, प्रणय का भार नही ढोता है।
दो हाथों से बजती सदैव है ताली,
मेरा अन्तर इस प्रणय-भाव से खाली।"

"मै हूँ निवेदिता, हृदय दे रही तुमको,
मीठे सपनों का निलय दे रही तुमको।
योगी, यह सब स्वीकार किया जाता है,
इन भावों का सत्कार किया जाता है।

जो ठुकराता है प्यार, बहुत पछताता,
लगता है उसको शाप, बहुत दुख पाता।
अभिशप्त बनो मत, जीवन का सुख पाओ,
वरदान स्वयं घर आया है, अपनाओ।"

"हूँ विवश देवि ! मैं तिल भर नहीं हिलूँगा,
इस जीवन में तो तुमको नही मिलूँगा।
मेरे जीवन मे नारी केवल माँ है।
वह ज्योतित पूनम है, वह नही अमा है।

तपते जीवन को, माँ शीतल छाया है,
माँ से महानता ने भी बल पाया है।
आना है तो अगले जीवन में आना,
माँ बन कर मुझको अपने गले लगाना।"

"योगी ! सचमुच तुम जीत गए मैं हारी,
तुम पुरुष नही हो, हो कोई अवतारी।
अनुभूति आज की अमर प्रेरणा होगी,
हों माया के अपराध क्षमा, हे योगी !

"मै मन देती योगी ! तुम मुझको वल दो,
हम वने मनोवल, जीवन को संवल दो।
दो तन होकर, हम एक रूप हो जाएँ,
जिस लिए मिला जीवन, उसका फल पाएँ।

"तुम पुरुप, और मै प्रकृति-स्वरूपा नारी,
हम दोनों ही सह-जीवन के अधिकारी।
मनु के आगे श्रद्धा हो रही समर्पित,
हम करे आज नव-जीवन, नव-रस अर्जित।"

तुम शक्ति-स्वरूपा, फिर क्यों यह दुर्वलता ?
क्या शोभित नारी को इतनी चचलता ?
कुल-शील आदि कुछ ज्ञात नही है मेरा,
क्यों व्यक्त अपरिचित के प्रति स्नेह घनेरा ?"

"है प्रणय नही दुर्वलता, शाश्वत वल है,
यह मानव जीवन का पावन शतदल है।
अनुवंध प्रणय का कोई पाप नही है,
वरदान प्रणय है, वह अभिशाप नही है।

कुल-शील नही निर्णायक कभी प्रणय के,
कुल-शील नहीं बन्धन है कभी हृदय के।
पल एक वहुत है, दो अंतर मिल जाने,
रवि-रश्मि एक है वहुत कमल खिल जाने।

तुम मेरे हो, जव से तुमको देखा है,
व्यवधान नहीं अब विधि-निषेध रेखा है।
पल भर में ही तुमको पहचान लिया है,
मैंने तुमको वस अपना मान लिया है।"

"अनुबंध, देवि ! दो हृदयों में होता है,
उर एक, प्रणय का भार नही ढोता है।
दो हाथों से बजती सदैव है ताली,
मेरा अन्तर इस प्रणय-भाव से खाली।"

"मैं हूँ निवेदिता, हृदय दे रही तुमको,
मीठे सपनों का निलय दे रही तुमको।
योगी, यह सब स्वीकार किया जाता है,
इन भावों का सत्कार किया जाता है।

जो ठुकराता है प्यार, बहुत पछताता,
लगता है उसको शाप, बहुत दुख पाता।
अभिशप्त बनो मत, जीवन का सुख पाओ,
वरदान स्वय घर आया है, अपनाओ।"

"हूँ विवश देवि ! मैं तिल भर नहीं हिलूँगा,
इस जीवन में तो तुमको नही मिलूँगा।
मेरे जीवन में नारी केवल माँ है।
वह ज्योतित पूनम है, वह नही अमा है।

तपते जीवन को, माँ शीतल छाया है,
माँ से महानता ने भी बल पाया है।
आना है तो अगले जीवन में आना,
माँ बन कर मुझको अपने गले लगाना।"

"योगी ! सचमुच तुम जीत गए मैं हारी,
तुम पुरुष नहीं हो, हो कोई अवतारी।
अनुभूति आज की अमर प्रेरणा होगी,
हों माया के अपराध क्षमा, हे योगी !

तुम हो जिसने नारी को विवश किया है,
जीवन बिलकुल ही मुझको नया दिया है।
जो व्रत-साधा तुमने, पूरा वह व्रत हो,
उस दिव्य-साधना से जन-जन उपकृत हो।

कानपुर

प्राणों की मशाल

मै शहर कानपुर, भारत का उद्योग नगर,
मै वह साँचा हूँ, जिसमें लक्ष्मी ढलती है।
मैं पल भर भी थक कर विश्राम नही लेता,
दिन-रात, सुबह या शाम, जिन्दगी चलती है।

मेरे जीवन का मूल-मन्त्र केवल श्रम है,
गंगा जैसा ही पावन मुझे पसीना है।
यदि आप कहे, यह जीवन एक अँगूठी है,
मैं कहूँ, पसीना ही उसका अनमोल नगीना है।

दिन-रात, वियोगी उर के सतत प्रज्ज्वलन-सी,
धू-धू करके भट्टियाँ प्रचण्ड दहकती है।
इस्पात पिघल जाता स्नेहिल अतर जैसा,
शुभ अगरु-धूप-सी साँसें नित्य महकती हैं।

श्रम अर्थ-व्यवस्था के क्षय से पीड़ित रहता,
श्रम का फल कोई पाए तो कैसे पाए।
पूँजीवादी अन्तर की स्वार्थ-साधना-सी—
चिमनियाँ खड़ी रहती सुरसा-सा मुँह बाए।

मन की विकृतियों जैसा धुँआ उगलती वे,
उनकी कालिख जन-जीवन पर छा जाती है।
जीवन पर छाई यह कालिख तब उड़ती है,
प्रज्ज्वलित क्रान्ति की जब आँधी आ जाती है।

आँधियाँ अनेकों मैंने ऐसी देखी हैं,
भूकम्प कई भीषण मेरे घर आए हैं।
मानव होकर जो मानव का शोषण करते,
अपनी लपटो से उनके मुँह झुलसाए है।

संघर्ष उठाए, मेरे उग्र विचारों ने,
तूफान भयंकर इन साँसों ने झेले हैं।
जिन्दगी धरोहर रखी नहीं फूलों के घर,
मैंने काँटों के खेल अनेको खेले है।

मेरी आँखो में घूम रहा सन सत्तावन,
जब मुक्ति-समर में मेरे शेर दहाड़े थे।
युद्धोन्माद ने भीपण प्रलय मचाया था,
वे झपट पड़े तो शत्रु कलेजे फाड़े थे।

फिर क्रान्ति-काल के वे दिन जब लपटे नाची,
पिस्तौलौ ने जब मचल भैरवी गाई थी ।
बम के गोलों ने भड़क-भड़क कर ताल दिया,
अँग्रेजों की तब अकल ठिकाने आई थी ।

वे सिंह-सूरमा एक-दूसरे से बढ़कर,
बन गया कानपुर उनके लिए अखाड़ा था ।
लोहू से उनने रँगा क्रान्ति के झण्डे को,
साम्राज्यवाद की छाती पर ही गाड़ा था ।

जब डूब गए कुछ तारे, कुछ टिमटिमा रहे,
आजाद, गगन में धूमकेतु-सा आया था ।
साम्राज्यवाद के पैरों की धरती खिसकी,
सत्यानाशी फल उसने उन्हे चखाया था ।

जाने कितनी थी आग विचारों मे उसके,
संकेतों मे ज्वालामुखियों का नर्तन था ।
बलिपंथी पागल पर्वानों को साथ लिए,
वह एक नए युग का कर रहा प्रवर्तन था ।

रौंदा करता था शत्रु-कलेजे मचल-मचल,
वह क्रुद्ध प्रभंजन जैसी भीषण चाल लिए ।
वह खोज रहा था भारत की आजादी को,
अपने प्राणो की जलती हुई मशाल लिए ।

● ● ●

अखण्ड भारत

मैं नगर कानपुर, भूल नही पाता वह दिन,
जब आसमान से सूरज आग उगलता था।
लगता था, जैसे किरणें गर्म सलाखें हैं,
धरती का चप्पा-चप्पा उनसे जलता था।

लू के प्रवाह का क्रुद्ध प्रवर्तन ऐसा था,
जैसे कि भयंकर आग पिघल कर आई हो।
या प्रलय-सूर्य ने स्वयं आगमन के पहले,
आगमन-सूचना की पत्रिका पठाई हो।

लगता था, जैसे, सौ-पचास भट्टियाँ नही,
बन गया नगर ही एक बड़ा-सा भट्टा है।
चिमनियों, धुएं के असित-रंग-आकर्षण से,
आतप सारा का सारा यहाँ इकट्ठा है।

सारा का सारा नगर एक भारी कढ़ाह,
जिसमें पड़कर चेतन-जीवन खलबला रहा।
लू के झोके, कर देते जीवन अस्त-व्यस्त,
जैसे कड़ाह में कोई कोंचे चला रहा।

ऐसे आलम में, लोग प्राण-रक्षा करने,
दुबके बैठे अपने-अपने घर के बिल में।
कुछ कर्मयोग के साधक उस दोपहरी मे,
लड़ रहे धूप से, आग लिए अपने दिल में।

आजाद साथ दल के, था वन-वन भटक रहा,
लग गई पुलिस को गंध नगर वह छान रही।
जितने अनियारी मूँछों वाले हाथ लगे,
वह पकड़-पकड़ कर उन सबको पहचान रही।

तप रही तवा जैसी धरती, पर वीर उधर,
था रौंद रहा वन को, वह दावानल जैसा।
जैसे कोई औघड़ हो जीत रहा ऋतु को,
या धुनी भटकता हो कोई पागल जैसा।

अपने मित्रों के प्रति उसका उदबोधन था,
साथियो ! आज जीवन की सही समीक्षा है।
यह धूप न केवल अपने लिए चुनौती है,
यौवन के उन्मादों की कठिन परीक्षा है।

तप रहे खून की गर्मी से, क्या धूप उन्हें,
चाँदनी समझ उसको, वे रास रचाते है।
जो अपने यौवन की है आग लिए फिरते,
वे किसी लपट से दामन नहीं बचाते हैं।

जिनके यौवन का खून खौलता नहीं कभी,
वे आग और लपटों की चर्चा करते है।
जिनके शोणित में आग प्रवाहित होती है,
ज्वालाओं के तल मे वे लोग उतरते है।

हम मस्तक अपने रख हथेलियों पर फिरते,
कोई प्रचण्ड आतप, क्या हमें डराएगा।
अपने सर से हम कफन बाँध कर ही निकले,
क्यों काल नही फिर हम से मुँह की खाएगा।

हम आजादी की देवी को करने प्रसन्न,
अपने प्राणों के पुष्प-हार लेकर निकले ।
निश्चित है, उसकी भेंट चढ़ेंगे ही हम सब,
हम में से कुछ, कुछ पीछे, या कुछ, कुछ पहले ।

इस लिए प्रतिज्ञा करें कि कोई दुर्बलता,
दल के गौरव पर कालिख नही लगाएगी ।
यदि देश-द्रोह की गंध तनिक भी आई, तो,
गोली ही उसको अनुशासन समझाएगी ।

जो मान-चित्र खींचा है हमने भारत का,
अपने शोणित का, हम सब उसमें रंग भरें ।
जीवन में और मरण में एक-दूसरे के—
हम साथ रहेंगे, मिलकर यह संकल्प करें ।

लग गई होड़, 'यह लो ! यह 'लो !' कहकर सबने,
अपने हाथों से अपना-अपना खून दिया ।
जो मान-चित्र खीचा अखण्ड भारत का था,
उसको रँग कर, जीवन को जोश-जुनून दिया ।

आगरा

आग का घर

जिसके अंतर में पौरुष की है आग भरी,
मैं उसी आग का हूं, आगरा कहाता हूं।
सब जुल्म-जोर के जल जाते हैं घास पात,
जब आग बदल कर मैं अपनी पर आता हूं।

मेरी सड़कों, गलियों, या कूंचे-कूंचे में,
भारत का है गौरव-शाली इतिहास छिपा।
मेरी अलसाई आंखों में चमत्कार छिपा,
मेरी शरमाई आंखों में अनुराग छिपा।

कह रहा कौन, आड़ा-तिरछा मेरा आँगन,
कुछ लाल-धवल उस आँगन मे पाषाण भरे।
सच बात अगर सुनना चाहे, मुझसे सुनिए,
मेरे पत्थर-पत्थर में जीवित प्राण भरे।

भारत की संस्कृति का जय-घोष कर रही जो,
वह यमुना भी मेरे घर होकर बहती है।
मेरे वैभव के जो दिन उसने देखे है,
वह उसकी गाथा हर दर्शक से कहती है।

क्या ताज महल का भी लेखा देना होगा?
आश्चर्य विश्व का, किन्तु गर्व वह अपनों का।
लगता है, जैसे कला देह धर आई है,
या फूल खिला बैठा है सुन्दर सपनों का।

या याद किसी की वर्फ बन गई है जम कर,
या कीर्ति किसी की गई दूध से है धोई।
या श्रम की साँसो की पावनता उग आई,
या गढ कर ही रह गई दृष्टि उजली कोई।

कोई कुछ भी कहना चाहे कह सकता है,
पर एक बात है, ताज ताज है भारत का।
वह व्यक्ति-स्नेह की यादगार तो है ही, पर
यह भी सच है, वह मान आज है भारत का।

यह नही कि स्वर की जमी लहरियाँ ही केवल,
यह नही कि मेरे फूल-फूल ही महके है।
लपटो ने भी गौरव की रखवाली की है,
जब कभी आँच आई, अंगारे दहके है।

आजादी के संघर्ष-काल के वे दिन, जब,
उठ खड़े हो गए जगह-जगह कुछ दीवाने।
उस महफिल की थी एक शमा भी जली, यहाँ,
आए थे जाने कहाँ-कहाँ से परवाने।

सरकार फिरंगी उन्हें क्रान्तिकारी कहती,
वह चून बाँध कर उनके पीछे पड़ी हुई।
वे भी तो उसके पीछे पड़े भूत जैसे,
आजादी पर दोनों की गाड़ी अड़ी हुई।

वे कहते, आजादी अधिकार हमारा है,
अधिकार माँग कर नही, इसे लड़कर लेगे,
सरकार खुशी से नही दे रही, तो अब हम,
आजादी इसकी छाती पर चढ़ कर लेगे।

हम नही याचनाएँ करने के विश्वासी,
हम मार-मार कर इनके भूत भगाएँगे।
हम गोली का, बमगोलों से उत्तर देगे,
आहुतियो से लपटो की भूख जगाएँगे।

●●●

चाँदनी और चट्टान-द्वीप

उस दिन जब निकला चाँद, चाँदनी भी निकली,
वह तेज नशे की हलकी हुई खुमारी-सी।
रेशमी-धवल साड़ी में धरा सुशोभित थी,
अवगुण्ठित स्नेहहिल विनय-शील सुकुमारी-सी।

चाँदनी, कि जैसे कुशल चाँद जादूगर ने,
दर्शक-दल पर अपनी मोहिनी बिखेरी हो।
या किरण-जाल फैला धरती को फाँस लिया,
नभ के मचान पर बैठा चाँद अहेरी हो।

चाँदनी, धरा पर दूती बन कर आई-सी,
वह चाँद, प्रतीक्षा-रत जैसे अभिसारी हो।
या मुँह जिसका फक हुआ जमा-पूँजी खोकर,
वह चाँद, कि जैसे हारा हुआ जुआरी हो।

चाँदनी, कि जैसे उजली कीर्ति कलाधर की,
दिशि-विदिशाओं मे सुमन-सुरभि-सी फैली थी।
वह चाँद, सुकवि जैसे रहस्यवादी कोई,
चाँदनी, कि, जैसे उसकी अपनी शैली थी।

वह चाँद, फुहारों का हो जैसे छतनारा,
धरती जैसे जी-भर मल-मल कर नहा रही।
चाँदनी, कि जैसे स्वच्छ झाग हो साबुन का,
या घट से ग्वालिन दूध धरा पर बहा रही।

में स्नात आगरा रूप-रङ्ग-रस धारा में,
स्वप्निल कल्पना-तरंगों में लहराया-सा।
राका रजनी की रजत-रश्मियों से कर्षित,
था ताज क्षेत्र में जन-जीवन बौराया-सा।

कुछ यहाँ-वहाँ बैठे थे बिखरे-बिखरे से,
गपशप करते मुकुलित सुरभित उद्यानों में।
मखमली गलीचे जैसा हरित दूर्वा-दल,
मृदु सिरहन भरता यौवन के अरमानों में।

थी होड़ लगी, कुछ सुमन उधर, कुछ सु-मन इधर,
सौरभ-तरंग थी प्रसरित बहु-धाराओं में।
कुछ भ्रमर उधर बन्दी थे सरसिज-संपुट में,
मन हुए इधर बन्दी, तन की काराओं में।

चाँदनी स्निग्ध-शीतल थी चन्दन जैसी, पर,
बाजार गर्म था विविध भाव-अनुभावों का।
थी कही उपालंभित प्रेमी की निष्ठुरता,
हो रहा प्रदर्शन कही हृदय के घावों का।

था मान-मनौवल कही, कहीं वादों की झड़,
थी कही दुहाई दी जाती विश्वासों की।
मीठे सपनों को सरसाती स्वर छेड़ रही,
बाँसुरी कही मादक श्वासों-प्रश्वासों की।

लगता, जैसे जीवन केवल वैभव-विलास,
लगता जैसे दुनिया केवल रस की धारा।
लगता जैसे सौन्दर्य चक्रवर्ती शासक,
लगता था, जैसे कोमल रूप कठिन कारा।

मनुहार-प्यार के इस अगाध सागर में ही,
संकल्प प्रखर भी थे कुछ, वड़वानल जैसे।
उठ रहा झाग फुसफुसा धरातल पर केवल,
भूकम्प छिपाए हुए अतल का तल जैसे।

आनन्द महा-सागर मे दो चट्टान-द्वीप,
कर रहे धरातल की गतियों का अनुशीलन।
उनके कठोर संकल्पों मे विस्फोट सजग,
वे क्या जाने मन की कलियो का उन्मीलन।

प्रतिमान द्वीप द्वय थे नगराज हिमालय के,
उपलब्धि एक की, तन-मन की ऊँचाई थी।
संगठित, पुष्ट पौरुप की घनीभूत गरिमा,
जो द्वीप दूसरा था, वह उसने पाई थी।

यदि नामकरण अत्यावश्यक हो, तो कह दूँ,
था भगतसिंह, पौरुप पञ्जावी पानी का।
आजाद, नाम था फौलादी सकल्पों का,
वह चरम विन्दु था तपती हुई जवानी का।

ज्योत्सना-सरोवर मे वे कमल-पत्र जैसे,
मन तो क्या, तन पर भी न बूँद क्षणभर ठहरी।
रस की रुचि ऐसी, जैसी पानी की लकीर,
कर्तव्य-सजगता पत्थर की रेखा गहरी।

आजाद फुसफुसाया, "क्या बुरा जमाना है,
अभिशाप गुलामी का साँसों पर छाया है।
यह यौवन है जो पिघल रहा शीतलता से,
यह जीवन का आनन्द लूटने आया है।

मन में आता है, अगर चले मेरा वश तो,
वैभव-विलास के घर में आग लगा दूँ मैं।
सम्मान बेच, सुख-नीद सो रहा जो समाज,
जी करता, उसको ठोकर मार जगा दूँ मैं।

प्रतिरोध न करता जो यौवन अन्यायों का,
जिस नए खून में नहीं आग की गर्मी है।
जिन साँसों में है लपटों जैसी लहक नहीं,
जिन्दगी, जिन्दगी नही, बड़ी बेशर्मी है।"

सहमति सूचक 'हाँ' भगतसिंह के स्वर में थी,
उद्दाम मनोभावों का किया समर्थन था।
उसके चिन्तन को तर्क सदा बनते खराद,
इसलिए विनत हो प्रस्तुत यह संशोधन था।

"क्यों आग लगाएँ हम अपने समाज में ही,
हम लोग गुलामी की ही चिता सजाएँगे।'
जिसने हमको अपने घर में गृह-हीन किया,
उसकी ईंटों से अब हम ईंट बजाएँगे।

आजादी अपना मूल्य माँगती है हमसे,
हम अपने मीठे सपनों का वलिदान करें।
जिसकी मिट्टी की गंध समाई साँसो में,
जीवन देकर, उस धरती का सम्मान करें।

उल्टी-सीधी, सीधी-उल्टी इसकी गति है,
यह व्यक्ति-देश का भाग्य-चक्र ऐसे फिरता।
मर-मिटे व्यक्ति, तो देश सँवरता है उनका,
यदि व्यक्ति सँवरते, देश वहुत नीचे गिरता।

इसलिए करें संकल्प, नीव के पत्थर बन,
छाती पर आजादी का महल उठायेंगे।
हम नींव खून से जितनी-जितनी सीचेंगे,
उस मंजिल पर हम उतने शिखर चढ़ाएँगे।"

आजाद तड़प कर बोल उठा, "सुन भगत सिंह !
यह खून देश का है, यह मेरा खून नहीं।
जो मेरे संकल्पों की गति को रोक सके,
इस शासन पर ऐसा कोई कानून नहीं।

मैं प्रलय-मेघ-सा शासन पर मँडराऊँगा,
मैं आजादी का पावन कमल खिलाऊँगा।
प्यासी धरती को लोग पिलाते पानी, मै—
अपनी धरती को अपना खून पिलाऊँगा।

मैं रक्त तिलक कर, वचन दे रहा हूँ तुझको,
लोहित लहरों मे तेरे साथ बहूँगा मैं।
जब खूनी तूफानों में कूद पड़ेगा तू,
उस तैराकी में पीछे नहीं रहूँगा मैं।"

लाहौर

प्यारे सपने

लाहौर, नगर में टूटे हुए सितारे-सा,
मैं ऐसा भटका, रहा ठिकाना-ठौर नहीं।
लाहौर, बिंब हूँ मैं भारत के दर्पण का,
मैं बदल गया हूँ, फिर भी क्या लाहौर नहीं ?

लाहौर, जगह वह—मिले जहाँ दो मोड़ मुझे,
मैं गलत दिशा में गलती से मुड़ आया हूँ।
लाहौर, पात मैं भारत की ही डाली का,
इस ओर हवा के झोंके से उड़ आया हूँ।

कहते है टूटा पात न डाली पर लगता,
क्या इस परवशता का मुझको कम खेद नहीं ?
जो चाहो रख दो नाम, नाम मे क्या रक्खा,
तुम राम कहो या मै रहीम, कुछ भेद नही ।

धरती तो अब भी वही, जहाँ मैं पहले था,
क्या आसमान टुकड़े-टुकड़े हो पाया है ?
है हवा एक, जो दोनों घर आती जाती,
प्रतिबन्ध किसी ने उस पर कभी लगाया है ?

इस बदले हुए जमाने में भी क्या बदला,
दिल वही रहा, केवल विचार ही बदले है ।
दुलहिन की डोली वही, वही दुलहिन भी है,
वे बदल न पाए, बस कहार ही बदले हैं ।

जो पाँख-पखेरू पहले थे, वे अब भी है,
गाते तो वे ही गीत आज भी गाते है ।
यदि बदल गया कुछ, ऐनक ही तो बदला है,
आँखों में अब भी वे ही सपने आते हैं ।

वह अँग्रेजों का जुल्म-सितम बरपा करना,
कंधे से कंधा मिला, सभी का भिड़ जाना ।
वह इम्तिहानों की होड, दौड़ कुर्बानी की,
आजादी की वह जंग अनोखी छिड़ जाना

वह शान्ति-अहिंसा की भारत-माता की जय,
वह आग क्रान्ति की, इन्कलाब का वह नारा
लगता था, जैसे ये बादल छँट जाएँगे,
लगता था, अब हो जाएगा वारा-न्यारा

पर जो कुछ मैने वारा, व्यर्थ हुआ सारा,
मेरे पाँसे भी उल्टे सारे के सारे ।
मै सोच रहा था अब वारे-न्यारे होंगे,
दो भाई लड़कर किन्तु हुए न्यारे-न्यारे ।

वह तीर जहर में बुझा हुआ था दुश्मन का,
कर गया काम, हम तड़पे और छटपटाए ।
जब न्याय तराजू बन्दर के हाथों में थी,
मिलना-जाना क्या था, केवल आँसू पाए ।

आँसू बोए, तो भेद-भाव की बेल उगी,
जब खिले फूल नफरत के, तो दुश्मनी फली ।
वे राम और रहमान साथ चलते थे जो,
अब उन दोनों में आपस में तलवार चली ।

जो कुछ मैने देखा, बयान के बाहर है,
जो हुआ, हो गया वह, उसको हो जाने दो ।
मत छेड़ो उन घावों को, छिड़को नमक नही,
दो घड़ी चैन पाऊँ, मुझको सो जाने दो ।

दो घड़ी नींद गहरी लग गई अगर मेरी,
तो वे विचार फिर मुझको नही सताएँगे ।
वे अच्छे दिन हौले-हौले फिर [illegible]
आँखों में [illegible] उनको [illegible] प्यारे सपने फिर आएँगे ।

फिर रास बिहारी बोस यहाँ पर आएँगे,
कर्तार सिंह को आकर गले लगाएँगे ।
कर्तार सिंह ने फन्दा चूम लिया यदि तो,
वे भगत सिंह को वह मस्ती दे जायेंगे ।

पंजाब-केसरी भगतसिंह फिर गरजेगा—
हम लालाजी की हत्या का बदला लेंगे।
सुखदेव ! राजगुरु ! ओ आजाद बली ! आओ !
हम हत्यारे को अच्छा एक सबक देंगे।

आजाद पुकारेगा, ओ भैया भगत सिंह !
मत समझ कि तू संकट में वहाँ अकेला है।
जब कभी दोस्त का गिरा पसीना धरती पर,
हँसते-हँसते आजाद जान पर खेला है।

फिर कूद-फाँद आजाद यहाँ आ धमकेगा,
आजादी के दीवाने गले मिलेंगे, फिर।
सान्डर्स, गोलियों से फिर भूना जाएगा,
उनकी पिस्तौलों से गुल कई खिलेंगे फिर।

जब चनन सिंह झपटेगा भगत सिंह पर, तो
आजाद गर्जना कर, ललकारेगा उसको।
कर सुनी-अनसुनी चनन सिंह यदि फिर लपका,
आजाद मौत के घाट उतारेगा उसको।

फिर लिखा मिलेगा घर-घर गली-गली में यह—
लालाजी की हत्या का बदला चुका दिया।
जो सर [illegible] से [illegible] कर चलता था,
थप्पड़ जड़कर उस सर को हमने झुका दिया।

छोड़ेगा मुझको भगत सिंह अफसर बनकर,
आजाद कीर्तन-मंडल एक बनाएगा।
मैं झूम उठूँगा उसकी मस्ती देख-देख,
मुझको सलाम करता-करता वह जाएगा।

मै रुखसत दूँगा उसे खुदा हाफिज कह कर,
उसकी खुशहाली की मैं दुआ मनाऊँगा ।
अपनी गर्दन को झुका देख लेने उसको,
मै दिल पर ही उसकी तस्वीर बनाऊँगा ।

मीठा-मीठा दर्द

तुम पूछ रहे हो मुझसे वे बीती बातें,
शायद तुम मेरी दुखती नस पहचान गए।
मैं करता हूँ महसूस दर्द मीठा-मीठा,
अजनबी मुसाफिर ! शायद तुम यह जान गए।

तो सुनो, एक-दो बाते और बताता हूँ,
आजाद, नही उसमें पंजाबी पानी था।
पर जो पानी था, वह तेजाबी पानी था,
क्या कहे खून की, वह बिलकुल लासानी था।

क्या सूझ-बूझ थी उसकी कार्य-व्यवस्था में,
किसी मजाल, जो एक नुक्स भी पा जाए।
योजना, देख लेता था वह नस-नस उसकी,
नामुमकिन क्या, जब वह अपनी पर आ जाए।

हौसला, भला उसका मुकाबिला कहाँ मिला,
जो मिले नही ढूँढ़े, वह विकट दिलेरी थी।
उसके आगे हिम्मत क्या तेरी-मे[illegible] आँख कहाँ ?

संकल्प, बपौती में जैसे उसने पाए,
आदर्श, स्वयं जैसे उसने अपनाए थे।
निस्वार्थ त्याग, जैसे यह उसकी आदत थी,
सच्चे नेता के गुण उसने सब पाए थे।

उस दिन, जब छेड़ा बहुत साथियों ने उसको,
गुस्से में आकर फेंक दिया अपना भोजन ।
साथी बोले—अफसोस हमे, पर पंडित जी !
पैसे लेकर, यह करो दुबारा आयोजन ।

आजाद कड़क कर बोला, पैसे कहाँ रखे ?
ये पैसे यो ही मुफ्त नही आ जाते है ।
जो कोई देता, वह अपने दल को देता,
हम भी उसको पूरा विश्वास दिलाते है ।

कर्तव्य-भार हम पर भी यह आ जाता है,
रक्खे हिसाब हम उनकी पाई-पाई का ।
खाने-पीने में पैसे नही उड़ाएँ वे,
सम्मान करे हम दल की नेक कमाई का ।

अब निराहार ही आज मुझे रहना होगा,
दल की निधि से, मै पैसा एक नही लूँगा ।
मेरा ही दिल, यदि मुझसे पूछेगा हिसाब,
क्या समझाऊँगा, उसको क्या उत्तर दूँगा ।

हाँ अगर चाहते तुम, मै भूखा नही रहूँ,
जो फेंक दिए नाली मे चने, उठा लाओ !
पानी से धो-धो कर उनको ही खाऊँगा,
अंतिम निर्णय है, मुझे नहीं तुम फुसलाओ ।

झख मार, उठाए गए चने नाली में से,
वे ही उसने खाए, पानी से धो-धो कर ।
अतिरिक्त एक पाई भी उसने छुई नही,
की नहीं खयानत उसने खुद नेता होकर ।

यह देख लिया तुमने, नेता क्या होता है,
कैसे संयम से वह ईमान बचाता है।
वह अपनी लम्बी जीभ नही फैलाता है,
लेकर डकार, वह पैसे नही पचाता है।

जो कुछ मिल जाए, हड़प नहीं लेता है वह,
झाँसे देकर गुलछर्रे नही उड़ाता है।
बेरहम नही होता वह, माले-मुफ्त देख,
काले धन पर वह लार नही टपकाता है।

पर जाने भी दो, एक नही सौ बातें है,
क्या-क्या बतलाऊँ, कैसे-कैसे समझाऊँ।
हाँ, बहक गया मै शायद बातो-बातों मे,
इसलिए लौट फिर उस किस्से पर ही आऊँ।

आजाद, बात का धनी, बचन का पक्का था,
वह अगर ठान ले, टस-से-मस फिर क्या होना।
आ पड़े मुसीबत भारी से भी भारी, पर—
कुछ नही शिकायत-शिकवे, या रोना-धोना।

दुर्भाग्य देखिए, भगत सिंह को जेल मिली,
भगवती चरण, बम फट जाने से नहीं रहे।
[illegible] कारखाने;
इस तरह अनेकों उस दल ने आघात [illegible]

आजाद, किन्तु विचलित रत्ती भर नही हुआ,
फिर लगा संगठन में वह पूरी ताकत से।
शासन से समझौता करने वह झुका नही,
वह बाज नही आया था कभी बगावत से।

था कौल यही, दम में दम रहते जूझूँगा,
गिन-गिन कर मै शासन के दाँत उखाड़ूँगा।
पिंजड़ा, वह मुझको पाने मुँह धोकर रक्खे,
आजाद रहा, रहकर आजाद दहाड़ूँगा।

दिल्ली

इतिहास की करवटें

मै दिल्ली हूँ, युग-युग से रही राजधानी,
भारत के गौरव की प्रख्यात धुरी हूँ मैं।
जो मेरे हैं, मैं उन्हें प्यार की गल-बाँही,
जो शत्रु [illegible] विष-बुझी छुरी हूँ मैं।

मेरी नजरों में इतिहासों के प्रलय-सृजन,
हर नजर, खुमारी से बोझिल है बाँकी है।
जब ऐसी-वैसी नजर किसी ने फेकी तो,
उसकी छाती मैने कीलों से टाँकी है।

मैंने झेली है कड़ी-कड़कती धूप कभी,
तो कभी दूधिया में चांदनी नहाई हूँ।
वैभव-विलास की चकाचौंध पर रीझी हूँ,
पर नहीं कभी उसमे भटकी-भरमाई हूँ।

मैं नही किसी की शोख नजर जैसी चंचल,
जो प्यार छिपा कर रखता, मैं उस दिल जैसी।
मैं नही किसी चौराहे जैसी भीड़-भाड़,
जो जमे कायदे से, मैं उस महफिल जैसी।

मेरे गौरव की वात पूछते मुझसे ही,
मदमाये फूलों और वहारों से पूछो।
मैंने जीवन में कैसे-कैसे दिन देखे,
सूरज से पूछो, चाँद-सितारों से पूछो।

हर कंकड़ ही कुछ लिए कहानी पड़ा हुआ,
कुछ यश-गाथा लेकर है हर मीनार खड़ी।
तिलमिला गई, पर मैंने होश नही खोया,
जव कभी मुसीवत की है मुझ पर मार पड़ी।

आ पड़ी मुसीवत ऐसी ही मुझ पर तव थी,
जव धोखे से लद गया फिरंगी शासन था।
[illegible] दिए कई,
वन गया घोर विद्रोही मेरा जीवन [illegible]

सन सत्तावन में मेरा जौहर जागा, तो
मेरी लपटों ने खूनी रास रचाया था।
अपने वेटों की आहुतियाँ मैंने दी थी,
पर भारत के गौरव को सदा वचाया था।

वह जफर, चार बेटों की बलि दी थी उसने,
आजादी के हित उनने शीष कटाए थे।
वे कटे हुए सर रखे बाप के हाथों में,
बर्बर अँग्रेजों ने ये रँग दिखाये थे।

साम्राज्यवाद की खूनी प्यास बढ़ी इतनी,
वहशी हडसन ने सचमुच उनका खून पिया।
मैंने अपनी आँखों से यह सब कुछ देखा,
मैं चीखी-चिल्लाई, पर किसने ध्यान दिया।

कहते, आजादी बिना बहाए खून मिली,
मैंने ऐसी-ऐसी कीमतें चुकाई है।
मेरे बेटे फाँसी के फन्दों पर झूले,
तब ये सुहावनी घड़ियाँ घर में आई है।

तुम पूछ रहे कुर्बानी मेरे बेटों की,
मेरी जबान पथराई; क्या कह पाऊँगी।
बैठो, यह चित्रावली दे रही मैं तुमको,
पन्ने पलटो, इसकी झाँकियाँ दिखाऊँगी।

●●●

चित्र-विचित्र

यह चित्र, तुम्हारी आँखों के सम्मुख है जो,
चल-समारोह यह जाता दिखलाई देता।
लगता, अँग्रेजी शासन का वैभव-विलास,
इस तरह अकड़ कर ही यह अँगड़ाई लेता।

यह शान-बान, यह ठाठ-बाट, गाजे-बाजे,
दे रहे साथ सजधज कर, राजे-रजवाड़े।
यह कदम-कदम आगे बढ़ती पैदल सेना,
ये घुड़सवार, हाथों में ही झण्डे गाड़े।

यह झूम-झूम चलता पर्वत जैसा हाथी,
यह सजी लाट साहब की आज सवारी है।
भारत-वासी चूं करें नहीं, वह धाक जमे,
इसलिए आज की यह सारी तैयारी है।

यह चित्र इसी क्रम का है, यह भगदड़ कैसी ?
कह रहा धुआँ, यह बम का हुआ धड़ाका है।
बच गए लाट साहब हैं बिलकुल बाल-बाल,
[illegible] ...का है।

लो पलट दिया यह पृष्ठ, दूसरा चित्र दिखा,
हो रही सभा यह गुप्त क्रान्तिकारी दल की।
ये सभी क्रान्ति के माने हुए सितारे हैं,
सब आग लिए अपने-अपने अन्तस्तल की।

इनकी बातें मेरे कानों में भी आईं,
ये दिखे मुझे सब के सब प्राणो के दानी।
आजाद उपस्थित हुआ नही, पर निर्विरोध,
वह चुना गया था इस सेना का सेनानी।

उसके प्रति यह निष्ठा, ऐसा विश्वास अडिग,
यह मुझे हर्ष की ओर गर्व की बात बनी।
उस सेनानी ने दल मे नई जान डाली,
फिर जोर-शोर से अँग्रेजों से जंग ठनी।

यह नया पृष्ठ, यह नया चित्र, देखें इसको,
आजाद-भगत, ये गुप्त मंत्रणा मै रत है,
इतने स्नेहिल, भाई-भाई से अधिक प्रेम,
जो असभाव्य, ये उसको करने उद्यत है।

इनकी बातो का यह रहस्य था मिला मुझे,
इनको असेम्बली मे करनी थी बमबारी।
शासन के बहरे कान खोलने [illegible]
आजाफ़ा [illegible]

बोलते-फूल

मैं हूँ प्रयाग, जीवन पुण्यों का पुष्पित तरु,
मैं कठिन तपस्या का अभिलषित प्राप्त वर हूँ।
मैं ज्ञान-कर्म-[illegible],
[illegible] संस्कृतियों की रुचि धरोहर हूँ।

माँ वाणी की पूजा का मैं पावन प्रसाद,
मैं अगरु, धूप-चन्दन का धूम्र सुगंधित हूँ।
मैं सत्यं-शिवं-सुन्दरं का साकार रूप,
मैं तीर्थराज के गौरव से अभिनन्दित हूँ।

साहित्य-कला-संस्कृति की पुण्य त्रिवेणी मैं,
मै जीवन के पावन प्रवाह का शुभ-सगम।
मैं वेद-पुराणों-इतिहासों का मुखरित स्वर,
मैने उनके उपदेश किए हैं हृदयंग[illegible]।

मैं हूँ यथार्थ-आदर्श और सिद्धान्त रूप,
मैं गङ्गा-यमुना-सरस्वती का हूँ प्रवाह।
सागर की गहराई तो नापी जा सकती,
मेरे अन्तर की गहराई युग-युग अथाह।

यह नही कि केवल गंगा, यमुना, सरस्वती,
मेरे आँगन मे हिल-मिल कर लहराती है।
जीवन की जाने कितनी विषम विविधताएँ,
सब मेरे घर आपस में मिलने आती हैं।

मेरी धारा का पुण्य-परस इतना पावन,
छू देते ही अस्थियाँ फूल बन जाती है।
प्रतिकूल हवाएँ आकर यहाँ गले मिलतीं—
बहनापे के भावों मे वे सन जाती हैं।

मै कभी रात्रि के सन्नाटे में सुनता हूँ,
तल में; वे सोए हुए फूल बतराते हैं—
[illegible] मे आ[illegible] क्या-क्या करते थे,
ये सब बातें, वे सुनते और [illegible] हैं।

कोई कहता, थी लाख-करोड़ों की सम्पत्ति,
जब आया मैं, तो सभी छोड़कर आया हूँ।
कोई कहता दुनिया बिलकुल निस्सार दिखी,
मैं उस जग से सम्बन्ध तोड़ कर आया हूँ।

किसनू कहता, मैं बाग-बगीचे खेत-खले,
अपने बेटे के नाम लिखा कर आया हूँ।
साहू कहता, जो कुछ था—सब धरती में था,
क्या छिपा कहाँ, मैं सभी दिखाकर आया हूँ।

यह धनीराम का कथन कि घर के आँगन मे,
रुपयों के बादल आकर रोज बरसते थे।
निश्वास छोड़ दीनू कहता, मेरे बच्चे—
भूखे रहकर टुकड़ो के लिए तरसते थे।

पुनिया कहती, मै आई तो आते-आते,
मैंने अपनी मुनिया का व्याह रचाया था।
कर दिए हाथ पीले, मै रिण से उरिण हुई,
बड़भागिन ने इन्दर जैसा वर पाया था।

पारो कहती, वे मेरे सिरहाने ही थे,
हौले से मेरा माथा तनिक हिलाया था।
पा सुखद परस, मैने आँखे खोली, उनने—
रोते-रोते गंगाजल मुझे पिलाया था।

टूटे से स्वर में मै इतना कह सकी; नाथ!
मै बड़भागिन हूँ, बनी सुहागिन जाती हूँ।
मेरे बच्चों को सुखी रखना प्रियतम :
सुखी रहो, मै भी यह दुआ मनाती हूँ।

सुखिया कहती, मै जीवन भर की दुखियारी,
सुख मिला कभी, वह एक नाम का ही सुख था।
हाँ एक और सुख था, वह सच्चमुच ही सुख था—
वह मेरे वीर-बहादुर बेटे का मुख था।

जब चलता वह, तो जैसे धरती हिलती थी,
मेरे बेटे की गज भर चौड़ी छाती थी।
सम्पदा सिमट मेरे घर आगन में आती,
मै उसे देख लेती, निहाल हो जाती थी।

ज्ञानी जी, अपनी ज्ञान भरी बाते करते,
दुनिया क्या है, छल है, प्रपंच है, माया है।
हम मुट्ठी बाँधे गए और खोले आए,
फूटी कौड़ी भी कोई साथ न लाया है।

जग मे धन-दौलत सुत-दारा है सभी व्यर्थ,
मन को न शान्ति क्षण भर इनसे मिल पाई है।
है धर्म और धरती की सेवा कर्म जिन्हें,
वह सेवा उनकी सबसे बड़ी कमाई है।

इस भाँति स्तब्ध-सन्नाटे में, मैं उन सबकी,
सुनता रहता हूँ सुख-दुख की अगणित बाते।
कुछ पता नही चलता, कितना क्या समय गया,
इस तरह बीतती जाती है अगणित रातें।

हाँ, इन बातों से परे और भी बातें हैं,
जिनको मै अपनी आँखों-देखी कह सकता।
मै भूल नही पाता कुछ [illegible] छवियाँ,
सुधियों मे उनको देखे बिना न रह सकता।

साहित्य-कला-विज्ञान आदि के वैसे तो,
उद्भट ज्ञाता, विद्वान धुरधर रहे कई।
कुछ राजनीति के कुशल खिलाड़ी भी खेले,
कल्पना-तरगो में भी डूबे-बहे कई।

पर जिसने अपनी छाप बहुत गहरी छोड़ी,
वह एक युवक, जैसे जलता अंगारा था।
छवि कभी-कभी वह मुझे देखने को मिलती,
मुझको उसका व्यक्तित्व बहुत ही प्यारा था।

आजाद नाम से वह सब में जाना जाता,
अँग्रेजों से तकरार वीर ने ठानी थी।
भारत-माता के बन्धन देख न पाता वह,
इसलिए भभक उट्ठी जह नई जवानी थी।

उसने अपने जैसे ही दीवानों का दल,
तैयार कर लिया था मरने मिट जाने को।
अपना जीवन रख दिया मौत के घर गिरवी,
भिड़ गया देश अपना आजाद कराने को।

वैसे उपाधियों के चश्मे से देखें तो,
व्यक्तित्व वहुत ही धुँधला उसका दिखता था।
व्यक्तित्व वीरता के चश्मे से पढें अगर,
हम देखेगे, वह रक्त-लेख ही लिखता था।

उल्टे-सीधे जो अक्षर उसने सीखे थे,
वे देश-भक्ति के गौरव-ग्रन्थ बने सारे।
जो दुर्बलता का हृदय वेध रख देते है,
उस भाषा के सब अक्षर ऐसे अनियारे।

उस अमर-वीर की आत्माहुति का स्वर्ण-लेख—
लिखने के पहले धैर्य जुटाना ही होगा।
अपनी साँसों पर लदा वोझ हलका करने,
आँसू का अपना कोश लुटाना ही होगा।

●●●

आत्म-बलिदान

उस दिन उपवन में एक वृक्ष की डाली पर,
शुक और सारिका बैठे गपशप करते थे।
चर्चित होती थी आसमान की ऊँचाई,
धरती की बातों पर वे कभी उतरते थे।

शुक बोला, मेरी जैसी चोंच कहीं देखी?
इतनी सुन्दर, कवि-जन देते हैं उपमाएँ।
सारिका छेड़ बैठी, कवियों की कौन बात—
चाहे तिनके को तीर सरीखा बतलाएँ।

केवल सुन्दर मुख होने से क्या होता है,
हों कर्म हमारे सुन्दर, तब सुन्दरता है।
यदि नहीं आत्मा में उतनी ही सुन्दरता,
तो तेज धूप-सा रूप सदैव अखरता है।

शुक बोला, रूपसि! जली-भुनी क्यों बैठी हो?
कवि की वाणी से सुरभित सुमन निकलते हैं।
सारिका तुनक बोली, कवियों की भली चली—
लग जाय रूप की आँच, तुरन्त पिघलते हैं।

अपमान जाति का हुआ देख, शुक खिसियाया,
बोला, छोड़ो ये बातें, करें ज्ञान-चर्चा।
थोड़ा मुसका कर चुटकी भरी सारिका ने,
क्यों लगी सूझने अब तुमको पूजा-अर्चा?

शुक और सारिका की यह चहक-चुहलबाजी,
ला नही सकी कोई आकर्षक रग नया।
दो युवक वृक्ष के नीचे आकर बैठ गए,
हो गया उपस्थित बिलकुल एक प्रसंग नया।

सारिका सहम सकेतों के स्वर में बोली,
उड़ चलें कही, हम गपशप वहाँ लड़ाएँगे।
सुक ने संकेत किया, बैठो क्यों डरती हो?
वे हमे पकड़ कर खा थोड़े ही जाएँगे।

सारिका तनिक झुँझलाई, धीरे से बोली—
मेरी मानो, यह डाल छोड़कर उड़ जाएँ।
कुछ नही ठिकाना इन मर्दों की चालों का
क्या पता, फाँस हमको पिजड़े मे लटकाएँ।

इस मीठी चुटकी का रस लेकर शुक बोला—
मर्दो पर क्यो तुम गुस्सा आज उतार रही?
मिल गया कौन-सा गुरु, जिसने शिक्षा दी है,
बढ़-बढ़ कर आज मनोविज्ञान बघार रही।

सारिका डूबते—से स्वर में शुक से बोली—
उड़ चलें कहीं हम, मेरा मन चिन्तातुर है।
कुछ अशुभ बात होती दिखलाई देती है,
कुछ आशंका से धड़क रहा मेरा उर है।

शुक बोला, नारी हो तुम, यों ही डरती हो,
शुभ और अशुभ की चिन्ता तुम्हे सताती है।
आ जाय छीक, तो शकुन-अपशकुन हो जाता,
तिल भर चिन्ता को नारी ताड़ बताती है।

कह उठी सारिका, प्राप्त मुझे वरदान एक,
क्या आगम है, यह भान मुझे हो जाता है।
यदि मंडराती हो मौत किसी के सर पर तो
उसका यथार्थ अनुमान मुझे हो जाता है

इन दो मे से, यह एक गठीला नौ-जवान
पड़ रही मौत की इसके सर पर छाया है
मै सोच रही, इसका भवितव्य टले कैसे,
इस अशुभ अनागत ने ही मुझे सताया है।

शुक बोल उठा, यह भेद आज मै समझा हूँ,
क्यो शंका-आशंका से नारी मन डरता।
अपनी चिन्ता से अधिक उसे अपनों की है,
जग-जाहिर है नारी की पर-दुख-कातरता।

भवितव्य उसे तुम साफ-साफ ही बतला दो,
कह दो उससे, उठ कर अन्यत्र चला जाए।
जो व्यक्ति सगा बनता, वह कभी दगा करता,
कह दो, वह अपनो द्वारा नही छला जाए।

कोई सचेत कर सके उसे, इसके पहले—
प्रारम्भ हुआ युवकों मे बातों का क्रम था।
यद्यपि चर्चा का विषय गूढ ही दिखता था,
बातों मे दिखता नही कही भी विभ्रम था।

"सुखदेव राज ! यह देश किधर जा रहा आज,
इसकी गतिविधि कुछ नहीं समझ मे आती है।
हम मरे-मिटे, खप जाँय देश-हित-चिन्तन में;
पर जनता तो जी भर आनन्द मनाती है।

उसका मत है, इसका ठेका कुछ लोगों पर,
इन कामों में क्यों अपनी जान फँसाएँ हम ?
जीवन पाया है, खाएँ-पिएँ—करें मस्ती,
यौवन पाया है, झूमें-नाचें-गाएँ हम।

ये युवक कि जो भारत के भाग्य-विधाता हैं,
ये चकाचोंध की धाराओं में बहते हैं।
लेकर यौवन की आग माँगते ये पानी,
ये जोर-जुल्म सब शीष झुकाए सहते हैं।"

सुखदेव राज बोला, "भैया आजाद ! सुनो,
हम इनकी गति को मोड़ें तो कैसे मोड़ें।
इनसे कुछ आशा करना, बड़ी दुराशा है,
इसलिए उचित है, हम इनका पीछा छोड़ें।"

"मैं इससे सहमत नहीं, राज ! जो तुम कहते,
हम नई आग इन युवकों मे भड़काएँगे।
ये उठें, प्रलय के ताण्डव का उद्घोष करें,
ये उठें, भाग्य इस धरती का चमकाएँगे।

यदि किसी देश की दौलत का अनुमान करें,
संकलपवान यौवन केवल उसका धन है।
है युवक, उठाते राष्ट्र-भार जो कधों पर,
युवकों से मिलता सदा राष्ट्र को जीवन है।

यदि युवक हुए पथ-भ्रष्ट, पतन की क्या सीमा,
ये डूब गए, तो देश रसातल जाता है।
ये उछले, इनके बल पर देश उछलता है,
धरती पर जैसे स्वर्ग उतर कर आता है,

इसलिए करेंगे हम सचेत इस पीढ़ी को,
हम युवकों को करना बलिदान सिखाएँगे।
ये सोए तो दुर्भाग्य हमारा जागेगा,
हम छिड़क खून के छींटे इन्हें जगाएँगे।

इस ओर खून की बात न हो पाई पूरी,
उस ओर खून के बादल सचमुच घिर आए।
सुखदेव राज कब खिसका, पता न चल पाया,
आजाद अकेले पर वे बादल अर्राए।

"तुम कौन ?" कड़क कर पूछा पुलिस अधीक्षक ने,
जब सुनी नाट बावर के मुख से यह बोली—
आजाद, भला यह सुनने का कब आदी था,
उस बोली पर वह दाग उठा सीधी गोली।

वह गोली उसकी, शत्रु भुजा को ले बैठी,
ऐसा अचूक उसका वह सधा निशाना था।
यह लगा नाट बावर को, कहाँ उलझ बैठे,
आगया काल ही सम्मुख, उसने जाना था।

दूसरी ओर विश्वेश्वर लिए मोर्चा था,
कुछ उभक, वीर पर उसने भी गोली छोड़ी।
आजाद, लगाया उसने नहले पर दहला,
अपनी गोली से उसकी भी हड्डी तोड़ी।

कर दिया कचूमर जबड़े का उस गोली ने,
विश्वेश्वर पीछे हट, झाड़ी में दुबक गया।
इस ओर डटा आजाद अकेला एक वीर,
उस ओर सैन्य-दल दुश्मन का आगया नया।

वह गरज-गरज कहता, गोरी सेना लाओ !
क्यों मुझसे कटवाने लाए हिन्दुस्तानी ?
देखो, नस-नस में गर्म खौलता खून भरा,
तुम समझ रहे, शायद इनमें होगा पानी।

इस भाँति गर्जना कर, वह छोड़ रहा गोली,
पिस्तौल, आग की बौछारें थी बरसाती।
जिस ओर छूटती गोली, सन्नाटा छाता,
जिस ओर हाथ उठता, काई-सी फट जाती।

दुर्भाग्य, एक ही तीर बच रहा तर्कश में,
उस काल-मुखी में बची एक अन्तिम गोली।
पिस्तौल लगा माथे से घोड़ा दबा दिया,
वह खेल गया अपने से ही खूनी होली।

बन पड़ी सैन्य-दल की, छोड़ी गोलियाँ कई,
देखी न पीठ, उनने छाती को भून दिया।
जब-जब बन्दूकों ने छाती को गोली दी,
तब-तब छाती ने क्रुद्ध उबलता खून दिया।

जो खटक रहे अब तक अभाव थे जीवन के,
हो गई पूर्ति उनकी, ऐसी घड़ियाँ आई।
मुख रहा तरसता गोली खाने बचपन मे,
गोलियाँ कई, यौवन की छाती ने खाई।

भारत-माता का लाल विदा लेकर उससे,
जा मिला शहीदों की मस्तानी टोली मे।
जिसकी बोली लोगों को नव-जीवन देती,
थी छिपी मौत उसकी हर क्रोधित गोली में।

पुँछ गया देश के माथे का वह रक्त-तिलक,
निर्धनता की कुटिया ने जिसे लगाया था।
हो गया शान्त घन-गर्जन जैसा स्वर, जिसने,
भारत के गौरव को झकझोर जगाया था।

वह लाल विदा हो गया बावली उस माँ का,
साँसों के झूले पर जो उसे झुलाती थी।
रखती जिसको पलको की शीतल छाया में,
थपकी दे-दे, छाती पर जिसे सुलाती थी।

रह गई विलखती-रोती वह दुखियारी माँ,
वह उसकी गोदी सूनी करके चला गया।
अपने हाथों से अपना जीवन-दीप बुझा,
जन-जाग्रति की बुझती मशाल वह जला गया।

सो गया मौत की गोदी मे वह प्रलय-वीर,
वह मौत नही, वह तो जीवन का अलंकरण।
चलता था जीवन रखे हथेली पर जैसे,
कर लिया मौत का भी वैसे ही स्वयंवरण।

जो माँगा था वरदान मौत का, भर पाया,
वह मौत नही, शाश्वत जीवन ही उसे मिला।
अपनी धरती को खून पिला कर ही माना,
था रक्त-सरोवर में गौरव का कमल खिला।

जिसको कोई कायरता लाँघ नहीं, पाए—
वह मौत, खून की ऐसी अमिट रेख-सी है।
हम जिसे मौत कहते, वह उसकी मौत नही,
सदियों की छाती पर वह शिला-लेख-सी है।

कह रही मौत वह, चीख-चीख कर यह हमसे—
हम जिएँ देश-हित, और देश के लिए मरें।
भारत-माता जब हमसे यह जीवन माँगे,
हँसते-हँसते यह जीवन 'अर्पित उसे करें।

प्रेरणा शहीदों से हम अगर नहीं लेंगे,
आजादी ढलती हुई साँझ हो जाएगी।
यदि वीरों की पूजा हम नही करेंगे तो,
यह सच मानो, वीरता बाँझ हो जाएगी।

पथिक

प्रतिबोध

मैं आजादी के परवानों का दीवाना,
मैं आजादी की डगर-डगर में घूमा हूँ।
आजाद चन्द्रशेखर की है जो याद लिए,
उन ग्राम-ग्राम में, नगर-नगर में घूमा हूँ।

कंकड़-पत्थर, गलियों-चौराहों को मैंने,
उस महाबली की याद संजोते देखा है।
जिनमें उसके जीवन की गाथा जुड़ी हुई,
उन वृक्षों को भी मैंने रोते देखा है।

वह कुटिया, जिसमें उसने प्रथम साँस ली थी,
कहती, मुझको बेटे की आहट आती है।
वे चट्टानें, जिन पर वह खेला-कूदा था,
उन चट्टानों की भी छाती फट जाती है।

मेरे पैरों से लिपट धूल ने पूछा था—
जो मुझमे खेला, वह मेरा फौलाद कहाँ?
हर मेंढ, डगर, पगडण्डी ने भी प्रश्न किया,
आजाद कहाँ? आजाद कहाँ? आजाद कहाँ?

आजाद कहाँ, मैं इसका क्या उत्तर देता,
मै उनको रोते और विलखते छोड़ चला।
मै घवराया, मेरा ही हृदय न फट जाए,
उस ग्राम-धरा से मैं अपना मुख मोड़ चला।

ओरछा, तीर्थ वन गया देश-भक्तों का जो,
जा पहुँचा मै भी वहाँ सान्त्वना पाने को।
क्या पता कि लेने के देने पड़ जायँगे,
मै धैर्य कहाँ से लाऊँ, हाल सुनाने को।

मेरे कन्धे से लग सातार वहुत रोई,
आजाद कहाँ भैया! क्या सन्देशा लाए?
सुध-बुध तो खोता नहीं भावरा याद किए,
वतलाओ, तुम तो अभी वहीं से ही आए।

"आजाद कहाँ? आजाद कहाँ?" रटते-रटते,
मैंने देखा सातार सूखती जाती थी।
पानी होकर, वह दिल पत्थर कैसे करती,
इसलिए पत्थरों से वह सर टकराती थी।

उस कुटिया में, जिसमें योगी आजाद रहा,
उस नर-नाहर की वीर-प्रसू माँ आई थी।
उसका क्रन्दन सुन पत्थर पिघल हुए पानी,
फट गए हृदय, उसने पछाड़ जब खाई थी।

दीवारों से सर फोड़-फोड़ उसने पूछा—
"क्यों खड़ी मौन ? बतलाओ मेरा लाल कहाँ ?
साम्राज्यवाद की पर्वत जैसी छाती भी—
धक-धक करने लगती थी, वह भूचाल कहाँ ?

ओ सरिता की वाचाल लहरियो ! बोलो तो,
मेरी आशाओं का मृग-छौना कहाँ गया ?
माँ होकर भी मै स्वयं खेलती थी जिससे,
मेरा चन्दा, वह बाल-खिलौना कहाँ गया ?

अर्जुन वृक्षो ! तुम रहे खड़े के खड़े यहाँ,
मेरी आँखों की ज्योति यहाँ से चली गई।
मेरी गुदड़ी में एक लाल ही शेष बचा,
कैसी अभागिनी, मै उससे भी छली गई।

मेरी छाती से लग कर जिसने दूध पिया,
उस छाती से बोलो अब किसे लगाऊँ मैं ?
किसका माथा चूमूँ राजा-बेटा कहकर ?
अब कृष्ण-कन्हैया कह कर किसे जगाऊँ मैं ?"

जिस तरह किया माँ ने विलाप, उसकी गाथा,
हर पत्ती ने रो-रो कर मुझे बताई थी।
मै खड़ा रह सका नहीं, वहाँ से खिसक गया,
मुझको प्रयाग में ही अपनी सुधि आई थी।

यह उपवन भी मैंने जाकर देखा, जिसमें,
आगई मौत को भी उसने ललकारा था।
जो वीर-प्रसूता माँ का दूध पिया उसने,
वह दूध, खून का बन बैठा फव्वारा था।

उस उपवन का हर वृक्ष तड़पता दिखा मुझे,
यह साख-साख ने फूट-फूट कर बतलाया।
आजाद नाम, जो बना वीरता का प्रतीक,
वह सुभट-सूरमा लड़कर यहीं काम आया।

आ-आकर मुझसे कई हवाएं कह जातीं,
उस बलिदानी को लोग भूलते जाते हैं।
जिन आँखों ने उसका लोहू बहते देखा,
उन आँखों में पद-लोभ फूलते जाते हैं।

कह देना उनसे एक बात यह समझा कर,
जो याद शहीदों की इस तरह भुलाते हैं—
दुश्मन उनकी आजादी को तकते रहते,
जब दाव लगा, तो वे उसको खा जाते हैं।

कह देना, आजादी जीवित रखनी है तो,
उन सब को पूजें, जिनने खून बहाया है।
यह बिना खून की बूँद बहाए नहीं मिली,
लोहू का भागीरथ यह गंगा लाया है।

यह नहीं, याद भर ही उनकी हो अलम हमें,
अवसर आए, प्राणों के पुष्प चढ़ाएँ हम।
जब आजादी की बलिवेदी माँगे हविष्य,
अपने हाथों से अपने शीश चढ़ाएँ हम।

कर्तव्य कह रहा चीख-चीख कर यह हमसे,
हर एक साँस को एक सबक यह याद रहे—
अपनी हस्ती क्या, रहें-रहें या नहीं रहें,
यह देश रहे आबाद, देश आजाद रहे।

उपसंहार

युग-ध्वनि

आजाद, महाभारत का भीषण शंखनाद,
गूँजता सदा युद्धोन्माद का घोष रहा।
उसकी साँसों ने देश-भक्ति के स्वर फूँके,
जुल्मों के प्रति जलता उसका आक्रोश रहा।

आजाद, भँवर बन बैठा जीवन-धारा का,
वह कायरता के कलुष डुबाया करता था।
वह यौवन का वैताल, सजग विक्रम करता,
वह अनाचार में आग लगाया करता था।

आजाद, भयंकर चक्रवात संकल्पों का,
वह अन्यायों की धूल उड़ाया करता था।
अत्याचारी व्यक्तित्वों को करने निढाल,
उसका यौवन रस्सियाँ तुड़ाया करता था।

आजाद, क्षुब्ध सागर का उठता हुआ ज्वार,
थे शासन के जलपोत डगमगाया करते।
उसकी प्रचंडता का कोई प्रतिरोध न था,
कानून, आग ही उसकी भड़काया करते।

आजाद, हिमालय अडिग उच्च आदर्शों का,
वीरता सदा उसकी अविजित ऊँचाई थी।
'भारत-माता के लिए काम आऊँगा मैं,
यह गंगा उसने दोनों हाथ उठाई थी।

आजाद, वीरता के तर्कश का क्रुद्ध तीर,
निर्दिष्ट लक्ष्य का सदा अचूक निशाना था।
आजादी का अभिषेक रक्त से होता है,
यह मर्म, धर्म जैसा उसने पहचाना था।

आजाद, कड़कता हुआ क्रुद्ध वह घन था, जो,
अरि पर खूनी बिजलियाँ गिराया करता था।
वह मुर्दों में सचार खून का करता था,
उनमे जीवन की ज्योति जगाया करता था।

आजाद, भावनाओं का वह भूकंप विकट,
उस धक्के से साम्राज्यवाद थरथरा उठा।
आजाद वज्र का था ऐसा आघात प्रबल,
अत्याचारों का पर्वत भी चरमरा उठा।

आजाद, फूटता हुआ भयंकर ज्वाला-गिरि,
हम जिसे खून कहते, वह क्रोधित लावा था।
वह दानव-सा दुर्दान्त दस्यु भी दहल गया,
ऐसा भीषण उस महावीर का धावा था।

आजाद, हिन्द के बलिदानों का स्वर्ण-लेख,
जो गर्म खून से गौरव-लिपि में लिखा गया।
भारत के बेटे आजादी के पर्वाने,
यह सत्य सूर्य जैसा चमका कर दिखा गया।

आजाद, देश की आजादी का वह रहस्य—
जिसन जाना, वह बना वतन का दीवाना।
जो जान न पाया, उस कृतघ्न का क्या कहना,
है अर्थहीन उसका जग में आना-जाना।

आजाद प्रेरणा-स्रोत अमर हर पीढ़ी को,
धरती की आजादी प्राणो से प्यारी हो।
यौवन अंगारों से अपना शृंगार करे,
हर फूल वज्र, हर कली कराल कटारी हो।

परिशिष्ट

हमारे आगामी आकर्षण

---

१. शहीदे आजम

भगत सिंह और दत्त की कलम से

संपादक

सरदार रनबीर सिंह, भगत सिंह के अनुज

विशेषताए

- सरदार भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त के मौलिक लेख
- सरदार भगत सिंह के हाथ से लिखे गए पत्रो के कैमरा चित्र
- सरदार भगत सिंह के हिन्दी, अँग्रेजी, उर्दू तथा पंजाबी मे हस्ताक्षर
- भगत सिंह तथा दत्त के अनेक अप्रकाशित चित्र
- भगत सिंह तथा दत्त के विचारो का समीक्षात्मक विवेचन
- भगत सिंह तथा दत्त के जीवन की बिलकुल अछूती घटनाएँ
- भगत सिंह तथा दत्त के सम्बन्ध मे साथी क्रान्तिकारियो के संस्मरण

२. **खून से लिखी कहानियाँ**

लेखक

श्रीकृष्ण 'सरल'

क्रान्तिकारियो के आत्म-बलिदान की रोमाचक सत्य घटनाए

इतिहास ने जिन्हे दफनाया है

देशवासियो ने जिन्हे भुलाया है

जन-कल्याण प्रकाशन

गोपाल भवन, माधव नगर

उज्जैन, मध्य प्रदेश

कवि की अन्य कीर्तिमान कृति : **सरदार भगतसिंह**

- उत्तर-प्रदेश शासन द्वारा १००१ रु० का पुरस्कार प्राप्त ।
- ग्रन्थ का समर्पण स्वीकार करने शहीद की माता पंजाब से चल कर कवि के घर उज्जैन पहुँचीं ।
- शहीद की माता को समर्पित एक प्रति ३३०१ रु० में बिकी ।